विषय सूची

पृथम-खण्ड

(निबन्ध विभाग)

दूसरा खण्ड

(व्यवहारिक पत्र-लेखन)

आदर्श-निबन्ध-माला

प्रथम-खण्ड

निबन्ध-भाग

प्रकृति-सौन्दर्य

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना.—प्रकृति की मनोरम छटा। (२) प्रातःकालीन शोभा और आनन्द। (३) वृक्ष, लता, पशु और पक्षी गान। (४) हिमाच्छादित पर्वत। (५) जलाशय और पुष्करणी। (६) सान्ध्य शोभा। (७) नभ मंडल। (८) उपसंहार-सारांश।

विश्व में प्रकृति का अखण्ड राज्य है, बिजली बादल, गिरि-गुहा, वृक्ष-लता और पर्वत शिखर सब उसके सगी साथी हैं। सूर्यदेव समस्त दिन गर्मी प्रदान करते हैं, रात्रिकाल में चन्द्रदेव अपनी सुहावनी किरणों से सब का मन मोहते हैं। तारागण सुदूर नभ स्थली से दूरबीन लगाये प्रकृति का मनोरम रूप निहारते हैं। बादलों के आंचल से झांककर चपल चपला जगत का चित्त आकर्षित करती है। उन्माद भरी सरितायें प्रेमावेग से अठखेलियां करती हुई अपने प्यारे समुद्र की ओर भागी जा रही हैं। उन्हें अपने तन बदन की सुध तक नहीं। सरोवर और पुष्करणियां कमलों में भर गई हैं। कल कूजन करते मराल उनका मकरन्द

कर तान अलापीं। हंसों ने कमल की कोमल कलियों को हिला हिला कर अपना राग अलापा। शुक और सारिक भी कोयल के स्वर में स्वर मिला कर अपने मधुर स्वर से आनद वर्षा रहे हैं। अमराइयों में इन्द्र लोक का भ्रम हो रहा है। अरे ! सारी मजु मजरी मडित अमराइयां मोरों से लदी पड़ी हैं। प्रकृति का मनोरम रूप तो तनिक अवलोकन कीजिये कैसा अनुपम दृश्य है ? वृक्ष और लता कुञ्ज तो मन को हरण किये ही लेते हैं वृक्षों को डालों पर कीश मडली मचक मचक कर मचक रही है। कहीं मयूर वृन्द नाच नाच कर नर्तकियों को भी लजा रहे हैं, कहीं पपीहा 'पीउ-पीउ' की रट लगा रहे है। कही छोटी-छोटी चिड़िया चहचहा कर वृक्षों को शब्दायमान कर रहीं हैं। कहीं हरिण हरिणियों के यूथ के यूथ किलोल कर रहे हैं। कही जल मे पक्षी स्नान कर रहे हैं लताच्छादित वनस्थली की मनोज्ञ आभा तो चित्त को आकर्षित किये ही लेती है। ऐसे रमणीय ऐसे सुन्दर और ऐसे मनोहारी दृश्य को देख कर किस का मन नही मोह सकता।

आइये, तनिक पुष्प- पूरित पुष्करणियों का अवलोकन तो कर लजिये कैसे लाल पीले नीले और सफेद कमल खिल रहे हैं जिन के ऊपर मतवाले भौंरे मडरा रहे है। लहराते हुये नीले जल पर हरी सेवार छाई हुई है। इठलाती हुई नदियों की प्रखर धारा सरोवरो में विचित्र दृश्य उपस्थित कर रही हैं। कमलों से भरे सरोवरों में हस पक्ति बद्ध खड़े किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। झर झर शब्द करते हुये झरने अलग शान्ति भग कर रहे हैं। उनकी छहरती हुई बून्दें मोतियों की सुन्दरता को मात कररही हैं। वनस्थली और वाटिकाओं में हरे,पीले,नीले,लाल,गुलाबी

आदि रंगों के फूल खिल रहे हैं उन पर रंग बिरंगी तितलियाँ मँडरा रही हैं। मधु मक्खियाँ भिन्न-भिन्न फूलों से रस ले रही हैं। चिड़ियाँ इन फूलों से खुश हो किलकार रही हैं। भौंरे उन पर गुंजार कर रहे हैं।

तनिक सामने प्राचीन प्राची दिशा की मनोहर छटा को तो अवलोकन कीजिये, ओहो! समस्त नभ मंडल एक दम लाल हो गया। चन्द्र देव उदय हो रहे हैं। चन्द्र देव ने मलीन बादलों के आँचल से श्यामल वस्त्र-धारिणी प्रकृति को एक बार पुनः मुस्कराते हुये कटाक्ष भरी दृष्टि से अवलोकन किया। कैसा हृदयग्राही दृश्य है? कैसी अलौकिक छटा है? कैसा मनोरम समा है? देखे ही बनता है चन्द्रदेव ने अपनी शीतल और शुभ्र ज्योत्स्ना वसुन्धरा पर चारों ओर फैला दी। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो समस्त प्रकृति पर सफेद चादर बिछा दी है।

सूर्य देव प्रयास भी पीछे गगन की लम्बी यात्रा से थक से गये हैं इसी कारण मन्दगति से अस्ताचल की ओर अपने रथ को हाँक कर जा रहे हैं वे अपने प्यारे विश्राम-स्थल को निकट जाकर शान से एक दम लाल हो गये उनका वेश धुन्धों से आच्छादित हो गया। पश्चिमी दिशा ने भी अब ऊषा की तरह सुरम्य शृंगार धारण कर लिया। अहा कैसा नयनाभिराम आनन्द है जो शब्दों में नहीं कहा जा सकता!

गगन और पर्वत समूह को तो अवलोकन कीजिये कैसा दृश्य हमारे हृदय उपस्थित कर रहे हैं? शीतल और सुगन्धित पवन कैसी मन्द मन्द गति से बह रहा है? शरीर में कैसा नव जीवन विकसित हो रहा है? स्फूर्ति और मस्तिष्क की शान्ति कैसी सुन्दर समय उपस्थित कर रही है। अरे

यह मारुत वृक्षों से कैसी अठखेलियां कर रहा है उसने गदराई फूलों की पत्तियों को धरती पर बखेर दिया। हरे वृक्षों के बीच श्वेत पत्थर की शिला पर से बहते हुये झरने कैसे सुन्दर लग रहे हैं। तनिक हिमाच्छादित हिम शृङ्गों के शिखरों की आभा तो अवलोकिये रवि रश्मियों के पड़ने से कैसी सुनहरी आभा धारण किये हुये हैं ?

गगन मंडल में गर्जते हुये बादल, चमचमाती हुई विद्युत-लता दर्शकों के हृदय पर कैसा मनमोहक प्रभाव डाल रहे हैं। बादलों का बाल्य चापल्य तो देखिये यह कैसा मिनट मिनट में अपना रूप बदल रहे हैं ? अभी अभी कैसी आकृति में थे अब कैसा विशाल रूप धारण कर लिया है ? अभी-अभी बादल अपनी नयन रंजन आभा से मनोरंजन कर रहे थे, अब कैसा प्रलय काण्ड मचा डाला। भगवान की इस अपार लीला को वर्णन करने की किस म श क्त है।

साराश यह कि प्रकृति अनेक रूप बना कर अपने दर्शकों को प्रसन्न करती है। कभी किसी प्रकार का रूप बनाती है कभी किसी प्रकार का बाना धारण करती है। कभी अपनी अनूठी छवि से दर्शकों को रिझाती है कभी आनंद सागर में गोते लगवाती है। ऐ भगवती प्रकृते ? मैं तो नत मस्तक होकर तुझे नमस्कार ही करता हूँ।

उद्यान के आनन्द

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—वाटिकाओं की आवश्यकता (२) उद्यान के आनन्द—(क) प्रकृति का सौन्दर्य अवलोकन (ख) मनोरंजन और आकर्षण (ग)

उद्यान में स्वास्थ्य-सुख (५) नेत्र ज्ञान लाभ और मौन का आनन्द (६) उपसंहार—उद्यान और हमारा कर्तव्य

मनोरंजन की वस्तुओं में से वाटिका भ्रमण भी एक प्रकार का मनोरंजन है। जितने मनोरंजन के साधन हैं उनमें अधिकांश में ऐसे साधन हैं जो केवल आनंद ही आनंद प्रदान करते हैं किन्तु उद्यान के आनंद के साथ कई एक लाभ हैं स्वास्थ्य सुधार के लिये तो उद्याना से बढ़ कर कोई दूसरा साधन नहीं है। बालक हो वृद्ध हो युवा हो अथवा प्रौढ़ पशु पक्षी हो, धनी हो अथवा निर्धन उद्यान की शुद्ध वायु से सब को स्वास्थ्य लाभ होता है। वाटिकामें भ्रमण करने से मस्तिष्क की थकावट दूर होती है और उत्तम स्फूर्ति आती है पुष्पों से सुगन्ध का आनंद मिलता है और भांति भांति के मधुर फल भी खाने को मिलते हैं।

उद्यान में प्रकृति सौन्दर्य कितना सुन्दर व चमत्कारी और मनोरम है। चन्द्रमा ने चन्द्रिका के मिस रात्रि-काल में पौधों पर मोती बखेर दिये हैं। कहां कहां कैसे सुन्दर चमक रहे हैं। तड़ाग में कमल खिल रहे हैं जिनके ऊपर भौंरें मंडरा रहे हैं। आस पास हंस बक कूजन कर रहे हैं। हंस भी कभी कभी मस्तानी हो चोंचों से मद लालिमा कर रहे हैं। पवन फूलों से सौरभ की मंजरिया भर भर कर इधर उधर वितरित करता फिरता है। हर्षित हो रहे हैं। नीचे जल में मछलियाँ क्रीड़ा कर रही हैं। फूलों पर नाना रंग की तितलियां मंडरा रही हैं। मधु मक्खियाँ मधु एकत्र कर रही हैं। वृक्ष और लतायें फूलों से लद रही हैं। जिधर देखो आनन्द ही आनन्द दृष्टिगोचर होता है।

गुलाब फूलो से लदा हुआ है मौलश्री से फूलों की वर्षा हो रही है केसर की क्यारियो की छवि ही निराली है गेंदे की पंक्तियां निराली धज से दर्शकों का स्वागत कर रही हैं, प्रेमोन्मादी वेले पेड़ों से लिपट रही हैं, फुव्वारों की पंक्तिया ने झ.नी-झ.नी बूंदो से वर्षा कर समा बना दिया है, वृक्षों की डाल पर बैठे पक्षी मधुर गाना गा रहे हैं। वाटिका के आगन में कैसा सुन्दर मखमली घास का बिछौना बिछा है ? उद्यान के मार्ग कैसे मनोहरी हैं? अरे संगमरमर निर्मित चबूतरे की छवि-शाली छटा कैसी आकर्षक है ? चबूतरे के चर्तुर्दिक मालियो ने कैसी कारीगरी प्रदर्शित की है ? फूलों की मन भावनी क्यारियों को कैसे क्रम से सजाया है ? उसकी शोभा तो देखने ही से समझा जा सकता है।

चैत की चादनी में उद्यान की शोभा निरखिये। घने वृक्षों की छवों में से छन छन कर चन्द्रिका छिटक रही है वृक्ष शवादि पर फैली शुभ्र ज्योत्स्ना मन को अपनी ओर खीचे लेती है सरोवर में चन्द्र की अनूठी आभा विचत्र कौतूहल उत्पन्न कर रही है वर्षा ने उद्यान आभा को दूना बढ़ा दिया है वृक्ष गहरी हरियाली पात्तयों से सज गये हैं । उद्यान में मोरो का नाच, पक्षियों का कलगान, बन्दरों की अठखेलिया हृदय को कैसी आनन्द देती हैं, उसका वर्णन नहीं हो सकता है

उद्यान में कहीं कोयल कूक रही है, कहीं पपीहा 'पीउ पीउ' की रट लगाये हुए है। कही मयूर की मधुर ध्वनि कानो में अमृत उडेल रही है। कहीं चिड़ियों की चहचहाहट कानों प्यारी लगती है कहीं 'टप टप' करके आम गिर रहे हैं, कहीं भद भद करके जामुन गिर रही हैं' कहीं बन्दर की

कहीं पिचकारी चला रही है, कहीं झिल्लिकाएँ झनकार रही हैं कहीं दादुर हर्ष के मारे गला फाड़े डालते हैं कहीं आम्र-मस्तक फुनगी पर बैठ कहा रहे हैं कहीं ग्राम-बालिकायें हिंडोले के मधुर गीत गा रही हैं, कहीं मधुपके और फूल फूल पर अपनी मधुर मुरली बजा रहे हैं।

आम्र मंजरी-मण्डित अमराइयों में सुगन्ध महक रही है। चम्पा के फूलों ने सारे उद्यान को महका दिया है। नीम और महुए की लपटें अलग आनन्द दे रही हैं। मौलसिरी और गुलाब की महक दर्शकों की नाक का सुख कर रही है। जरा रसीले रसालों का तो रसास्वाद कीजिये कैसे मीठे हैं जामुन का तो स्वाद ही निराला है। खाते खाते नहीं चूकते। तनिक इलाहाबादी अमरूद का भी आस्वाद कीजिये। इन्होंने तो काश्मीर के सेवों को भी मात कर रक्खा है। केलों का तो आनन्द ही अनूठा है। आओ अब केले के बाग में चलें।

उद्यान का वायु कैसा सुन्दर, और आरोग्य वर्धक है! मस्तिष्क कैसा आनन्द और शान्ति दे रहा है! शरीर में कैसा कैसा अनुपम आनन्द अनुभव हो रहा है। एक एक श्वास कैसा मद भर स्फूर्ति प्रदान कर रहा है? आ! कैसा अलौकिक आनन्द है? कैसा स्वास्थ्य तथा बुद्धि वर्धक वायु है! मुझे तो यहाँ स्वर्ग का भ्रम होता है।

कहीं स्वर्ग सुरलोक, कहीं शक्र वज्र पुरन्दर।
कहीं अमरन को ओक, कहीं प्रभु वज्र पुरन्दर॥

कर्तव्य-पालन

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—मनुष्य की उन्नति, अवनति, यश और कीर्ति सब कर्तव्य-पालन पर ही निर्भर हैं।

(२) कर्तव्य पालन करना मनुष्य का धर्म है।

(३) कर्तव्य-पालन से लाभ—

मानसिक, शारीरिक और आर्थिक उन्नति होती है, सम्मान प्राप्त होता है, कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति समाज के आदर्श और श्रद्धा के पात्र होते हैं, कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति समाज का बड़ा हित करते हैं, अपने कर्तव्य का पालन करना ही ईश्वर की सच्ची सेवा है।

(४) कर्तव्य-परायण महापुरुषों की गौरव गाथाय ही संसार का इतिहास है।

(५) उपसंहार—प्रत्येक व्यक्ति को कर्तव्य निष्ठ होना चाहिये।

जगत का प्रत्येक परिमाणु कर्तव्य शील है। यदि प्रकृति के समस्त पदार्थ अपना अपना कार्य करना बन्द करदे तो सृष्टि का सारा रूप नष्ट हो जाय। कर्तव्य-पालन के सहारे ही सृष्टि का काम चल रहा है। व्यक्ति को अपनी जीवन रक्षा के लिये कर्तव्य पालन की आवश्यकता पड़ती है। संसार में मनुष्य का आदर, सम्मान, प्रतिष्ठा और उन्नति सब कर्तव्य-पालन के ऊपर निर्भर है। यदि मनुष्य अपने कर्तव्य कर्म से च्युत हो जाय तो बस अधोगति को प्राप्त हो जाय। राजा का कर्तव्य है

कि वह अपनी प्रजा का पालन करे। यदि वह अपने कर्तव्य-पालन से वंचित रहता है तो उसका आदर कौन करेगा? एक कर्मवीर सैनिक का कर्तव्य है कि वह रणक्षेत्र में शत्रु का सामना करे, यदि वह कायर बन शत्रु को पीठ दिखा कर रणक्षेत्र से भाग छूटे तो संसार में उसे कौन बहादुर कहेगा और उसके इस निन्द्य कर्म की कौन प्रशंसा करेगा?

प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वह अपने कर्तव्य को समझे और उसके अनुकूल ही अपना आचरण बनावे। भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भिन्न भिन्न ही मनुष्य के कर्तव्य होते हैं। मनुष्य को चाहिये कि अपनी स्थिति के अनुसार अपने कर्तव्य का पालन करे। कभी व्यक्ति को अपने समाज और राष्ट्र के प्रति कर्तव्य पालन के अवसर आते हैं। कभी पिता स्त्री पुत्र आदि के प्रति कर्तव्य पालन करना पड़ता है। किन्तु सच्चा कर्मवीर वही है जो विघ्न बाधाओं से किंचित विचलित नहीं होता और सदैव अपने कर्तव्य-पथ पर आरूढ़ रहता है। वह कर्तव्य पालन में अपने प्राणों की चिन्ता नहीं करता वरंच अपने कर्तव्य-कर्म को पूर्ण करने के लिये प्राणोत्सर्ग करने को सदैव प्रस्तुत रहता है। ऐसा महापुरुष अपने देश और समाज का मुख उज्ज्वल करता है।

कर्तव्य पालन में ऐसा निजत्व है जिसका वर्णन करना कठिन है। कर्तव्य-पालन की लगन ऐसी होती है जिसमें अपने और पराये का ज्ञान नहीं रहता। कर्तव्य-पालन का मार्ग निराला है। कर्तव्य-पालन की प्रेरणा परमात्मा की ओर से होती है। उसकी पूर्ति से हृदय में शान्ति और सन्तोष होता है। कर्तव्य-पालन से मनुष्य की सम्पूर्ण उन्नति होती है। कर्तव्य-पथ के पथिकों को राह में सदा बढ़ते देखा गया है। कर्म-वीर

व्यक्ति सब लोगों के हृदय पर अपना अधिकार जमा लेता है। कर्तव्य-निष्ठ व्यक्ति का सर्वत्र आदर होता है। वह समाज की आदर और श्रद्धा की वस्तु बन जाता है। समाज उसके आचरण का अनुकरण करता है। कर्तव्यनिष्ठ प्राणी अपना और अपने परिवार का तो मुख उज्ज्वल करता ही है किन्तु समाज और राष्ट्र भी उससे शोभा पाते हैं और उसके तदनुकूल आचरण कर उन्नति के पथ के अनुगामी बनते हैं। कर्मवीर लोक में तो यश और कीर्ति उपलब्ध करता ही है साथ ही परलोक में शान्ति प्राप्त करता है। संसार उसकी पूजा करता है। इतिहास ऐसे महापुरुषों के जीवन को लिखकर अपने को धन्य समझता है। कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति का जीवन यद्यपि प्रकट में बड़ा सङ्कटाकीर्ण मालूम होता है किन्तु वास्तव में उसके हृदय में आनन्द की तरगें लहरें मारती रहती हैं। कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति सफलता प्राप्त कर लेने पर हर्षित नहीं होता वैसे ही विफल होने पर वह व्यथित नहीं देखा जाता। कर्मवीर कभी थकना और विश्राम लेना तो जानता ही नहीं। वह सदैव उन्नति की सीढ़ी पर चढ़ता हुआ ही दृष्टिगोचर होता है। वह विघ्न बाधाओं की किंचित चिन्ता नहीं करता। कर्तव्य-पालन करने ही में वह सच्ची सेवा देखता है उसी में उसको भगवान की सच्ची विभूति दिखलाई पड़ती है।

इटली के विसुवियस नामी ज्वालामुखी पहाड़ के फटने पर नगर के सब स्त्री पुरुष तो भाग गये, परन्तु एक द्वार-रक्षक सन्तरी ने अपना स्थान नहीं छोड़ा। वह पहरे पर बिना दूसरे सन्तरी के आये कैसे हटता? वह अपने कर्तव्य पालन पर वहीं डटा रहा और वहीं उसने अपने प्राण विसर्जित किये। फिर भला संसार में ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो ऐसे

कर्तव्यशील व्यक्ति की प्रशंसा न करे ? ऐसे ही महापुरुष देश और जाति का पुनः उत्थान करते हैं। ऐसे ही महापुरुषों की गौरवगाथाओं से विश्व का इतिहास जगमगाता है। भारत में ऐसे अनेक कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने दूसरों की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बलि दी है। दीन ब्राह्मण की रक्षा के लिये कुन्ती ने अपने प्यारे पुत्र भीम को बक राक्षस की भेंट करने में तनिक भी आनाकानी नहीं की। शरणागत की रक्षा करने में इससे अधिक कर्तव्यपालन का उत्कृष्ट उदाहरण नहीं मिलता। पन्ना धाय ने राजकुमार उदयसिंह की प्राण-रक्षा के लिये उसके स्थान पर अपने पुत्र को तलवार के घाट पर उतरवा कर अपने कर्तव्य कर्म का परिचय दिया। धन्य तुम्हारी स्वामि-भक्ति को धन्य है! राम जैसे शरणागत वत्सल ने जिन्होंने विभीषण की प्राण घातिनी शक्ति को स्वयं अपने ऊपर ले लिया और विभीषण की प्राण रक्षा की। ये कर्तव्य-पालन के ज्वलन्त उदाहरण हैं। महात्मा गांधी कर्तव्य-पालन की जीती जागती प्रति मूर्ति हैं। जिस काम को करना वह अपना कर्तव्य समझते हैं उसमें वह प्राणपण से संलग्न हो जाते हैं कई बार उन्होंने कर्तव्य पालन के लिये अपने प्राणों की बाजी लगाई है।

हमारे देश में कर्तव्यनिष्ठों के ऐसे ज्वलन्त उदाहरणों के होते हुए भी कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तियों का अभाव है। पराधीनता के दीर्घकाल ने हमारे आत्माभिमान को बिल्कुल खो दिया है। जिस उच्च कक्षा के हमारी अन्तरात्मा कर्तव्य-कर्म पर आरूढ़ नहीं होती। हमारे देश के लिये यह बड़े दुख की बात है आज हमारे सामने स्वार्थ-भाव प्रधान है जिसके कारण हम उच्च आदर्शों को ठुकरा देते हैं। यही कारण है कि

हमारा देश पराधीनता के गढे में पड़ा है। नवयुवकों को अपनी घोर निद्रा त्याग कर्तव्य धर्म के पथ पर अग्रसर होना चाहिए। तब ही हम अपने पूर्वजों का मान रख सकेंगे और अपने देश को पराधीनता के पाश से छुड़ा सकेंगे। तब ही हम सच्चे कर्तव्य निष्ठ कहलाने के अधिकारी होंगे। भगवान भारतीय नवयुवकों को सद्बुद्धि प्रदान करें।

मधुर-भाषण

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—मधुर भाषण की आवश्यकता

(२) मधुर भाषण से लाभ—

सर्वप्रियता, शान्ति, आदर और यश की प्राप्ति होती है, ईर्षा और घृणा दूर होती है, सफलता प्राप्त होती है, आत्मिक उत्थान होता है

(३) कटु भाषण से हानियां—

जी दुखता है, घृणा उत्पन्न होती है और अपयश प्राप्त होता है, शत्रुओं की संख्या बढ़ती है।

(४) मधुर-भाषण का महत्व

(५) उपसंहार - मधुर भाषण और हमारा कर्तव्य

मधुर भाषण एक प्रकार का आकर्षण है जो सुनने वाले के हृदय पर वशीकरण मन्त्र की भांति अधिकार जमाता है। जीवन को सर्वप्रिय,

सुखी और सफल बनाने के लिये मधुर भाषण की बड़ी आवश्यकता है। जो मनुष्य मधुरभाषी होते हैं वह समाज में सुख, शान्ति और सहानुभूति उत्पन्न करते हैं। समाज उनके प्रति आदर और श्रद्धा के भाव रखती है। समाज में उन्हीं मनुष्यों को उच्च स्थान प्राप्त होता है जो मधुर भाषी रहते हैं।

> कोयल काको देत है कागा कासों लेत।
> तुलसी मीठे बचन सों जग अपनो कर लेत॥

मधुर भाषण मानवी-जीवन में ऐसी शक्ति है जो समाज पर वशीकरण का प्रभाव करती है। मृदु भाषी अपने मधुर शब्दों से समाज को तो शान्ति देता ही है साथ ही अपनी अन्तरात्मा को भी आनन्द देता है।

प्रायः समाज ऐसे पुरुषों को घृणा की दृष्टि से देखता है जिनके शब्द हृदय में काँटे की भांति चुभते हैं अथवा जिनकी वाणी समाज को रुचिकर नहीं होती किन्तु मधुर-भाषी व्यक्ति समाज के बहुत शीघ्र प्रिय बन जाते हैं। सर्वत्र उनका आदर होता है। संसार उनकी कीर्ति-कौमुदी को इधर उधर फैलाता है। उनके प्रति समाज की गहरी सहानुभूति हो जाती है। वे समाज के हृदय-सम्राट बन बैठते हैं। वे अपनी जीवन नौका को सफलतापूर्वक खेते हुए मानसिक और आध्यात्मिक उत्थान प्राप्त करते हैं। तभी तो तुलसीदास मधुर भाषण के विषय में इतना लिख गये हैं —

> तुलसी मीठे बचन ते सुख उपजत चहुँ ओर।
> वशीकरण एक मंत्र है तजिये बचन कठोर॥

समाज में दुःख, कलह और अशान्ति का बीजारोपण केवल कटु-शब्द ही करते हैं। मानवी-जीवन में असफलतायें जब ही प्रवेश करती हैं, जब व्यक्ति समाज के साथ कठोरतर व्यवहार करते हैं अथवा अपने को बड़ा समझते हैं और समाज को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। अपने को कुछ समझना और अपने को समाज से गुरुतर समझना ऐसे दुर्गुण हैं जो मनुष्य की उन्नति के पथ में बाधा उपस्थित करते हैं। कटुभाषी मनुष्य सदैव दुखी, अशान्त और मलीन देखे जाते हैं, उन्हें जीवन में कभी सुख शान्ति नहीं मिलती, न समाज की सहानुभूति उन्हें प्राप्त होती है। ऐसे पुरुषों से समाज ही नहीं दुखी होता, वरन्‌ परिवार भी दुखी हो जाता है। ऐसे व्यक्ति न स्वयं सुखी रहते हैं न समाज को सुखानुभव कराते हैं। सर्वत्र उनका अनादर होता है। कहीं भी उनके लिये कीर्ति उपलब्ध नहीं होती। इसी कारण नीतिकारों ने परुष वचनों को त्याज्य बतलाया है।

मधुर भाषण सुख, शान्ति की कसौटी है, सफलताओं का अवलम्ब है, सुखद जीवन व्यतीत करने का निर्विघ्न मार्ग है, सहानुभूतियों का श्रोत है, सङ्कट और आपदाओं को काटने को कुल्हाड़ा है। इसी कारण नीति-कारों ने मधुर-भाषण को सर्वग्राह्य बतलाया है।

संसार में जितने भी महापुरुष हुये हैं, उन सब ने इस मधुर भाषण के गुण को अपनाया है। भगवान श्री कृष्णचन्द्रजी तो मधुर भाषण के साक्षात अवतार ही थे। श्री कृष्णजी ने कौरवों और शिशुपाल आदि के कठोर शब्दों को मुसकान के साथ सहा और अपनी शान्ति को भङ्ग नहीं किया। मधुर-भाषी महापुरुषों ने कभी किसी कठोर बात का उत्तर कठोर शब्दों में देना उचित नहीं समझा। अत्याचारी पुरुषों के सताये जाने पर

भी कभी ऐसे महापुरुषों ने परुष शब्दों का प्रयोग नहीं किया। राम परशुराम के कठोर शब्दों से विचलित नहीं हुए, उन्होंने परशुराम के कठिन शब्दों का उत्तर नम्रता ही से दिया। निश्चय यह है कि प्रेम और सफलतायें उन्हीं महापुरुषों को प्राप्त होती हैं जिन्होंने प्रत्येक परिस्थिति में अपने विचारों को समान रक्खा है। महात्मा गांधी आज कल मधुर भाषण की साक्षात् मूर्ति हैं।

मधुर-भाषण में छल कपट सर्वथा निषिद्ध है। मधुर भाषण में छल कपट का व्यवहार उसके महत्व को खो देता है। चाटुकारी और स्वार्थ साधन के लिये मधुर शब्दों का प्रयोग सर्वथा निन्दनीय है। मधुर भाषण में कापटिक-व्यवहार नीचता है, इससे मनुष्य का पतन हो जाता है। स्वार्थ के लिये मधुर शब्द बोलने वालों को तुलसीदास ने बुरा बतलाया है। वे कहते हैं कि कपटी पुरुष ऊपर से तो बड़े कोमल और उदार प्रगट होते हैं किन्तु भीतर से भयङ्कर क्रूर होते हैं।—

बोलहिं मधुर वचन जिमि मोरा। खाहिं महा अहि हृदय कठोरा॥

अन्त में हम यही निवेदन करेंगे कि मधुर भाषण स्वार्थ साधन के लिये नहीं वरन पारस्परिक आनन्द वर्धन के लिये ही होना चाहिये। कटु और परुष शब्द बोलकर किसी के हृदय को चोट पहुँचाना हिंसा और पाप है। अतः हमें सदैव निरभिमान होकर ऐसे वचन बोलने चाहिये जिससे दूसरों को शान्ति प्राप्त हो।

ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे आपहु शीतल होय॥

वर्तमान-योरोपीय-युद्ध १६४१, ४२

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—युद्ध और मानवी-मनोवृत्ति।
(२) युद्ध से हानियाँ—
(३) वरसाई की अनुदार सन्धि
(४) हिटलर का व्यक्तित्व
(५ युद्ध का विकास
(६) जर्मनी की विजय और ब्रिटिश जाति
(७) वर्तमान स्थिति और भारतवर्ष
(८, उपसंहार-युद्ध का परिणाम और जातियों पर उसका प्रभाव।

मनुष्य की पाशविक मनोवृत्तियों में से एक लड़ने की भी मनोवृत्ति है। मनुष्य इसके चक्कर में पड़कर मनुष्य से राक्षस बन जाता है। लड़ाई का बृहत् रूप ही युद्ध कहलाता है। संसार में युद्ध दो कारणों से होते हैं—(१) धर्मस्थापन करने के लिये (२) राज्य विस्तार करने के लिये। राम-रावण युद्ध धर्मसंस्थापन के लिये था और जर्मन-अँग्रेज़ युद्ध राज्य-विस्तार के लिये है।

संसार में युद्ध से बड़ी हानियाँ होती हैं। युद्ध में अगणित निरीह मनुष्यों का वध होता है। बड़े-बड़े बुद्धिमान और कलाकार युद्ध में काम आ जाते हैं। समाज और राष्ट्रों की उन्नति में रुकावट आ जाती है। देशों की संस्कृति नष्ट हो जाती है। उनकी शक्ति का बिलकुल ह्रास हो जाता है। अगणित स्त्रियां विधवा हो जाती हैं, समाज में व्यभिचार फैल जाता है। व्यभिचार से नैतिक जीवन भ्रष्ट हो जाता है जिसके

कारण समाज पतित हो जाता है। पतित समाजों का अस्तित्व मिट जाता है। वर्तमान युद्ध न मालूम कितने राष्ट्रों को लेकर बैठेगा, कितने देशों को परतन्त्रता की शृंखला में जकड़ेगा और न मालूम कितने परतंत्र राष्ट्रों को स्वतंत्र बनायेगा। अभी तक तो इस युद्ध की भूमिका-मात्र बनी है, भविष्य में देखना है कि यह कैसा रूप धारण करता है?

विगत महायुद्ध सन् १४ में भी राज्य विस्तारात्मक प्रवृत्ति ही के आधार पर युद्ध छेड़ा गया था किन्तु देश में कम्यूनिस्ट विचारों का प्रबल बवण्डर उठ खड़ा हुआ जिसके कारण जर्मन साम्राज्य को विरोध के समक्ष हथियार डाल देने पड़े। इसके बाद वरसाई की अनुदार सन्धि हुई जिसमें शत्रुओं की गौरव भावनायें काम कर रही थीं। वरसाई की अनुदार शर्तों ने जर्मनी की आंखें खोलीं और देश ने अपनी भूल को समझा। जर्मनी में चारों तरफ अशान्ति की घटनायें हो गईं। देश में प्रजातंत्र-वाद का दुकान फैला यहूदियों और साम्यवादियों ने जर्मन देश को धर्म की आड़ में लूट चूसा देश ने इस प्रवृत्ति को अधिक काल तक न सहा। जर्मनी ने हिटलर जैसे नेता को जन्म दिया। हिटलर के हृदय में जर्मनी के प्रति अगाध प्रेम है। वह अपने प्यारे देश के लिये प्राण तक दे सकता है, उसने अपने व्यक्तित्व के बल से सारे जर्मन साम्राज्य को एक सूत्र में बाँध दिया है। हिटलर ने साम्यवादियों और यहूदियों की बेहूदा हरकतों से जर्मन साम्राज्य का खोखलापन जनता के सामने रक्खा और दिखाया कि वरसाई की सन्धि मनुष्योचित अधिकारों से आगे बढ़कर पाशुविक प्रवृत्ति की चरम सीमा पर काम कर रही है। हिटलर ने अपनी प्यारी जनता को समझाया कि ऐसे गुलाम-जीवन से तो मृत्यु ही अच्छी है। जर्मन जनता ने अपने प्यारे नेता को

पहिचाना और उसकी आज्ञा पर अक्षर अक्षर चलने को प्रस्तुत हो गई। आज जर्मनी का हिटलर सर्वेसर्वा है। जर्मन जनता आज अपने प्यारे हिटलर के संकेत पर प्राण न्योछावर करने को प्रस्तुत है।

हिटलर ने हिण्डनवर्ग की मृत्यु के पश्चात से जर्मनी की बागडोर अपने हाथ में ली है। वह उसका नेतृत्व बड़ी सावधानी और बुद्धिमानी से कर रहा है। सन १९३५ ई० में हिटलर ने वरसाई की अनुदार सन्धि को जो ब्रिटेन के साथ १९१९ ई० में हुई थी, तोड़ दिया। इससे सारे योरोप में खलबली मच गई। १९३६ में हिटलर ने राइनलैंड पर अपना अधिकार जमा लिया। उसी साल उसने सैनिक-शिक्षा राष्ट्र को अनिवार्य करदी और शिक्षा का समय एक साल से बढ़ाकर दो साल कर दिया। १९३८ में उसने आस्ट्रिया और सुडेटनलैंड पर अपना अधिकार जमा लिया। इन सामयिक कारणों ने हिटलर के विरोध में बहुत कुछ विष-वमन किया, रोष प्रकट किया, लिखा पढ़ा भी किन्तु कुछ नतीजा न निकला। ब्रिटिश जाति को हिटलर का यह दुस्साहस असह्य हो उठा उन्हें निश्चय हो गया कि जर्मनी बिना युद्ध के सत्पथ पर न आयेगा। साथ ही ब्रिटेन ने जर्मनी की सैनिक तैयारी को भी नहीं समझा। अतः एक बार फिर योरोप में रण भेरी बज उठी।

सन १९३२ ई० से ही युद्ध के बादल यूरोप पर मँडरा रहे थे। सब राष्ट्र अपनी अपनी सैनिक-शक्ति बढ़ाने में लग रहे थे। किन्तु राइनलैंड और आस्ट्रिया की घटनाओं ने बहुत जल्द युद्ध आरम्भ कर दिया। २ सितम्बर सन १९३९ को सहसा डैनजिग और कारेडर बन्दर-गाहों पर अपना अधिकार जमाने के लिये हिटलर ने पोलैंड पर बम वर्षा आरम्भ करदी। सहस्रों व्यक्तियों की हत्या हुई। थोड़े दिनों के रक्त पात

असफल रही। इधर पूर्वी-युद्ध क्षेत्र में लक्समवर्ग को २४ घण्टे में हिटलर ने अपने अधिकार में कर लिया। इसके पश्चात् उसने अपनी पैराशूट वाली सेना को हालैंड को रवाना किया। हालैंड की सम्राज्ञी तीसरे दिन के युद्धवाद ही में लन्दन भाग गई और हालैंड पर जर्मनी का पूरा अधिकार हो गया।

हालैंड की विजय हो जाने के पश्चात् ब्रिटेन ने अपनी समस्त सेना नार्वे से हटा लीं और उनको इगलिश चैनल और भूमध्य-सागर में एकत्र किया। जर्मनी ने अपार शक्ति और वायुयानों से बेलजियम पर आक्रमण बोल दिया। उधर फ्रांस और ब्रिटेन ने भी अपनी भारी शक्ति बेलजियम की सहायता में भेज दी। फ्लैंडर्स के विकराल युद्ध में ३ लाख ब्रिटेन सैनिक काम आये। अरबों की युद्ध-सामग्री जर्मनी के हाथ लगी। बेलजियम ने स्वयं अपने को हिटलर के समर्पित कर दिया। ब्रिटेन को इस युद्ध में पर्याप्त हानि और अपमान सहना पड़ा। हिटलर की इस विजय ने सारे योरोप को आतङ्कित और आश्चर्यान्वित कर दिया।

अब फ्रांस और ब्रिटेन ने जर्मनी की शक्ति को पहिचाना। अब दोनों राष्ट्रों ने सम्मिलित शक्ति से हिटलर का सामना किया। जर्मनी ने अपनी सारी शक्ति पश्चिमी मोर्चे पर लगा दी। हफ्तों घनघोर युद्ध चलता रहा। अब फ्रांस की बारी आई। फ्रांस और जर्मनी दोनों ने अपनी अपनी वीरता का परिचय दिया। फ्रांस को अपनी लोहे की दीवार (Maginot line) पर बड़ा अभिमान था (जो ६०० मील लम्बी है और डेनमार्क से स्विट्ज़रलैंड तक फैली हुई है) वह जर्मनी के पैराशूटों के सामने अनुपयोगी सिद्ध हुई। अन्तत जर्मनी फ्रांस के अन्दर

सिडनी की सीमा प्रवेश कर गया। मुसोलिनी ने इस परिस्थिति से फायदा उठाया उसने पूर्व की तरफ से फ्रांस पर हमला बोल दिया। फ्रांस की सिपाही सेना के पांव छूट गये और उसने अपने आप को हिटलर और मुसोलिनी के इशारे कर दिया

फ्रांस की हार से ब्रिटेन का साहस हिल गया। ब्रिटेन ने अपनी कैबिनेट (मंत्रिमण्डल) को बदला। चैम्बरलेन के स्थान चर्चिल को प्रधान मंत्री बनाया। चर्चिल एक चतुर और मौलिक पुरुष हैं। वे बड़े साहस और चतुराई से युद्ध को चला रहे हैं। अब युद्ध का विस्तार बहुत लम्बा हो गया है। सारे उत्तरी अफरीका में तमाम भूमध्य-सागर में युद्ध छिड़ा हुआ है। इंगलैंड पर बराबर बम्ब-वर्षा हो रही है। बमों ने लन्दन और इंगलैंड के बड़े २ ऐतिहासिक मकानों को तहस-नहस कर दिया है। चारों तरफ खण्डहर ही खण्डहर नजर आते हैं।

इटली की सेनायें सर्वत्र हार रही हैं। बहुत से इटालियन कैदी बन्दी होकर भारतवर्ष आ रहे हैं। इटली के अनेक उपनिवेश ब्रिटेन ने छीन लिये हैं। चारों तरफ युद्ध की भयङ्करता दर्जे पर हो रही है। भारतवर्ष भी इस युद्ध के प्रभाव से नहीं बचा। देश में लाखों आदमी और करोड़ों रुपया इंगलैंड भेजा जा रहा है। देश के नेता ब्रिटेन की इस प्रकार की सहायता के पक्ष में नहीं हैं। महात्मा गान्धी ने सत्याग्रह संग्राम छेड़ रक्खा है वे कहते हैं कि ब्रिटेन को न एक भी आदमी दो न एक पाई। देश में सर्वत्र अशान्ति है। नेताओं के जेलों में बड़ी कठिनाइयां आ गई थी। जेलों से उनका रिहा होने प्रारम्भ हो गये, वे किन्तु अब यह सिलसिला बन्द हो गई है।

लड़ाई में बड़े बड़े भयङ्कर अस्त्रों का प्रयोग हो रहा है। जिनका कभी विचार भी नहीं किया जा सकता था। हिटलर स्वय मोर्चों पर लड़ने जाता है। वह सारी सेना का संचालन खुद कर रहा है। उसने अनेक जहाजों को डुबाया है। इङ्गलैंड पर बड़ी २ भयङ्कर गोलाबारी की है जिसके कारण इङ्गलैंड निवासियों की नींद हराम हो रही है। फ्रांस की विजय के बाद हिटलर की निगाह बालकान प्रायद्वीप के देशों पर गई। उनके एक २ देश पर बड़े अल्प काल में उसने विजय प्राप्त करली। यूनान का मोर्चा ब्रिटेन की मदद के कारण बड़ा भयङ्कर रहा। क्रीट के टापू पर ब्रिटेन और जर्मन शक्तियों का सतुलन हुआ किन्तु विजय जर्मनी के हाथ रही। ब्रिटेन का बड़ा जन धन नाश हुआ।

इधर रूस ने व्यर्थ जर्मनी से लड़ाई मोल ली। मगर यह सब ब्रिटेन की राजनीति के खेल थे। विवशत' हिटलर ने रूस के खिलाफ युद्ध की घोषणा करदी। ३ मास से घमासान युद्ध हो रहा है। ब्रिटेन ने भी एड़ी से चोटी तक का ज़ोर लगा रक्खा है, किन्तु विजय नित्य जर्मनी की हा होती चली जा रही है। रूस की राजधानी पर जर्मनी का अधिकार हो चुका है। हिटलर की विजय आज उसकी आज्ञावर्तिनी हो रही है।

ससार का भविष्य इसी लड़ाई पर निर्भर है। कौन जाने युद्ध कब तक चले? इस युद्ध में मनुष्यता का कितना विनाश हो यह सब भविष्य के गर्भ में छुपा हुआ है। इतना अवश्य है कि यह युद्ध कितने ही राष्ट्रों की स्वतन्त्रता को सदैव के लिये शान्त कर जायगा। कितने ही राष्ट्र स्वतन्त्रता का आनन्द उपलब्ध करेंगे और कितने ही राष्ट्र अपना अस्तित्व ससार से मिटा जायेंगे।

अन्त में यही कहना है कि राजनीतिवादात्मक युद्धों में सदैव समाज और राष्ट्र के गले काटे जाते हैं। मनुष्यत्व का नाश करानेवाली जातियाँ धर्मान्ध के नाते कटे टुकड़ों के लिये कथा गढ़ बताती हैं। क्या सभ्यता यही पाठ पढ़ाती है कि स्वार्थ के लिये मनुष्य मनुष्य का रुधिर पिये। बलवान राष्ट्र निर्बल राष्ट्र को कुचल दे और उसको संसार से मिटा दे। यह पशु-प्रवृत्ति नहीं है तो क्या है!

नागरिक-कर्तव्य

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—नागरिकता की व्याख्या और आवश्यकता।

(२) नागरिक अधिकारों के रूप—

(क) सामान्य अधिकार

(ख) राजनीतिक अधिकार।

(३) सामान्य अधिकारों की व्याख्या—

जान और माल की रक्षा, शिक्षा, आर्थिक सुविधा, सामाजिक-संगठन, रक्षा, विचार और भाषण की स्वतन्त्रता, धार्मिक स्वतन्त्रता।

(४) राजनैतिक अधिकार

मत (वोट) देने का अधिकार, चुनाव में खड़े होने का अधिकार और पद-प्राप्ति का अधिकार।

(५) उपसंहार—हम और हमारे नागरिक अधिकार।

मनुष्य ने समाज में जन्म लिया है, समाज में वह पला है, शिक्षा

पाई है और अपनी मानसिक शक्तियों को विकसित किया है, समाज ने उसे मनुष्यता प्रदान की है, अत: मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपनी समाज की सुख शान्ति की अभिवृद्धि करे। समाज की उन्नति से ही व्यक्ति की उन्नति है। अत: प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह समाज की उन्नति में पूरी तत्परता दिखलाये और मन, वचन, कर्म से उसे पूरा सहयोग दे। ऐसी तत्परता का नाम ही नागरिक कर्तव्य है।

संसार में कोई व्यक्ति, अथवा कोई समाज शक्ति के सञ्चय किये बिना उन्नति नहीं कर सकता। मनुष्य को चाहिये कि सबसे पहले वह अपना बल सञ्चय करे। शारीरिक बल प्राप्त करने के लिये आवश्यक है कि वह व्यक्ति पूर्ण आरोग्य हो। पूर्ण आरोग्यता तब ही प्राप्त हो सकती है जब वह स्वयं स्वच्छ रहे और अपने वस्त्रों को साफ-सुथरा रक्खे। साथ ही अपने मकान, गली और गाँव को भी स्वच्छ रक्खे। बाहरी स्वच्छता केवल शरीर ही को स्वस्थ नहीं रखती वरञ्च मानसिक प्रवृत्तियों को भी स्वस्थ रखती है और उनमें प्रसन्नता का सञ्चार करती है। अतः प्रत्येक गाँव अथवा नगर निवासी का कर्तव्य है कि वह अपनी निज की स्वच्छता का ध्यान रखते हुए अपने मकान, गली, सड़क और निवास-स्थान की स्वच्छता का पूरा ध्यान रक्खे। इस कार्य में व्यक्तिगत स्वार्थों को भुलाकर सार्वजनिक स्वार्थों का ध्यान रखना ही माङ्गलिक है। ऐसे कामों में सामूहिक सहानुभूति और सहयोग की आवश्यकता होती है। अत आवश्यक है कि नालियों और सड़कों को स्वच्छ रखने के लिये कुछ ऐसे आदमी नियुक्त किये जायें, जो प्रत्येक समय सफाई की तरफ ध्यान रक्खे। समय समय पर उनकी मरम्मत और दुरुस्ती भी करते

आन्दोलनों का जन्म दिया जाय जिससे जनता प्रेम सूत्र में बँध जाये और विद्वेष की भावनायें ही उत्पन्न न हों। अछूतों और इतर निम्न जातियों के उठाने का भरसक प्रयत्न किया जाय, उनको समान अधिकार दिये जायें उनको कुओं से जल भरने और देव-दर्शन का अधिकार होना चाहिये हिन्दू मुसलिम एकता का आन्दोलन जारी रक्खा जाए, उन को धार्मिक अधिकार ऐसे दिये जायें जिससे एक दूसरे की भावनाओं को ठेस न पहुँचे।

नागरिकों का चौथा कर्तव्य है कि वह अपनी जनता की आर्थिक दशा को ठीक रक्खे। आर्थिक दशा के ठीक-ठाक न रहने से जनता में घोर अशान्ति रहती है। अशान्ति की दशा में कोई कार्य सुचारु रूप से सञ्चालित नहीं हो सकता। नगर में बेकार जनता बड़ा उत्पात मचाती है; जहा तक सम्भव हो सके बेकारों की संख्या को बिलकुल न बढ़ने दिया जाय। शिक्षित बेकारों का अधिकता जनता और सरकार दोनो को समान-रूप से खतरनाक है, क्योंकि शिक्षितों में ऐसे ऐसे मस्तिष्क होने सम्भव हैं जिनको अनेक प्रकार की शैतानी सूझे जिनमे जनता और सरकार दोनों परेशानी में पड़े। अत- नागरिकों को चाहिये कि वह ऐसे उद्योग-धन्धों का जन्म दें जिससे बेकारों को आजीविका प्राप्त हो जाये और वे बेकार रहकर जनता में अशान्ति उत्पन्न न करें। उद्योग-धन्धों और कला-कौशल के उन्नत बनाने के लिये आवश्यक है कि धनिक लोग समिति प्रणाली को अपनायें और अपनी सम्पति का उचित व्यवहार करना सीखें।

नागरिक-कर्तव्य की पाँचवीं बात यह है कि वह अपने नगर को

चोर डाकू और आक्रमणकारियों से सुरक्षित रक्खे जिससे जनता के धन और प्राण की रक्षा हो। कोई किसी को न सतावे। कोई किसी का धन अपहरण न करे। चोर लुटेरों को दण्ड दिया जाय हत्यारा और हत्यारों को सजा दी जाय। इस काम में गवर्नमेण्ट का सहयोग अधिक लाभप्रद होगा। जनता भी कुछ समिति और मण्डलों की स्थापना करे जिससे नगर की सुरक्षा हो सके।

समिति ऐसे चोर डाकुओं से भी नगर की रक्षा करे जो धर्म और सभ्यता के नाम पर समाज में अशान्ति उत्पन्न कर देते हैं। शान्ति म म के आधार-भूत हो। कुत्सित भावनायें विक्षेप भड़काने में सहायता करती हैं। नगर की रक्षा में सदैव उत्तम भावनायें ही बरतनी चाहिये।

नागरिक-कर्तव्य-पालन की दूसरी बात यह है कि जनता इस बात का भी पूरा ध्यान रक्खे कि गवर्नमेण्ट किसी के साथ अन्याय न करे और न किसी पर अन्याय होने दे। सबको कानूनी दृष्टि से समान समझा जाय। अदालतों में पूरा न्याय हो। पक्षपात से काम न लिया जाय। साथ ही न्याय सस्ता हो जिससे गरीब जनता भी लाभ उठा सके।

नागरिकता के अधिकारों में तीसरी बात यह हो कि जनता को धर्म में और भाषण देने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो जिससे प्रत्येक व्यक्ति की मानसिक शक्ति विकसित हो। मानसिक प्रवृत्तियों को दबाने से मस्तिष्क के विकास में बाधा पड़ती है। विचार और भाषण स्वातन्त्र्य का यह अभिप्राय नहीं है कि इससे दूसरों को हानि अथवा अपमान करने का काम लिया जाय।

चौथी बात नागरिकता के कर्तव्य की यह है कि प्रत्येक नागरिक

को धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो। वह अपनी अभिरुचि के अनुसार चाहे जिस धर्म का पालन करे किन्तु अपनी इस धार्मिक प्रकृति से दूसरों की भावनाओं को ठेस न पहुँचाये और किसी के धार्मिक कृत्य में हस्त-क्षेप न करे।

नागरिकता के अधिकार में सबसे अधिक आवश्यक बात यह होनी चाहिये कि कौंसिल, प्रान्तीय कौंसिल, केन्द्रिय कौंसिल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और म्यूनिसिपल बोर्ड में राष्ट्र के समस्त स्त्री पुरुषों को मेम्बर चुनने का अधिकार हो। जो बहुत ही उचित और न्याय सङ्गत है। चुनाव में खड़े होने के लिये माली-हैसियत का प्रतिबन्ध हटा देना चाहिये। इससे सर्व-साधारण को आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त होगा। सरकारी पद प्राप्ति में जाति पांति या सम्प्रदाय का विचार न किया जाय। केवल योग्यता पद प्राप्ति की कसौटी हो।

सामाजिक कार्यों में धैर्य से काम लिया जाय। समाज के कार्यों में सत्यता की बड़ी आवश्यकता है। सामाजिक कार्यों में पक्षपात बड़ा दुःखदाई होता है। स्वतन्त्र राये समाज में अधिक महत्व रखती हैं। नागरिकों को चाहिये कि वह पद या धन के लालच से अपनी प्रतिष्ठा को न खोयें। न्याय के अवसर पर पक्षपात से काम न लें। शान्ति और व्यवस्था स्थिर रखने वाले क़ानूनों का समर्थन करें, इसके विपर्य क़ानून का विरोध करें। सबको समान अधिकार हों। सबको धार्मिक स्वतन्त्रता हो। निर्बल और असहायों की सहायता की जाये। किसानों के क़ानूनों को नम्र बनवाया जाय। नागरिकों का सबसे उपयोगी कर्तव्य यह है कि वह अपना निर्णय और निश्चय स्वयं करें। देश की बागडोर नागरिकों के हाथ में हो।

ब्रह्मचर्य के महत्व को समझती हैं और यथावत् ब्रह्मचर्य धर्म को पालती हैं वही वीर्यवान, प्रतापी, शक्तिमान और दीर्घ-जीवी होती हैं। जो जातियाँ इस ब्रह्मचर्य धर्म को ठुकराती हैं, वह निस्तेज, दुर्बल, रुग्ण और अल्पायु होती हैं। भारतवर्ष में कभी अतुलित बलशाली मनुष्य होते थे, किन्तु आज कैसे बलहीन, दुर्बुद्धि और अशिक्षित पुरुष हैं, इसका कारण-भारतियों की विलास प्रियता और ब्रह्मचर्य धर्म का तिरस्कार करना है।

धन्वन्तरि महाराज अपने शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश देते समय ब्रह्मचर्य का महत्व बताते हैं—"मृत्यु राग और बुढ़ापे का नाश करने वाला अमृतरूप ब्रह्मचय है।" जो ससार में शान्ति, सुन्दरता, स्मृति, ज्ञान, आरोग्य और उत्तम सन्तान चाहता है वह ब्रह्मचर्य का पालन करे।

शरीर में वीर्य ही सार वस्तु है। ब्रह्मचर्य से वीर्य रक्षा होती है। वीर्य शरीर में आरोग्यता और पुष्टता लाता है। हमारे मुख पर कमनीयता और गालों पर गुलाबी छटा केवल ब्रह्मचर्य के कारण आती है। वाणी में गाम्भीर्य, बाहुओं में अपार बल, हृदय में अपार साहस, केवल ब्रह्मचर्य के कारण आता है।

ब्रह्मचर्य से मस्तिष्क को बल और प्रौढ़ता प्राप्त होती है। उत्साह और बल बढ़ता है। स्वास्थ्य ठीक रहता है। स्वास्थ्य ठीक रहने से दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। बुद्धि की तीव्रता बढ़ती है। स्मरण-शक्ति कुशाग्र होती है। मेधा शक्ति बढ़ती है। सुन्दर यश चलता है। रोगों का नाश होता है। अपूर्व सुख और शान्ति मिलती है। वीर्य की रक्षा होने से मस्तिष्क पुष्ट होता है। मस्तिष्क पुष्ट होने से मेधा-शक्ति तीव्र

होती है। इसी ब्रह्मचर्य के कारण ऋषि लोग परम मेधावी और विद्वान होते थे और बड़े बड़े ग्रन्थों को एक बार सुन लेने पर कण्ठ कर लेते थे। उनके पास अनन्त कला और विद्यायें थीं। हम दो चार भी पंक्तियों को याद नहीं रख सकते। इसका कारण यही है कि ब्रह्मचर्य ठीक न रखने के कारण हमारी मेधा-शक्ति बिलकुल निर्बल पड़ गई है।

ब्रह्मचर्य से धार्मिक-उत्थान भी होता है। जब बुद्धि ठीक होती है तब धार्मिक उत्थान अवश्य होता है। शुद्ध बुद्धि शुद्ध विचार उत्पन्न करती है। उत्तम विचार रखने से शान्ति स्वयं आ जाती है। संसार में तीन बल हैं एक शरीर बल दूसरा धन बल और तीसरा मनो-बल। इन तीनों में से मनोबल सबसे ऊँचा है किन्तु मनोबल तब तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक शारीरिक बल प्राप्त नहीं होता। शरीर बल ही हमारे सब बलों का मूल कारण है। शरीर बल तब तक सम्भव नहीं जब तक कि ब्रह्मचर्य धर्म का पालन न किया जाय। अतः जब तक शारीरिक बल न होगा तब तक संसार में विजय प्राप्त करना कठिन है।

ब्रह्मचारी का मान सर्वत्र होता है। ब्रह्मचारी की यश-पताका सर्वत्र फैलती है। हमारे देश में एक से एक बढ़कर ब्रह्मचारी हुये हैं। जिनकी समता संसार में मिलना कठिन है। आज संसार में ऐसा कौन पुरुष है जो वीर हनुमान जी और भीष्म पितामह की अलौकिक ब्रह्मचर्यनिष्ठा को न जानता हो?

इन महापुरुषों के जीवन का जब स्मरण हो आता है तो शरीर रोमाञ्चित हो उठता है। भीष्म पितामह के सामने उनके प्रतापी गुरु परशुराम जी को भी हार माननी पड़ी थी। श्री कृष्ण जैसे महापुरुषों

को भीष्म पितामह के सामने सिर झुकाना पड़ा था। अत ब्रह्मचर्य का पालन करना नितान्त आवश्यक है। इस पर एक ऐतिहासिक कहानी बड़ी उत्साह-वर्द्धक है। एक बार भीष्म पितामह काशी के राजा की अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका तीन कन्याओं को जीत लाये। अम्बालिका और अम्बिका का विवाह तो उन्होंने अपने छोटे भाइयों विचित्रवीर्य और चित्राङ्गद से कर दिया और ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने के कारण उन्होंने अम्बा को काशी लौट जाने को कहा। अम्बा बड़ी दुःखी हुई। वह दुःखी होकर परशुराम जी के पास गई और अपनी सारी कष्ट कथा कह सुनाई। परशुराम को अम्बा की कथा सुनते ही करुणा उत्पन्न हो आई। परशुराम जी ने अम्बा से कहा कि अच्छा मैं भीष्म से तेरे विवाह के लिये कहूँगा, यदि वह न मानेगा तो मैं उससे युद्ध करूँगा। यदि भीष्म हार गया तो उसे अवश्य तुम्हारे साथ विवाह करना पड़ेगा।

परशुराम अम्बा को लेकर भीष्म जी के पास आये और कहा कि तुम इस कन्या के साथ विवाह करलो। भीष्म जी ने इसका अस्वीकार कर दिया और कहा कि यदि आप मुझे युद्ध में हरा देंगे तो मैं अवश्य अम्बा से विवाह कर लूँगा। दोनों में घोर युद्ध हुआ। भीष्म जी अखण्ड ब्रह्मचारी थे, परिणामतः परशुराम हार गये और चले गये। ब्रह्मचारी भीष्म ने ब्रह्मचर्य के बल पर विजय पाई। सोचने की बात है कि यदि भीष्म जी में शरीर बल न होता तो वे कभी अपनी प्रतिज्ञा का पालन कर सकते थे कदापि नहीं, हनुमान जी ने ब्रह्मचर्य से उपार्जित बल से एक क्षण में रावण जैसे बलशाली को भयभीत कर दिया था और पाँच सौ कोस के जल के समुद्र को बात की बात में उलाँघ गये थे। इसे ब्रह्मचर्य की महिमा न कहें तो क्या कहें ?

हमारी आयु नित्य क्षीण होती जाती है। हमारे नवयुवक पिता बनने से पहले ही बुड्ढे बनते हैं इसी कारण हमारी औसत आयु कम होती जा रही है। हमारे देश में धार्मिक-नियमों के स्थानों पर बुरे व्यवहार प्रचलित हो गये हैं। अतः देश के नेताओं का कर्तव्य है कि वे देश वासियों को धर्म के नियमों पर चलाने का उद्योग करें और ब्रह्मचर्य का उचित रीति से पालन करायें। बिना ब्रह्मचर्य के पालन के सुख और ऐश्वर्य की आशा करना निरी मूर्खता है।

ब्रह्मचर्य ही हमारी शिक्षा वैभव और उन्नति का एक मात्र साधन है। ब्रह्मचर्य ही जीवन है ब्रह्मचर्य ही मानसी शक्तियों को विकास देने का मूल साधन है। अतः हम ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके बल उत्साह और ऐश्वर्य प्राप्त करना चाहिये। अपने मन को सदैव पवित्र रखना चाहिये। अन्त में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि ऊपर जो साधन बतलाये हैं उन पर चलकर ब्रह्मचारी बनो। ब्रह्मचर्य द्वारा शक्ति उत्पन्न करो। शक्ति उत्पन्न करने के पश्चात देश तथा जाति का उद्धार करो। यह यही मनुष्य का धर्म है और इसी में मानव जीवन की सार्थकता है।

नयी शिक्षा-योजना [बेसिक-शिक्षा]

विचार तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—वर्तमान शिक्षा प्रणाली से असन्तोष
(२) वर्तमान शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है
(३) महात्मा गांधी की शिक्षा योजना
(४) बेसिक शिक्षा की विशेषतायें

(५) बेसिक शिक्षा की पाठ्य प्रणाली

(६) उच्च शिक्षा और बेसिक शिक्षा

(७) उपसंहार—बेकारी और अशिक्षा का निराकरण

वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने हमारी संस्कृति को अपार धक्का पहुँचाया है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात कुछ ऐसे लक्ष्य लेकर हुआ था जिसकी पूर्ति अब आवश्यकता से अधिक हो गई है। वर्तमान शिक्षा ने हमारी सामाजिक स्थिति को इतना खराब कर दिया है और देश को इतना नीचा गिरा दिया है कि इसको उठाने में पर्याप्त समय लगेगा। इस पतन को प्रत्येक भारतीय अनुभव कर रहा है और वर्तमान शिक्षा-प्रणाली को एक दम बन्द करने की चिन्ता में है। भारतीय मस्तिष्क मे इस समस्या ने भारी असन्तोष उत्पन्न कर रक्खा है।

सन १९०५ के स्वदेशी आन्दोलन के समय देश ने अनुभव किया था कि शिक्षा-प्रणाली में भारतीयता होनी चाहिये। उस समय अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं का जन्म हुआ और प्रयत्न हुये किन्तु वह प्रयत्न केवल व्यक्तियों तक ही सीमित रहे और स्वदेशी आन्दोलन के साथ ही साथ भारतीय-शिक्षा प्रणाली का आन्दोलन भी समाप्त हो गया। स्वामी दयानन्द ने पुन देश को अपनी भाषा और अपनी शिक्षा प्रणाली द्वारा शिक्षा देने पर जोर दिया। देश में गुरुकुलों और विद्यापीठों की स्थापना हुई। राजा महेन्द्रप्रताप ने वृन्दावन में प्रेम-महा-विद्यालय, म० मुन्शीराम ने गुरुकुल कांगड़ी और नारायण स्वामी ने गुरुकुल वृन्दावन की बुनियाद डाली। राष्ट्रीय-महासभा ने भी अनेक प्रयत्न किये। असहयोग आन्दोलन के अवसर पर सन १९२१ ई० में गुजरात

और काशी में विद्यापीठ का जन्म हुआ। १९वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों से ही देश का यह निश्चय हो गया कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली हमारी सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को हल नहीं कर सकती। उसकी अनुपयोगिता के सम्बन्ध में अनेक नेताओं ने अपने विचार प्रकट किये और कहा कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में न कोई ऊँचा आदर्श है और न वह समाज में ऐसे व्यक्ति उत्पन्न कर सकती है जो समाज के उपयोगी अङ्ग बन सकें; जिनमें अपना निजत्व व्यक्तित्व हो और समाज के काम में भरपूर भाग ले सकें। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने समाज में एक नया दल पैदा कर दिया है जिसकी बुनियाद विषमता की भावना पर अवलम्बित है। समाज अब ऐसे समाज उत्पन्न करने की चिन्ता में है जिसमें समता की भावना अधिक हो। पुरानी और एक नयी सिद्धान्तों आदर्शों को लेकर चलने वाली शिक्षा-पद्धति को बदलने की बड़ी भारी आवश्यकता है। इस शिक्षा में विषमता है केवल पूँजीवादी व्यक्ति ही इसे प्राप्त कर सकते हैं सर्वसाधारण के निर्धन होने से इसकी कोई गुञ्जायश नहीं है। सबसे प्रमुख बात यह है कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से भारत के मूल नैतिक आदर्शों को कोई स्थान नहीं दिया गया है।

फिर से महापुरुष महात्मा गांधी की दृष्टि भी इस दूषित शिक्षा प्रणाली की ओर गई और वह उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। सन् १९३७ ई० में भारत के कई प्रान्तों का शासन कांग्रेसवादी प्रतिनिधियों के हाथ में आ गया। महात्मा गांधी ने इस अवसर को उपयुक्त समझा और इन महत्त्वपूर्ण विषय को जनता के सामने रखकर प्रबोध-मति जनता का ध्यान इधर आकर्षित किया। इस शिक्षा-योजना के

सम्बन्ध में महात्मा जी ने जो अपील जनता से हरिजन में की थी उसके अवतरण यह हैं—"मेरी योजना यह है कि बालक की शिक्षा उसे उद्योग धन्धे सिखाकर शुरू की जाय, इस प्रकार अपनी शिक्षा के आरम्भ से ही वह कुछ उपार्जन करने लगे। स्कूलों में विद्यार्थी जो चीज बनाये उसे राज्य मोल ले ले। इस प्रकार अन्त में जाकर राज्य को शिक्षा पर कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ेगा। बालकों के स्कूल स्वावलम्बी होंगे।" महात्मा गांधी की आशानुसार देश ने अनुभव किया कि इस कमी को भी क्यों न पूरा किया जाय? अतः २२, २३ नवम्बर सन १९३७ ई० में राष्ट्र के प्रमुख प्रमुख नेताओं का एक सम्मेलन वर्धा में हुआ जिसके प्रेसीडेण्ट डाक्टर जाकिरहुसैन प्रिन्सिपल जामा मिलिया देहली नियत हुये। महात्मा जी ने अपनी महत्वपूर्ण शिक्षा योजना को सम्मेलन के सामने रक्खा। सम्मेलन ने बहुमत से उस योजना को स्वीकार किया। इसी योजना को वर्धा-शिक्षा-योजना के नाम से पुकारा जाता है। यू० पी० प्रान्तीय गवर्नमेण्ट ने इस योजना में कुछ प्रान्तीय आवश्यकताओं के अनुसार उलट फेर करके अपने प्रान्त के लिये स्वीकार कर लिया है और इसे बेसिक-शिक्षा का नाम दिया है, जिसकी विशेषतायें निम्न लिखित हैं।

वर्धा-शिक्षा-योजना की प्रधानता यह है कि उद्योग-धन्धों की शिक्षा को केन्द्र बनाया जाय और अन्य विषय उसी के सहारे पढ़ाये जाँय। उद्योग धन्धों की पाठन प्रणाली बिलकुल वैज्ञानिक ढङ्ग से हो। मौखिक शिक्षा पहले हो, फिर अक्षरों का ज्ञान कराया जाय। बच्चे का विद्यारम्भ संस्कार ७ वर्ष की अवस्था में किया जाय और १४ वर्ष की अवस्था

पहुँचने तक सातों सूत्र के समकक्ष शिक्षा समाप्त हो जाय। शिक्षा का माध्यम विशुद्ध मातृ-भाषा हो, अँगरेजी भाषा का उसमें कोई स्थान न हो। शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क हो। बच्चों का वातावरण ऐसा रक्खा जाय जिसमें उनकी समस्त मानसिक भावनाएँ विकसित हों। शिक्षा समाप्त करने पर उसे नौकरी के लिये दर दर भटकना न पड़े। वह राष्ट्र का कमाऊ सदस्य बनकर जीवन क्षेत्र में उतरे। बेसिक-शिक्षा में नागरिकता की शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। देश को नागरिक शिक्षा की कितनी आवश्यकता है यह बात किसी से छुपी हुई नहीं है। वर्तमान शिक्षा में मनुष्य का क्या अधिकार है? देश के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है? इसका किंचित भी ज्ञान नहीं कराया जाता। कहने का अभिप्राय यह है कि बेसिक शिक्षा सचमुच बड़ी अच्छी शिक्षा है। बेकारी और निरक्षरता की समस्या इससे बड़ी सुगमता से हल हो जाती है। कला-कौशल और उद्योग धन्धों को विकसित होने को पूरा अवकाश मिलता है। बच्चों की स्वाभाविक क्रिया शीलता से पूरा लाभ उठाया जा सकता है। सबसे बड़ा लाभ बेसिक शिक्षा से यह है कि बच्चे पाठशाला को जेलखाना नहीं समझते। उन्हें स्कूल अपने घर से भी अधिक प्यारे लगते हैं। ऐसी उत्तम शिक्षा से हमें पूरा लाभ उठाना चाहिये और उसके प्रचार में तन, मन और धन से प्रयत्नशील रहना चाहिये।

सन १९३८ ई० की हरिपुरा कांग्रेस में इस शिक्षा-योजना का प्रस्ताव आया और उसे सर्व-सम्मति से अपनाया गया। प्रस्ताव की रूपरेखा निम्न लिखित थी —

(१) समस्त देश में आरम्भिक शिक्षा ७ वर्ष तक अनिवार्य और निःशुल्क करदी जाय।
(२) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।
(३) शिक्षा उद्योग-धन्धों को केन्द्र बनाकर दी जाय, पहले विषय-ज्ञान कराया जाय बाद में साक्षर बनाया जाय।
(४) नागरिक शिक्षा पर पूरा बल दिया जाय।

इसके पश्चात् सब कांग्रेसी प्रान्तों में वर्धा-शिक्षा योजना के अनुसार शिक्षक तैयार करने के लिये प्रारम्भिक स्कूल खोले गये। आज इन स्कूलों से शिक्षा पाये हुये अध्यापक सहस्रों प्रारम्भिक स्कूलों में शिक्षा दे रहे हैं। अभी बेसिक शिक्षा-योजना का क्षेत्र बहुत परिमित है। यदि गवर्नमेण्ट उसे यथानुकूल सहायता देती रही तो उससे योजना का यथेष्ट अभिप्राय सिद्ध हो जायगा। विगत वर्षों की यदि रिपोर्टें सत्य हैं, उनमें किसी प्रकार का गोलमाल नहीं है तो निस्सन्देह बेसिक-शिक्षा का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।

ऊँची शिक्षा के विषय में वर्धा-शिक्षा योजना में बताया गया है कि कालेज की शिक्षा केवल राष्ट्र की आवश्यकता की पूर्ति का साधन बनाया जाय। अर्थात् राष्ट्र को जिन उद्योग-धन्धों की आवश्यकता है अथवा जिन व्यवसायों से राष्ट्र को लाभ होता है, उन उद्योग-धन्धों और व्यवसायों की पूर्ति के लिये वह कालेज शिक्षा को प्रचलित करे अन्यथा उसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है। महात्मा जी का कहना है कि जिस व्यवसायी को जिस प्रकार के मनुष्यों की आवश्यकता है वह अपनी अपनी आवश्यकता के अनुसार विद्यालय खोले और विद्यार्थियों को

शिक्षा देकर उसके लिये तैयार कर। कुटीर-उद्योग स्वावलम्बी हो। कला कौशल और साहित्य के माध्यम बनकर अपनी उदारता से चलाये। महात्मा जी ज्ञान की सार्थकता को अर्थ का स्रष्टा समझते हैं जिसमें व्यावहारिक जीवन हो ही नहीं सकता। फिर प्रश्न उठता है कि महात्मा जी की स्कीम के अनुसार राष्ट्र में योग्य अध्यापकों का अभाव हो जायगा। उसका समाधान यही है कि किसी विषय में दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों को ऐसे ऐसे पेशा में लेकर काम करा व कार्य उपयोगी बना सकें। वर्तमान यूनिवर्सिटियों को बन्द कर दिया जाय और तमाम एजूकेशन का नये सिरे से जीर्णोद्धार कर दिया जाय।

बदकिस्मती सन् १९३९ ई० से कांग्रेसी-मन्त्रियों ने अपने अपने पदों से इस्तीफा दे दिया है। जिसके कारण यह शिक्षा योजना का कार्य मध्यम पड़ गया है अन्यथा जिस तीव्र गति से काम आरम्भ हुआ था यदि उसी गति से चलता रहता तो निरक्षरता राष्ट्र की अवस्था बहुत कुछ सुधर जाती।

अन्त में हमें यही कहना है कि देश को बेसिक शिक्षा को अपनाना चाहिये और उसको देश के कोने कोने में फैलाना चाहिये अन्यथा पीछे पछताना ही हाथ रह जायगा।

यू० पी० में साक्षरता प्रसार और प्रौढ़-शिक्षा

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—शिक्षा की आवश्यकता

(२) भारत में निरक्षरता।

(३) साक्षरता-प्रसार योजना और वार्षिक सरकार।

साक्षर बनाना, साक्षरता को कायम रखना, पुस्तकालय और रीडिङ्ग रूम, जोनल और सहायता।

(४) शिक्षा का माध्यम, गणित और भूगोल की शिक्षा, परीक्षा और प्रमाण पत्र।

(५) साक्षरता-दिवस और जलूस।

(६) साक्षरता के लिये शुभ आशा और अपील।

संसार में मनुष्य की आवश्यकतायें बढ़ती जा रही हैं। भारत के गाँव भी संसार की घटनाओं के प्रभाव से नहीं बच सकते। गाँव वालों का उत्तरदायित्व भी अपेक्षाकृत बढ़ता जाता है। धीरे धीरे देश के शासन की बागडोर भी अब उनके हाथ में आती जाती है किन्तु शिक्षा के अभाव के कारण वह भली भाँति अपने दायित्व को निभा नहीं सकते। वे साक्षरता के बिना कभी कभी ऐसे काम कर बैठते हैं जिनसे उन्हें पर्याप्त हानि उठानी पड़ती है। अज्ञान के कारण वह न तो अपना ही भला कर सकते हैं और न देश ही को उनसे कुछ लाभ हो सकता है।

बीसवीं शताब्दि के इस वैज्ञानिक युग में भी हमारा देश अशिक्षा के कारण बहुत पिछड़ा हुआ है। बालक, युवा और बूढ़े सब ही इस रोग के वशीभूत हैं। हमारे देश में केवल १० प्रति शत व्यक्ति ऐसे हैं जो लिख पढ़ सकते हैं। देश में बालक-बालिकाओं के स्कूलों का तो यत्र-तत्र प्रबन्ध भी है, किन्तु प्रौढ़ स्त्री-पुरुषों की बड़ी शोचनीय अवस्था है। वह बिलकुल शिक्षा से अपरिचित हैं। कहा जाता है कि

कभी भारत दुनिया का गुरु था यहीं के प्रकाश से संसार ने प्रकाश पाया है किन्तु आज वो भारतवर्ष घोर अन्धकार में डूबा हुआ है। उसके पतन का ठिकाना नहीं। साक्षरता-प्रसार का आन्दोलन हमारे देश में ५० वर्ष से चल रहा है, स्वर्गीय गोपालकृष्ण गोखले ने इस आन्दोलन को जन्म दिया था। उनके जीवन काल में बहुत कुछ उसका प्रचार हुआ किन्तु उसका फल कुछ अधिक महत्वपूर्ण नहीं निकला। वर्तमान काल के मस्तिष्क में यह बात आई कि देश में केवल बालक बालिकाओं की शिक्षा अनिवार्य कर देने मात्र से देश की निरक्षरता दूर नहीं हो सकती, हमें उन लोगों को भी साक्षर बनाना चाहिये जो प्रौढ़ हैं। प्रौढ़-शिक्षा के बिना निरक्षरता का रोग निवारण होना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। देश की आर्थिक और नैतिक उन्नति तब तक नहीं हो सकती जब तक उसको पर्याप्त संख्या में साक्षर न बना लिया जाय। देश की इस बड़ी भारी आवश्यकता को कांग्रेसी सरकारों ने अनुभव किया और सबसे पहले उन्होंने अपने सूबे यू० पी० में साक्षरता का बिगुल बजा दिया और निरक्षरता का समूल नाश करने का बीड़ा उठा लिया।

१ अगस्त सन् १९३८ ई० को श्री भगवान चतुर्वेदी की अध्यक्षता में शिक्षा प्रचार कार्य आरम्भ हुआ। १५ जनवरी सन् १९३९ ई० को सारे प्रान्त में इस शुभ कार्य का श्री गणेश हुआ। बड़ी तीव्र गति से यह आन्दोलन चल पड़ा। साक्षरता प्रचार-आन्दोलन ने बहुत ही अल्प काल में आशातीत सफलता प्राप्त की है, जिससे भविष्य की अच्छी आशायें की जाती हैं। साक्षरता प्रचार को भली भाँति विकसित करने के

लिये यू० पी० गवर्नमेण्ट ने ६६० प्रौढ़ स्कूल खोले हैं, जिसमें ११ वर्ष से लेकर ४० साल तक के प्रौढ़ शिक्षा पाते हैं। शिक्षार्थियों से किसी प्रकार की फीस नहीं ली जाती। पढ़ने वालों को पुस्तकें सरकारी तौर पर देने का प्रबन्ध है। प्रौढ़ों की शिक्षा को स्थिर रखने के लिये शिक्षा-शिक्षा-प्रसार-विभाग यू० पी० ने ३,६०० रीडिङ्ग रूम (वाचनालय) और ७६८ पुस्तकालय खोले हैं। जिनमें हिन्दी उर्दू प्रत्येक भाषा के साप्ताहिक और मासिक पत्रों का प्रबन्ध कर दिया गया है। इतना ही करके शिक्षा-प्रसार विभाग ने दम नहीं लिया परन्तु अनेक स्कूल और लाइब्रेरियों को सहायता देकर शिक्षा प्रसार-आन्दोलन को सफल बनाया है। यह नियम बना दिया है कि जो आदमी जितने व्यक्तियों को साक्षर बनायेगा उतने ही वह रुपया बतौर पुरस्कार के पायेगा।

शिक्षा कार्य के दो विभाग कर दिये गये हैं। एक साक्षर बनाना और दूसरे साक्षरता को स्थिर रखना। साक्षर बनाने के लिये उपर्युक्त प्रौढ़ स्कूल खोल दिये हैं। शिक्षा प्रसार प्रौढ़ स्कूलों का समय वही रक्खा गया है जिसमें किसानों को अधिक फुरसत हो। किसान लोग प्राय रात्री के ८ बजे तक फुरसत पाते हैं। अत: प्रौढ़ स्कूलों का समय बहुधा ७ बजे से ६ बजे शाम का ही रक्खा गया है किन्तु यह समय कोई आवश्यक नहीं है यदि वे दोपहरी में पढ़ना चाहें तो दोपहरी में पढ़ सकते हैं। ६ मास की अवधि प्रौढ़ों के शिक्षा के लिये रक्खी गई है। पढ़ाई की योग्यता यू० पी० के तीसरे दरजे के समान रक्खी गई है। पौढ़ स्कूलों की पाठ्य पुस्तकें सरल से सरल रक्खी गई हैं। ६ मास की अवधि के पश्चात जिले के डिप्टी इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स इन शिक्षार्थियों

मनाये जाते हैं। विराट प्रोशेसन निकलते हैं। सभाओं का आयोजन होता है जिसमें बड़े बड़े विद्वानों के व्याख्यान होते हैं। जिसमें जनता में निरक्षरता के प्रति घृणा के भाव भरे जाते हैं और साक्षरता के प्रति प्रेम भाव भरे जाते हैं। साक्षरता प्रसार सभायें बिला किसी भेद भाव के सम्पन्न होती हैं। बहुत से मनुष्य निरक्षरता नाश की प्रतिज्ञा लेते हैं। प्रतिज्ञा-पत्र भरते हैं जिसके अनुसार कम से कम प्रत्येक व्यक्ति को एक व्यक्ति को साक्षर बनाने की शपथ ली जाती है।

साक्षरता प्रसार की पवित्र योजना को प० मदनमोहन मालवीय ने आशीर्वाद दी है। प० जवाहरलाल ने इस योजना को परमोपयोगी बतलाया है। प० गोविन्दवल्लभ पन्थ ने इस योजना की मङ्गल कामना चाही है। बाबू सम्पूर्णानन्द के पवित्र मस्तिष्क की तो यह खोज ही है जिन्होंने इस आन्दोलन को इतना सविस्तार व्यापक रूप दिया है।

सभ्य राष्ट्रों का आन्दोलन जब तक सफल नहीं हो सकता तब तक जनता उसमें हार्दिक दिलचस्पी नहीं लेती। हाँ, आर्थिक कठिनाइयों के कारण प्रस्तुत आन्दोलन अधिक विकसित नहीं हो सकता। अतः प्रत्येक भारतीय व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह इस पवित्र कार्य में अपना हाथ बटाये और इस योजना को सफल बनाने में पूरा सहयोग दे। सभ्य राष्ट्र अपने देश की सेवा के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर रहे हैं। फिर क्यों हमारे प्रान्त के शिक्षित लोग अपने भाइयों को शिक्षित बनाने में सङ्कोच करेंगे? अन्त में कहना यही है कि जो ज्योति जगाई गई है उसमें शिक्षित वर्ग के सहयोग की बड़ी आवश्यकता है, यदि शिक्षित वर्ग इस योजना को सहायता पहुँचायेगा तो निस्सन्देह एक दिन हमारा समस्त

देश दिशा के प्रकाश से देदीप्यमान हो जायगा और संसार उसको आश्चर्य की दृष्टि से देखेगा।

ऋतुराज-वसन्त

विचार-तालिकायें —

(१) प्रस्तावना—शिशिर ऋतु की समाप्ति पर वसन्त आगमन और प्रकृति की अवस्था।

(२) वसन्त में वन उपवनों की शोभा।

(३) वसन्त का मनुष्य के हृदय पर प्रभाव।

(४) होलिकोत्सव और ग्रामीण समाज पर वसन्त का प्रभाव।

(५) वसन्त और कवि।

(६) उपसंहार—सारांश।

कूलन में केलिन कछारन में कुंजन में
क्यारिन में कलित कलीन किलकन्त है।
कहै 'पद्माकर' परागन में पौनहू में
पातन में पीकन पलासन पगन्त है॥
द्वार में दिसान में दुनी में देस देसन में
देखो दीप दीपन में दीपत दिगन्त है।
बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में,
बनन में बागन में बगरयो बसन्त है॥

शिशिर की सर्दी से ठिठुरी हुई प्रकृति ने एक अँगड़ाई ली और जगत को एक नवीन स्फूर्ति का अनुभव होने लगा। शीत की कँपकपाहट

का अन्त हो गया। पशु पक्षियों का भय दूर हो गया। वृक्ष लतादि आनन्दित हो, पल्लवित होकर खिलने लगे। कोयल मतवाली हो गई। उसने अपना मस्ताना राग अलापना आरम्भ कर दिया। दक्षिण पवन अपनी मधुर मतवाली चाल से चलने लगा। वृक्ष और पौधों ने नवीन पत्तियों से अपना शरीर ढक लिया और वह ऋतुराज वसन्त के स्वागत में फूलों के उपहार लेकर खड़े हो गये। आम मञ्जरियां अपने प्रीतम वसन्त को आता देखकर प्रेम में पुलकायमान हो गई और पुलकावलि के मिस इधर उधर झूमने लगीं। वन उपवन पुष्पों के हार ले लेकर ऋतुराज वसन्त के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। सूर्य ने भी अब अपनी तिरछी चाल छोड़ दी और वे अब उत्तरायण हो गये और सीधे सिर पर आने लगे। जाड़ा वसन्त का आगमन सुन हिमालय की चोटियों पर जा छिपा। वसन्त का भी बाल्यकाल समाप्त हो गया। वह चञ्चल गति से इधर उधर दौड़ता फिरता है। दक्षिण पवन पुष्पों से पराग का सौरभ लेकर वसन्त के शरीर पर उबटन करती फिरती है। सूर्य की किरनें पीली हो गई हैं। खेतों में पीली पीली सरसों फूल रही है। वन उपवन विविध प्रकार के पुष्पों से लदे चित्रकार की चित्रशाला दिखलाई पड़ रहे हैं।

प्रकृति का रूप अनुपम है। चारों ओर आनन्द ही आनन्द उमड़ित हो रहा है। बौरे आमों की सुगन्ध ने भौंरों को उन्मत्त बना डाला है। वह उन्मत्त हो फूल फूल पर भागे फिर रहे हैं। तनिक प्रकृति के मनोज्ञ आँगन का तो अवलोकन कीजिये! कैसा आकर्षक और कैसा उन्मादकारी दृश्य है? विकस्वित कुसुम हृदय को आकर्षित कर रहे हैं। समस्त वन-

हृदय के उल्लास को प्रदर्शित कर रहे हैं। शीतल, सुगन्धित पवन अपनी मधुर गति से चलकर जीवधारियों पर अपना प्रभाव डाल रहा है। चन्द्रमा प्रकृति की इस उन्मादकारिणी छटा को अवलोकन कर निराली सजधज के साथ उदय हो रहे हैं। चन्द्र की चटकीली छटा अपनी प्यारी प्रेयसी प्रकृति के अवलोकन से दूनी हो गई है। आमा से लिपटी सुहाग-गर्वीली मालती-लता ऐसी फूली है कि उसके पत्ते तक नहीं दिखलाई पड़ते। उधर गुलाब की नई सुन्दर कलियों पर भौंरो के झुण्ड के झुण्ड आ आ कर गिर रहे हैं और न जाने क्या सोचते हुये गुलाब की नुकीली कलियों पर गुनगुनाते फिरते हैं? शायद वह गुलाब की मादकता ढूंढते हो। अहा! तनिक मधुकरों की मधुर तान को तो श्रवण कीजिये, कैसा हृदयाकर्षक स्वर है? मोहन की मोहनी वंशी के मधुर स्वर को भी मात कर रहा है। गुलाब के तीक्ष्ण कांटे बेचारे मधुकरों को शङ्कर जी के त्रिशूल से भी अधिक दुखदाई हो रहे हैं। प्रेमातिरेक के वशीभूत प्रेमी मधुकर प्राणों की चिन्ता न करके त्रिशूल रूपधारी कांटों के चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं। अपने अनन्य प्रेमी की ऐसी तल्लीनता देख गुलाब भी अपने प्रेम को न छुपा सके और खिलखिलाते चेहरे से अपना विशाल हृदय अपने प्रेमास्पद के आलिङ्गन के लिये खोल दिया, अहा! कैसा मनोहारी दृश्य है?

इस सहज सुहावनी ऋतु के आते ही मानव-हृदय की तो बात ही क्या पूछते हो? मानव-हृदय हर्षातिरेक के वशीभूत हो बांसो उछलने लगता है। सबके हृदय में एक नई प्रकार की अमानवीय स्फूर्ति का अनुभव होने लगा है, न जाने क्यों? मानव-हृदय किसी दूसरे साथी के

खिले दिखाई लगते हैं। उसके हृदय में एक उमंग सी उठती है। उस फूले हुये वन वाटिका में चारों तरफ कुसुम धनुधारी की मन्मथ की ना ही आभास दृष्टिगोचर होता है। शीतल सुगन्धित पवन रंग-बिरंग कुसुम भौरों की गुंजार आम्र-मञ्जरियों की महँक, कोयल की मनोहारी कूक मानव-हृदय में उथल-पुथल मचाये बिना रह जाय यह कब सम्भव है? इस समय हृदय पर विजय पाना क्या साधारण काम है? इस समय वह अपने हृदय की उमंगों को नहीं रोक सकता। उसे चारों तरफ वसन्त ही वसन्त नजर आता है। दिशा में वसन्त, बागों में वसन्त, खेतों में वसन्त, यहाँ तक कि वसन्त की अद्भुत छटा ने मानव-हृदय को निनादित कर दिया है। उत्सुकता और उल्लास में ऐसा तन्मय हो गया है कि उसे आत्म स्मृति का भी ध्यान नहीं रहा। उसकी भावनायें और आत्म-विस्मृति अनेक रूपों के रूप में फूट निकलती हैं। कभी गाता है कभी गुनगुनाता है कभी उत्सव मनाता है और कभी भाव विभोर होकर नाचने लगता है।

वसन्त का स्वागत मानव-समाज वसन्त-पञ्चमी ही से आरम्भ कर देता है। इस ऋतु का सर्वोत्तम त्यौहार होली है। मानव-हृदय में वसन्त पञ्चमी ही से आनन्द की तरंगें तरंगित हो उठती हैं। यह तरंगें होली आते आते चरम सीमा को पहुँच जाती हैं। कोई गाता है कोई बजाता है। बालक, युवा और वृद्ध सब कोटि के लोग विविध प्रकार के खेलों में मस्त हो जाते हैं। स्थान-स्थान पर नाच गाना और तमाशों की आयोजना हो उठती है। चारों तरफ फाग की आँधी उमड़ पड़ती है। रंग और गुलाल की वर्षा होने लगती है। जिधर देखो उधर हर

मानव-समाज प्रकृति के रङ्ग में रँगा हुआ दृष्टिगोचर होता है। तनिक महिला-समाज की ओर भी दृष्टिपात कीजिये, वसन्ती वस्त्रा से सुसज्जित कैसी फाग के गीतों में मतवाली हो रही हैं। पुरुष गुलाल और रङ्ग की वर्षा करते फिरते हैं। पिचकारियां चल रही हैं। रङ्ग से कपड़े भीग गये हैं। सारा शरीर तरबतर हो रहा है। हँसी और मुस्कराहट फैल रही है। गलियों में, हाट में, चौराहों और बाजारों में टोल के टोल मनुष्य एकत्र हैं। सङ्गीत छिड़ रहा है। समा बँध रहा है। राग अलापे जा रहे हैं। इस आनन्दोल्लास को कोई किसी दृष्टि से क्यों न देखे ; किन्तु मैं तो यही कहूँगा कि प्रकृति के उन्माद से उन्मत्त होना स्वाभाविक है। वसन्त ऋतु में जब प्रकृति अपने सौन्दर्य में मर्यादा को उल्लङ्घन कर जाती है तो मनुष्य की वासना में क्यों न आलोकित हो उठे ?

वसन्त ऋतु सबसे अधिक स्निग्ध ऋतु है। फूल पत्तों से लेकर समस्त प्राणियों में स्निग्धता बरसाने लगती है। अतः यह ऋतु स्वास्थ्य सुधार के लिये अति उत्तम है। इस ऋतु में प्रातःकाल का घूमना बड़ा लाभदायक होता है। जो लोग इस ऋतु के अधिक समीप रहते हैं, उन्हें समस्त वर्ष शारीरिक व्याधि नहीं लगती। इस ऋतु में भ्रमण ही पथ्य कहा गया है।

वसन्त ऋतु कवियों के हृदय में आनन्द की तरंगें उत्पन्न करती है। कवि-हृदय प्रकृति की छटा को देखकर आनन्द से विभोर हो जाते हैं और प्रकृति के स्वर में स्वर मिलाकर मानव-हृदयों को आकर्षित करने वाला राग छेड़ते हैं। उनकी सुकृतियां मानव-हृदय में लोकोत्तर आनन्द उत्पन्न करती हैं।

भावनाओं का उदय होता है, मस्तिष्क में स्फूर्ति आती है, दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है।

(५) शीतल मन्द, सुगन्धित पवन का रसास्वाद।

(६) हरी घास, वृक्षलतादि का विकास।

(७) प्रातःकाल और कवि-हृदय।

चन्द्रदेव ने ऊषा को आकाश में अपना प्रतिनिधि छोड़ा। भगवान भास्कर के आगमन के स्वागत में दिशायें अनुपम सौन्दर्य से सुसज्जित हो गई। पक्षियों का कल-गान स्वागत दुन्दुभी सा सुनाई पड़ने लगा। विकसित कुसुमों का सौरभ शीतल समीर के साथ मिलकर स्वागत के कार्य में सलग्न हो गया। चतुर्दिक एक नवीन स्फूर्ति का सञ्चार होने लगा। फूल प्रसन्नता से फूल उठे। ओस-बिन्दुओं ने गुल्मलतादि पर अपना अनोखा सौन्दर्य न्यौछावर कर दिया। जिधर देखो उधर वसन्त सा खिल रहा है।

प्रकृति अरुण साड़ी पहन कर इठलाती फिरती है। उसने कमलों से ही जा छेड़खानी करदी। कमल प्रेमी का कमल स्पर्श पा खिलखिला कर हँस पड़े। भौंरे भी अपने हृदय पर क़ाबू न रख सके, उन्होंने भी फूल फूल का रसास्वादन आरम्भ कर दिया और अपनी वह मधुर बासुरी बजाई कि समस्त वन उपवन गुञ्जायमान हो गया। पक्षियों से भी अपने हृदय का भाव न रुक सका, वह गला फाड़ फाड़ कर कल-गान में तत्पर हो गये। रसाल की डाल पर बैठी कोकिल ने वह पञ्चम स्वर में राग छेड़ा कि सारी अमराइया मस्त होकर झूमने लगीं। मयूरों की मधुर ध्वनि से आकाश गूँज उठा। जिधर देखो उधर प्रकृति का अभिनय

प्रात काल की वायु को, सेवन करत सुजान।
ताते मुख छवि बढ़त है, बुद्धि होत बलवान ॥

एक लोकोक्ति है कि— जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को धनी, निरोग और बुद्धिमान बनाता है। सब प्रकार से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह सदैव अपने जीवन की रक्षा के निमित्त ब्राह्म-मुहूर्त में उठकर खुली वायु में पर्यटन करे और शुद्ध भाव के लिये भगवान का भजन करे।

पर्यटन के अभ्यासियों से आलस्य भी स्वयं ही भागता है। जो मनुष्य आलस्य की दासता करता है आलस्य उस पर उतना ही प्रभाव जमाता है। प्रातःकाल उठते समय दो प्रकार की प्रवृत्तियों में युद्ध होता है। एक साहसिक मनोवृत्तियाँ जो मनुष्य को उठने को बार-बार बाध्य करती हैं और दूसरी आलस्यिक मनोवृत्तियाँ जो बार-बार रजाई में से न निकलने को विवश करती हैं। हमें चाहिये कि हम साहसिक मनोवृत्तियों को आगे बढ़ने का अवसर दें। जो व्यक्ति इस समय आलस्य पर विजय प्राप्त कर लेता है वह दिन भर के लिये विजयी हो जाता है। मनुष्य जब तक चारपाई पर पड़ा रहता है तब तक आलस्य का आकर्षण रहता है। यदि उसने चारपाई त्यागी तब उसको बाहर का सौन्दर्य अधिक अच्छा लगने लगता है।

प्रातः पर्यटन से मनुष्य के धार्मिक भावों की अभिवृद्धि होती है। प्रकृति की शोभा के अवलोकन का ध्यान ईश्वर की महिमा की ओर आकर्षित हो जाता है। वह भगवान का गुणगान करने लगता है। धार्मिक ग्रन्थों में प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्त में उठना बड़ा उत्तम बताया है।

नियमित रूप से प्रात पर्यटन करने से मनुष्य को दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और नैतिक समस्त शक्तियों का विकास पर्यटन से होता है। निष्कर्ष यह है कि मनुष्य जीवन की पूर्णता प्रातः पर्यटन से प्राप्त होती है। अत मनुष्य को अपनी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति करने के लिये पर्यटन अवश्य करना चाहिये। पर्यटन करने मे व्यर्थ की बाते न करना चाहिये। घूमते समय यदि मनुष्य अकेला हो तो बहुत ही उत्तम है। पर्यटन के समय सांसारिक चिन्ताओं को मस्तिष्क से बाहर निकाल देना चाहिये। यदि ऐसे मनोरम प्रभात में तुम्हारी मनोवृत्तियां तुम्हें अधिक दुःख दें तो तुम अपनी वृत्ति को प्रकृति के सौन्दर्य के अवलोकन में लगा दो। बस मस्तिष्क आनन्द से भर जायगा। पर्यटन का उपयुक्त समय सूर्योदय से पहिले ही है। अपनी यात्रा को सूर्योदय से पहिले ही समाप्त कर दो। मन में किसी चिन्ता को स्थान न दो। अपनी भावनाओं और वासनाओं को पवित्र रक्खो। प्रकृति के विकसित कुसुमों में, लहलहाते पादप पुञ्जों में, तुषाराच्छादित हरी घास और गुल्म लतादि में भगवान की अनुपम छटा का अवलोकन करो, यही मानव जीवन का सर्वोच्च ध्येय है।

किसी जाति के उन्नति के साधन

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—परतन्त्र जातियाँ उन्नति नहीं कर सकतीं।

(२) बहादुर जातियाँ परतन्त्रता को अधिक काल तक अपने ऊपर बरदाश्त नहीं कर सकतीं।

हो रहा है। समस्त दिशाओं में आनन्द और प्रसन्नता का एक मात्र साम्राज्य है।

प्रकृति के ऐसे मनोरम समय में जो आनन्द लूटते हैं वही पुण्य धन्य हैं। जो लोग सूर्योदय से पहले ब्राह्म बेला में उठकर प्रकृति के इस अमूल्य समय का लाभ उठाते हैं वही वास्तव में लौकिक आनन्द को उपलब्ध करते हैं। 'जागे सो पावे जागे सो पावे' निस्सन्देह प्रकृति की इस अपरिमित देन से वही लोग लाभ उठा सकते हैं जो बहुत जल्दी उठने के अभ्यस्त हैं। प्रकृति की प्रसन्नता मानव-अवयवों पर संक्रामक रोग की भांति शीघ्र प्रभाव डालने वाली होती है। प्रातःकाल प्रकृति के निकट सम्पर्क में आने से मनुष्य शरीर में फूलों का सा हल्कापन चिड़ियों की सी स्वच्छन्दता और प्रकृति की सी प्रसन्नता आ जाती है। हमारा हृदय उत्साह से भर जाता है और दिन भर काम करने की स्फूर्ति आ जाती है।

शहर और गाँव का वातावरण मनुष्यों, पशुओं, कारखानों आदि के कारण प्रायः गन्दा हो जाता है। नालियों पाखानों और खाद्य-पदार्थ के कारण हमारे नित्य रहने सहने के कमरे और मकान की वायु भी विषैली हो जाती है। अतः हम विषैली वायु से बचकर बाहर, में स्वास्थ्यप्रद वायु सेवन करने को जाते हैं। प्रातःकालीन वायु सेवन से हमारा रक्त शुद्ध हो जाता है और उसमें रक्त-कोषाणुओं की वृद्धि होती है। इस खुली हवा में धूलि अथवा अन्य प्रकार के विकारी कण वायु में नहीं होते। यह वायु पूर्ण लाभदायक होता है। इस समय प्रकृति शान्त होती है। शान्त प्रकृति की पवित्र वायु जीवन के लिये बड़ी आरोग्यप्रद

होती है, टहलने में यह ध्यान रखना चाहिये कि घूमने की गति जितनी ही अधिक होगी उतनी ही वह अङ्ग-प्रत्यङ्गो को अधिक बल देने वाली होगी।

प्रातःकाल घूमने से हमारी इन्द्रियो को प्रकृति का साहचर्य प्राप्त होता है जिससे उन्हें पूर्ण तृप्ति प्राप्त होती है। कोमल भावनाओ का उदय होता है। दिन भर काम करने के लिये हमारा हृदय आनन्द से भर जाता है। पर्यटन करने से शारीरिक अवयवों को पर्याप्त सख्या में हिलना जुलना पड़ता है। इस कारण अजीर्णादि रोग जो हमारे जीवन को निकम्मा बना देते हैं पास तक नहीं आते। मस्तिष्क में एक नवीन स्फूर्ति का अभ्युदय होता है और शरीर बड़े से बड़े काम करने के योग्य तैयार हो जाता है। हृदय की गति ठीक हो जाती है। धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को उत्तेजना मिलती है।

प्रातःकालीन पर्यटन से लोग प्रकृति से पूरा साहचर्य प्राप्त कर लेते हैं। वह प्रकृति के प्रत्येक अङ्ग-प्रत्यङ्ग से परिचित हो जाते हैं। पशु पक्षियों के जीवन का ज्ञान हो जाता है। प्रकृति की स्वच्छन्दता को देखकर मानवी हृदय में भी स्वतन्त्रता की भावना उत्तेजित हो उठती है। प्रकृति की सौम्य प्रकृति को देखकर मन में सरलता के भाव भर जाते हैं। तेज चलने से गम्भीर विचार-धारा छूट जाती है और रक्त का दबाव मस्तिष्क पर कम हो जाता है जिसके कारण मस्तिष्क में हल्कापन आ जाता है।

मस्तिष्क को शान्ति मिल जाने के कारण उसकी विचार-धारा बहुत बढ़ जाती है। बुद्धि तीव्रतर कार्य करने लगती है। मुख की कान्ति बढ़ जाती है—

प्रात काल की वायु को, सेवन करत सुजान।
तासे मुख छवि बढ़त है बुद्धि होत बलवान॥

एक लोकोक्ति है कि—"जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्यों को धनी, निरोग और बुद्धिमान बनाता है। भाव प्रकाश में कहा गया है कि स्वस्थ मनुष्य का कर्तव्य है कि वह सदैव अपने जीवन की रक्षा के निमित्त ब्राह्म-मुहूर्त में उठकर खुली वायु में पर्यटन करे और दुःख नाश के लिये भगवान का भजन करे।

पर्यटन के अभ्यासियों से आलस्य भी डरा करता है। जो मनुष्य आलस्य की दासता करता है आलस्य उस पर उतना ही प्रभाव जमाता है। प्रातः काल उठते समय दो प्रकार की मनोवृत्तियों में युद्ध होता है। एक सात्विक मनोवृत्ति जो मनुष्य को उठने को बार-बार बाध्य करती है और दूसरी तामसिक मनोवृत्ति जो बार-बार रजाई में से न निकलने को विवश करती है। हमें चाहिये कि हम सात्विक मनोवृत्ति को आगे बढ़ने का अवसर दें। जो व्यक्ति इस समय आलस्य पर विजय प्राप्त कर लेता है वह दिन भर के लिये विजयी हो जाता है। मनुष्य जब तक चारपाई पर पड़ा रहता है तब तक अन्धकार का आभास रहता है। ज्यों ही उसने चारपाई त्यागी बस उसको बाहर का सौन्दर्य अधिक अच्छा लगने लगता है।

प्रातः पर्यटन से मनुष्य के धार्मिक भावों की अभिवृद्धि होती है। प्रकृति की शोभा के अवलोकन का ध्यान ईश्वर की महिमा की ओर आकर्षित हो जाता है। वह भगवान का गुणगान करने लगता है। धार्मिक ग्रन्थों में प्रातः काल ब्राह्म-मुहूर्त में उठना बड़ा उत्तम बताया है।

नियमित रूप से प्रातः पर्यटन करने से मनुष्य को दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और नैतिक समस्त शक्तियों का विकास पर्यटन से होता है। निष्कर्ष यह है कि मनुष्य जीवन की पूर्णता प्रातः पर्यटन से प्राप्त होती है। अतः मनुष्य को अपनी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति करने के लिये पर्यटन अवश्य करना चाहिये। पर्यटन करने में व्यर्थ की बातें न करना चाहिये। घूमते समय यदि मनुष्य अकेला हो तो बहुत ही उत्तम है। पर्यटन के समय सांसारिक चिन्ताओं को मस्तिष्क से बाहर निकाल देना चाहिये। यदि ऐसे मनोरम प्रभात में तुम्हारी मनोवृत्तियाँ तुम्हें अधिक दुःख दें तो तुम अपनी वृत्ति को प्रकृति के सौन्दर्य के अवलोकन में लगा दो। बस मस्तिष्क आनन्द से भर जायगा। पर्यटन का उपयुक्त समय सूर्योदय से पहिले ही है। अपनी यात्रा को सूर्योदय से पहिले ही समाप्त कर दो। मन में किसी चिन्ता को स्थान न दो। अपनी भावनाओं और वासनाओं को पवित्र रक्खो। प्रकृति के विकसित कुसुमों में, लहलहाते पादप पुञ्जों में, तुषाराच्छादित हरी घास और गुल्म लतादि में भगवान की अनुपम छटा का अवलोकन करो, यही मानव जीवन का सर्वोच्च ध्येय है।

किसी जाति के उन्नति के साधन

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—परतंत्र जातियाँ उन्नति नहीं कर सकतीं।

(२) बहादुर जातियाँ परतंत्रता को अधिक काल तक अपने ऊपर बरदाश्त नहीं कर सकतीं।

(३) उन्नति के साधन—

शिक्षा का प्रचार, पारस्परिक प्रेम, देशाटन, मनोरञ्जन के साधनों की वृद्धि, कुरीति-निवारण, व्यावहारिक शिक्षा और कला-कौशल की वृद्धि, समाज में प्रेम और सहानुभूति।

(४) उपसंहार—हमारी वर्तमान दशा और हमारा कर्तव्य।

आज संसार की जातियों में प्रतियोगिता का युद्ध छिड़ा हुआ है। प्रत्येक जाति और राष्ट्र उन्नति के मार्ग में अग्रसर हो रहे हैं। जातियों की यह घुड़दौड़ केवल राजनीति और विज्ञान तक ही परिमित नहीं है वरन् व्यापार, शिक्षा, आविष्कार और संस्कृति को उन्नत करने में अग्रसर दृष्टिगोचर हो रही है। कोई व्यक्ति किसी बात में भी किसी जाति से पीछे रहना नहीं चाहती। यह बात स्वाभाविक है कि इस उन्नति में स्वार्थ प्रधानता की भावनायें अग्रसर हो जाती हैं क्योंकि राष्ट्रों को अपने-अपने राष्ट्रों के उत्थान देने ही की चिन्ता रहती है। राष्ट्रोन्नति की दौड़ में प्रत्येक समाज और व्यक्ति को दौड़ना चाहिये। जो जातियाँ राष्ट्रोन्नति के मार्ग में अग्रसर नहीं होतीं उनको पतित-राष्ट्रों की उपाधियों से विभूषित किया जाता है। ऐसी ही क्रियाशील जातियाँ कालान्तर में अपना अस्तित्व मिटा देती हैं। संसार में दासता बड़ा पाप, रोग और कलङ्क है। संसार में पराधीन होकर जीवित रहने की अपेक्षा स्वतन्त्र होकर मरना उत्तम है।

पराधीन होकर सुख है जीना है मरना अच्छा स्वतंत्र होकर।
जो दास होकर मिले स्वर्ग में सुस्वादु भोजन तो तुच्छ है सब,
सदैव उत्पात करके रण में, विचरना अच्छा है स्वतंत्र होकर॥

पराधीन देशों का जीवन ऐसा ही है जैसा बालक, वृद्ध और अपाहिजों का होता है। जैसे बालक, वृद्ध और अपाहिज सदैव दूसरों का आश्रय तकते रहते हैं, ठीक यही दशा उन देशों और जातियों की है जो पराधीन होकर अपना जीवन यापन कर रही हैं। दास राष्ट्र कभी ऊँचा सिर नहीं कर सकते। सदैव उनको अपना जीवन पराधीन, नपुंसक और निर्जीव रखना पड़ता है। पराधीन जाति को विजेता की उँगलियों के इशारे पर नाचना पड़ता है। वह निर्जीव राष्ट्र कठपुतली की भांति अपना सारा कार्य सम्पादन करता है। विजेता जाति पराधीन जाति की भावनाओं को ऐसा कुचल देती है कि वह कभी स्वतन्त्र भावना का विचार भी न कर सके। शूरवीर और साहसी जातियाँ अपने ऊपर गुलामी के तौक़ को अधिक काल तक नहीं धारण कर सकतीं। वह अपने साहस के बल पर सङ्गठन करके पराधीनता की जञ्जीरों को काटने का शीघ्र प्रयत्न करती हैं और अपनी दासता के कलङ्क को शीघ्र धो डालती हैं। जर्मन और जापान जातियों को देखिये इन जातियों ने कैसी उन्नति करली है? सारे संसार पर उनका सिक्का बैठा हुआ है। निस्सन्देह संसार में वही जातियाँ उन्नति के शिखर पर विराजती हैं जिनका सङ्गठन, प्रेम, साहस और त्याग ऊँचे दरजे का होता है। अब यह प्रश्न बनता है कि ऐसे कौन-कौन साधन हैं जिनके आधार पर चलने पर अवनत राष्ट्र उन्नत हो सकते हैं?

पतित राष्ट्रों को उठने के लिये सबसे प्रथम आवश्यक है कि वह शिक्षित बनाया जाय, क्योंकि बिना शिक्षा के समाज में विचार-शक्ति नहीं बढ़ती। विचार-शक्ति के बिना कोई कठिन समस्याओं को हल करने

में समर्थ नहीं होता। यह सब जानते और मानते हैं कि शिक्षा के बिना राष्ट्र में जागृति नहीं होती और न जाति में से कूप मण्डूकता के भाव दूर होते हैं। अशिक्षित जातियों का जीवन पशुओं का सा जीवन है। उन्हें अपना ही ज्ञान नहीं होता वह उन्नति को क्या समझेंगी? अतः राष्ट्रोन्नति के साधनों में से सबसे उत्तम साधन शिक्षा है। बिना शिक्षा के कोई जाति अपना खोया हुआ अस्तित्व नहीं पा सकती।

शिक्षा के बाद किसी देश को उन्नत बनाने के लिये कला कौशल को उन्नति देना और उद्योग धन्धों को जीवित करना है। दस्तकारी से जाति की आर्थिक अवस्था सुधरती है। अन्य जातियों का धन बहुर बहुर कर दस्तकार जाति के घर आ जाता है। दस्तकार जाति धनधान्य से पूर्ण हो जाती है। आज संसार में वही जाति अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं जिन्होंने नाना प्रकार के उद्योग-धन्धों से अपने आप को समृद्ध बना लिया है। कला-कौशल का विकास समाज में जब तक सम्भव नहीं तब तक समाज में एकता संगठन और सहयोग के भाव जाग्रत न हों। समाज में एकता सहयोग और संगठन के बिना अपनी अपनी डफली और अपना-अपना राग अलापने की प्रवृत्ति बनी रहती है। ऐसी प्रवृत्ति समाज में संघर्ष को जन्म देती है। संघर्ष में समाज की समस्त शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं। अतः ऐसी परिस्थिति में सामाजिकोन्नति हो ही नहीं सकती।

तीसरी बात जो राष्ट्रोन्नति में सहायता पहुँचाती है वह राष्ट्र की पर्यटन प्रियता है। पर्यटन प्रिय जाति साहसी वीर और अध्ययनशील होती है। वह विविध जातियों के सम्पर्क में आती है। वहाँ की विविध प्रकार की कला-कौशल का अवलोकन करती है और उनको अपनी जाति

परिचय बढ़ाती है। परिचय से ज्ञान प्राप्त कर उसे अपने देश में प्रचार करती है और देश को कला-कौशल और अनेक प्रकार के उद्योग धन्धों से परिपूर्ण करती है। इसके विपरीत आचरण करने वाली जातियां अधः पतित हो जाती हैं। उनका जीवन नपुंसक जीवन रहता है। वह संसार की इतर जातियों के समक्ष अपना अस्तित्व कुछ नहीं रख सकतीं।

किसी राष्ट्र को उन्नत बनाने का साधन यह भी है कि समाज में सब व्यक्ति मिलजुल कर रहते हों, उनमें ईर्षा, द्वेष और फूट के भाव न हों। मिलजुल कर रहने और पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति रखने से समाज में अपरमित बल आ जाता है। अत हमें आवश्यक है कि हम समाज में समानता के भावों का उदय करें, क्योंकि जब समाज में समानता के भावों का समावेश किया जायगा तब समाज में से ऊँच नीच के भाव स्वयं मिट जायगे और समाज में प्रेम का संचार हो जायगा। प्रेम के उदय हो जाने से समाज में शान्ति का साम्राज्य स्थापित होने में कोई देर न लगेगी।

समाज का पतन और नाश की ओर ले जाने वाली समाज में उत्पन्न हुई कुरीतियां हैं। कुरीतियां समाज में दुःख, क्लेश और अव्यवस्था को जन्म देती हैं। कुरीतियों से समाज की शक्ति का नाश हो जाता है। अत जब तक समाज में से कुरीतियों का नाश न किया जायगा तब तक समाज उन्नति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता। अत प्रत्येक राष्ट्रोन्नति के इच्छुक को चाहिये कि वह अपने देश में से कुरीतियों का निवारण करे तब ही उसका समाज उन्नत होगा अन्यथा नहीं।

समाज में स्वच्छता और मनरञ्जन के साधनों का आविर्भाव करना

भी सामाजिकोन्नति में सहायता करता है। समाज में स्वच्छता की भावना तब ही पनप सकती है जब व्यक्तियों में सेवा भाव जाग्रत हो। सेवा-भाव के अभाव में केवल व्यक्तिगत स्वच्छता का भाव रहता है। ये मनोरञ्जन के साधन यह तो बिना सहयोग के सम्भव हो ही नहीं सकते। पुस्तकालय भवन वाचनालय, संगीत भवन मन्दिर, समाज आदि जहाँ पर जनता का मनोरञ्जन होता है प्रेम और सहानुभूति के ही कारण उदय होते हैं। इस कार्य के लिये सेवा-समितियाँ मनोरञ्जक संस्थाओं को प्रचार देने से बहुत कुछ उन्नति हो सकती है।

देश को उन्नति-पथ पर ले जाने का सबसे मुख्य साधन सच्चरित्रता है। चरित्र में अपार शक्ति है, अपरिमित ऐश्वर्य है। जातीय जीवन में सच्चरित्रता का बड़ा मान है। जिस जाति में सच्चरित्रता का मान है आज्ञा पालन की भावना है, बड़ों के प्रति आदर के भाव हैं गुरुजनों और विद्वानों का आदर किया जाता है, भलाई करने वालों के प्रति कृतज्ञता की भावनाएँ बनी रहती हैं नीति की मर्यादाओं का कभी उल्लंघन नहीं किया जाता वह समाज संसार में अपना ऊँचा आदर्श रक्खे बिना नहीं रह सकती। किसी राष्ट्र को उन्नति प्राप्त करने के लिये सच्चरित्रता बुनियादी काम करने वाली वस्तु है। अतः आवश्यक है कि समाज में सच्चरित्रता की भावनाएँ भरपूर हों नीच और संकुचित भावनाएँ न हों।

देश के अभ्युदय के लिये एक बात और करनी शेष है कि देश में सहयोग और सङ्गठन कैसे रक्खे जा सकें। सङ्गठित जातियाँ ही संसार में अपना अस्तित्व स्थिर रख सकती हैं। असङ्गठित जातियाँ सदैव पद-दलित आक्रान्त और गुलाम रहती हैं। वह कभी उन्नति के पथ पर चलने को

समर्थ नहीं हो सकती। जिस जाति में सङ्गठन की कमी होती है वह कभी ऊँची नहीं उठ सकती। वह सदैव अधोगति के गर्त में पड़ी रहती है। हमारी अधोगति के नमूने नित्य आप देख रहे हैं।

अन्त में हम यही कहेंगे कि उपर्युक्त साधनों पर चलकर देश उन्नति के मार्ग में अग्रसर हो सकते हैं। हमें चाहिये कि हम अपने देश में उन्नति के साधनों को जुटायें। शिक्षा और दस्तकारी का प्रचार करें। कुरीतियों को समूल नष्ट करें। प्रेम और एकता को बढ़ायें। सच्चरित्रता को स्थान दें। तब ही हमारा देश अधोगति के गर्त से निकल सकता है। दरिद्रता और धार्मिक प्रवृति ने भी कुछ राष्ट्रोन्नति में बाधा डाल रक्खी है उन्हें भी जहा तक सम्भव हो दूर करने की चेष्टा करें, कुरीतियों को बन्द करें। अछूतों से प्रेम करें। राष्ट्रनाशिनी फूट को अपने देश मे फलने फूलने न दें, तब ही देश ~न्नति का आनन्द उपभोग कर सकते हैं।

शिक्षा और आचरण

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना - शिक्षा का उद्देश्य।
(२) शिक्षा और मानसिक विकास।
(३) आचरण और आत्मिक-शक्ति।
(४) क्या वर्तमान शिक्षा प्रणाली आचरण को पुष्ट करती है?
(५) शिक्षा से ज्ञान प्राप्ति।
(६) शिक्षा और सार्वजनिक जीवन।
(७) शिक्षा और आजीविका-उपार्जन की समस्या।

(८) कुछ महापुरुषों के उदाहरण।

(९) आज की परिस्थिति।

(१०) उपसंहार—सारांश।

शिक्षा का उद्देश्य मानवीय शक्तियों को विकसित कर जीवन को सुव्यवस्थित रूप से पूर्ण बनाना है। वस्तुतः शिक्षा मनुष्य को जीवन-संग्राम के लिये तैयार करती है। मनुष्य की प्रतिभा के विकास के तीन क्षेत्र हैं, जिनमें तीन प्रकार की शक्तियाँ विकसित होती हैं। शारीरिक मानसिक और आत्मिक। उसकी सफलता इस बात में है कि तीनों शक्तियों का विकास साथ-साथ हो।

शिक्षा विविध विषयों की पढ़ाई द्वारा मस्तिष्क को प्रौढ़ बनाती है। उसमें शक्ति और बल देती है। जीवन-समस्याओं को सुलझाने के लिये उन्नत मस्तिष्क की कितनी आवश्यकता है इसे सभी जानते हैं। शिक्षित मस्तिष्क मनुष्य को मित्र की भाँति शान्ति और आनन्द देता है। वही कठिन परिस्थिति में हमें मार्ग सुझाता है। हमें बल और साहस प्रदान करता है। वही संसार में ज्ञान का प्रकाश फैलाता है और वही सत्य वस्तु का अनुभव कराता है।

शिक्षा तभी शिक्षा है जब वह हमें सदाचार के पथ पर चलने को अग्रसर करे। मनुष्य का मूल्य उसके धन पर और उपाधियों में नहीं है वरन् उसके सदाचार में है। दम्भ और मक्कारी शिक्षा के अङ्ग नहीं हैं। शिक्षा वह है जिसे प्राप्त करके मनुष्य सच्चरित्र शीलवान और विनयी बने। शील और विनय के बिना साक्षर व्यक्ति भी राक्षस है। मनुष्य का धनार्जन और विद्यार्जन दोनों साधारण हैं किन्तु उनका परिष्कार द्वारा

असाधारण है। संसार मनुष्य का आदर धन, पद और शक्ति के भय से नहीं करता वरञ्च उसके श्रेष्ठ आचरण के कारण करता है। धनी और पदाधिकार का मान स्वार्थ पर अवलम्बित रहता है, किन्तु चरित्र-वान का सम्मान सर्वत्र एकरस और समान होता है। विद्या, धन और शक्ति का बल होते हुए भी रावण संसार का वन्दनीय नहीं हुआ किन्तु राज, सेना और शक्ति के न होने पर भी रामचन्द्र जी की पूजा और मान सर्वत्र हुआ। भगवान बुद्ध सदाचरण के कारण संसार में सर्वमान्य हुए। आज महात्मा गांधी सदाचार के बल पर ही संसार के परम श्रद्धास्पद बने हुए हैं।

वर्तमान शिक्षा केवल हमारी मानसिक शक्तियों को विकसित करती है। वह हमें जीवन संग्राम के लिये तैयार नहीं करती और न आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करती है। यह मनुष्य जीवन को ठोस नहीं बनाती वरञ्च खोखला बनाती है। हमारी वर्तमान शिक्षा हमें यौगिक नियम नहीं सिखाती, न दया और करुणा का मार्ग सुझाती है और न मैत्री के दिव्य गुणों को जाग्रत करती है। यह हमें ऐसे मनुष्य नहीं देती जिनका निश्चय इस्पात का सा दृढ़ हो। अत वर्तमान शिक्षा प्रणाली किसी भी प्रकार से हमारे आचरण को पुष्ट नहीं करती। जितना अधिक सम्भव हो सके उतना ही शीघ्र इस शिक्षा प्रणाली को बदल देना चाहिये। परीक्षा हमें नाना प्रकार के विषयों का ज्ञान कराती है, हमें विविध प्रकार की मनोवृत्तिया ज्ञात होती हैं, विद्वानों की विचार-धारा से परिचय प्राप्त होता है, बड़े २ महापुरुषों के साहित्य अवलोकन का ऐसा ही आनन्द उठा सकते हैं जैसे कि वह मानो हमारे समक्ष ही उपस्थित हैं। सूर और

तुलसी से ऊँचे साहित्यिक, गांधी और जवाहरलाल से राष्ट्रवादी, बुद्ध और ईसा जैसे प्रकाण्ड ज्ञानी हमें शिक्षा द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं।

सदाचार ही मनुष्य-जीवन की सम्पत्ति है। सदाचार के सामने संसार की समस्त विभूतियाँ तुच्छ हैं। एक अँगरेजी कहावत है—"धन चला गया तो कुछ नहीं गया यदि स्वास्थ्य चला गया तो कुछ चला गया और यदि सदाचार चला गया तो सबकुछ चला गया। निस्सन्देह जीवन में आचरण ही मुख्य वस्तु है। 'आचारः परमो धर्मः' अर्थात् सदाचार ही परम धर्म है। यदि हमने सुन्दर साहित्य पढ़ा और उसके अनुकूल आचरण न बनाया तो वह सारी व्यवस्था वैसी ही रही जैसे किसी गधे की पीठ पर चन्दन का भार लाद दिया जिससे वह बोझ से तो मरता रहा किन्तु उसे उससे कुछ लाभ न हुआ। सदाचार का सम्बन्ध हमारे व्यावहारिक जीवन से है। विनय शील उदारता धैर्य और निर्भयता के सिद्धान्तों का पालन करते हुए कर्तव्य-पथ पर डटे रहना ही सदाचार है। विनय शिक्षा का भूषण है। विनय भावनाओं को पवित्र बनाता है। सत्कार क्षमा और विरोधियों पर भी दया प्रदर्शित करना उदारता है। कठिन से कठिन परिस्थिति आने पर भी अपने सिद्धान्त पर डटे रहना धैर्य कहलाता है। भय या लालच के कारण अपने सद् विचारों को छुपाना सदाचार की गिनती में नहीं आता।

शिक्षा समाज की कुरीतियाँ और रूढ़िवाद को मिटाती है। जहाँ शिक्षा का अभाव है वहीं अब तक लोग पुरानी लकीर के फकीर बने हुए हैं। भारतवासी केवल शिक्षा के अभाव के कारण अन्धविश्वासी और प्राचीन प्रथाओं के गुलाम हैं। संसार की समस्त उन्नत जातियाँ शिक्षा के कारण उन्नति के मार्ग में अग्रसर दृष्टिगोचर हो रही हैं।

शिक्षा जहां मानवी-मस्तिष्कों को भोजन प्रदान करती है वहां वह भोजन की समस्याओं को भी हल करती है। संसार की समस्त शिक्षायें भोजन की समस्याओं को सुलझाती हैं किन्तु हतभाग्य से हमारी शिक्षा-प्रणाली हमारी रोटी की समस्या को हल नहीं करती। सभ्य राष्ट्रों की शिक्षा व्यवहारिक उद्योग धन्धों पर अवलम्बित है जिससे वहां बेकार शिक्षित नहीं मिल सकते।

संसार में जितने महापुरुष हुए हैं उनके पीछे उनकी शिक्षा के साथ ही साथ उनका आचरण भी उच्चकोटि का रहा है। आचरण के बल पर वह इतिहास में अपना नाम अमर छोड़ गये हैं। बुद्ध, ईसा और गांधी सब आचरण के मूर्तिमान रूप हैं। आचरण खो देने पर मनुष्य के शब्दों में बल नहीं रहता। अत जीवन की सफलता के लिये राष्ट्र में ऐसी ही शिक्षा की व्यवस्था होना श्रेयस्कर है। यदि ऐसी शिक्षा का प्रबन्ध राष्ट्र न कर सके तो इससे अधिक लज्जा की और क्या बात हो सकती है?

उत्तम शिक्षा मनुष्य के हृदय में आचरण के बीज बोती है। माता-पिता का कहना मानो। बड़ों का आदर करो। सत्य बोलो। जीवों पर दया करो। समाज की व्यवस्था के अनुकूल चलो। यही आचरण मनुष्य को ऊँचा उठाता है।

आचरण बिगड़ा तो मनुष्य जीवन का सर्वस्व नष्ट हो गया, आजकल शिक्षा का उद्देश्य केवल व्यापार है। देश में आज पापाचारी और समाज की मर्यादा को उल्लङ्घन करने वाले बड़े-बड़े शिक्षित ही मिलेंगे। वे समाज का आदर करना नहीं जानते। उनके यहां उच्छृङ्खलता का नाम ही मनुष्यता है। उनमें और पशुओं में भेद नहीं रह गया है।

मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी शिक्षा के साथ अपने आचरण का

भी ठीक रखने का प्रयत्न करे, क्योंकि चरित्र-निर्माण का वास्तविक समय बाल्यकाल ही है। अतः पाठशालाओं में शिक्षा और सदाचार की शिक्षा साथ ही साथ होनी चाहिए। सादा वेशधारी सदाचारी विद्यार्थी फैशनेबिल व्यभिचारी विद्यार्थी से कितना ही गुना अच्छा है। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने सदाचार का दिवाला निकाल रखा है। जहाँ सदाचार निवास करता है वहीं शान्ति निवास करती है।

तात्पर्य यह है कि हमारी शिक्षा ऐसी हो जो हमें जीवन संग्राम के लिये तैयार करे और हमें आध्यात्मिक शान्ति भी प्रदान करे। तब तो शिक्षा का उद्देश्य पूर्ण हो सकता है अन्यथा नहीं।

पुस्तकों के अध्ययन के आनन्द

विचार-तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—मानव जीवन और आनन्द।

(२) पुस्तक मनोरञ्जन का साधन है।

(३) पुस्तक पढ़ने से आत्म संस्कार और आनन्द वृद्धि होती है।

(४) अश्लील साहित्य जीवन का नाश करता है।

(५ पुस्तक सान्त्वना देती है और मित्र से अधिक आनन्द उत्पन्न करती है।

(६) ज्ञान-वृद्धि होती है।

(७) सत्-साहित्य मानव जीवन का उत्तम सम्बल है।

(८) पुस्तक-अध्ययन ही वास्तव में सच्चा आनन्द है।

(९) उपसंहार—पुस्तक-अध्ययन और हमारा कर्तव्य।

मनुष्य को पुस्तकें आपत्तिकाल में सान्त्वना देती हैं। सम्पति काल में आनन्द-वृद्धि करती हैं। मानसिक चिन्ता और क्लान्ति को दूर करती हैं। जीवन-पथ में पग पग पर सुन्दर चेतावनी देती हैं। जीवन की कठिन गुत्थियों को सुलझाती हैं। कुमार्ग पर चलने से रोकती हैं। सदैव सुन्दर और श्रेष्ठ मार्ग का बोध कराती हैं। संसार में जितने आनन्दों की व्याख्या की गई है उनमें से पुस्तक अध्ययन का आनन्द सर्वोपरि है। पुस्तक अध्ययन में दुहरा लाभ है। पुस्तक पढ़ने से आनन्द तो होता ही है साथ ही अनेक उपयोगी शिक्षायें भी सामने आती हैं जिन पर आचरण करने से मानव-जीवन उन्नत बन सकता है।

पुस्तकें मनोरञ्जन तो करती ही हैं, साथ ही चरित्र और आदर्श का भी प्रोग्राम पाठकों के समक्ष उपस्थित करती हैं। कविता, उपन्यास, प्रहसन, कहानी आदि की पुस्तकों से मनोरञ्जन होता है, ऐसी पुस्तकों के लिखे जाने का उद्देश्य भी यही होता है। जनता की अभिरुचि आजकल उपन्यासों की तरफ़ अधिक दिखलाई पड़ रही है। ठीक यही दशा प्रहसन और कहानियों की हो रही है। इससे अधिक मनुष्य को क्या आनन्द हो सकता है कि वह अपने कमरे में बैठा तुलसी, जायसी, हरिश्चन्द्र और प्रेमचन्द जैसे महानुभावों के संसर्ग का लाभ उठाये?

पुस्तकें एक धार्मिक नेता के रूप में हमें चरित्र और शिष्टाचार का पाठ पढ़ाती हैं, हमें सन्मार्ग पर चलने को बाध्य करती हैं, हमारे उथले ज्ञान को गहरा बनाती हैं, हमारी जिज्ञासा-वृत्ति को उत्तेजित करती हैं, कभी ईश्वरी आनन्द के गहरे समुद्र में स्नान कराती हैं, कभी मोह माया के जाल को तोड़कर सच्ची शान्ति का दर्शन कराती हैं, कभी हमें प्रकृति-

वाद और कभी साम्यवाद के सिद्धान्तों से परिचय कराती हैं, कभी विश्व-बन्धुत्व के भावों से सराबोर करती हैं कभी ब्रह्मानन्द के अद्भुत आनन्द का उपभोग कराती हैं। ये हमारे जीवन को पवित्र और उन्नत बनाती हैं। सत्संगति का प्रभाव अचूक होता है यह पहले लिखा जा चुका है। हमारा जितनी ही उत्तम पुस्तकों से साथ होगा, उतना ही हमारा जीवन उत्तम और आदरणीय बनेगा। नैतिक पुस्तकें हमारे आचरण को सुधारती हैं। जब हम धर्मग्रन्थ पढ़ते हैं तब हमारे जीवन पर [illegible] पावन भाव आप पवित्र-कर्म ममता और शिष्टाचार के भाव उदय होते हैं। कबीर साहब के ग्रन्थ हमें सच्चरित्रता की ओर बरबस खींचते हैं। सूर के पद हमारी हृदय-गत मलीनता को धोने में साबुन से भी अधिक कार्य करते हैं। पुस्तकें निस्सन्देह हमारे जीवन को शुद्धि प्रदान करती हैं। हमारे हृदय की मलीनता के मैल को धोती हैं हृदय में शान्ति का बीज वपन करती हैं।

आपत्ति काल में पुस्तकें सच्चे मित्र की भांति हमें सान्त्वना प्रदान करती हैं और हमारी मानसिक चिन्ताओं को दूर करती हैं। कभी हमारे हृदय में अपार साहस भर देती हैं और हमें कठिन से कठिन कार्यों के करने को तैयार करती हैं। आपत्ति की घड़ियों में और कठिन समस्याओं के उपस्थित होने पर जब हमें चारों तरफ से मानसिक चिन्तायें घेर लेती हैं और हमारा हृदय व्यथित होने लगता है, ऐसे अवसर पर महापुरुषों की जीवनियां और उपदेश बड़ा उत्तम कार्य करते हैं। ये जीवनियां हमारे जीवन को उठाती हैं और हमें आगे बढ़ने को उत्साहित करती हैं, जिनसे हमें साहस और आत्मगौरव मिलता है। ये [illegible] के घावों पर मरहम लगाती हैं और हमें दुखी नहीं होने देतीं

पुस्तकों के अध्ययन से ज्ञान वृद्धि होती है और मस्तिष्क विकसित होता है। विद्वानों के विचारों से परिचय प्राप्त होता है। नित नये और उत्तम विचार देखने को मिलते हैं। हमारा नित्य परीक्षण होता है हम विविध आचरणों से अपने आचरण का समन्वय करते हैं। अपने में गुणों का अभाव पाने पर वैसा ही अपने में गुण लाने का प्रयत्न करते हैं। हमें उत्तम और भद्दे आचरण का अनुभव होता है। सत्य और असत्य के ज्ञान का भान होता है। हम सूक्ष्म निरीक्षण की बान पड़ती है। हमें अपनी सफलतायें और विफलतायें स्पष्ट प्रकट होने लगती हैं। हमें पुस्तक अध्ययन से यह भी पता लग जाता है कि हमारे अन्दर ऐसे कौन-कौन से दुर्गुण हैं जो हमें आगे बढ़ने से रोकते हैं? हम अपनी कौनसी निर्बलता पर विजय पा चुके हैं और कौनसी निर्बलता अभी हमें पतनोन्मुखी बना रही है? दुःखी व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न हो जाती है। सेवा-भाव का सञ्चार होता है। दुराचार के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है। बड़ों के प्रति सम्मान और ईश्वर के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है। वासनायें नष्ट हो जाती हैं।

पुस्तक अध्ययन में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सदैव उत्तम साहित्य ही पढ़ा जाये। उपरोक्त जितने गुण मानव-जीवन में उत्पन्न होते हैं वह सब सत्-साहित्य के अध्ययन ही से उत्पन्न होते हैं। गन्दा और अश्लील साहित्य कुसङ्गति की भांति मनुष्य जीवन को बहुत गन्दा और निकृष्ट बना देता है। अश्लील साहित्य पाप-प्रवृत्तियों को जगाता है और सदैव पतन की ओर ले जाता है। मनुष्य का ज़रा पांव फिसलने पर वह पतन के गहरे गड्ढे ही में जाकर ठहरता है। संसार में चरित्रहीन-व्यक्ति

का कोई मूल्य नहीं। गन्दे साहित्य का प्रभाव मनुष्य जीवन पर भयानक रोग की भांति शीघ्र असर करता है। अतः इससे सदैव दूर रहा जाय तो ही अच्छा है। हमारे बच्चे और बच्चियाँ प्रायः छुप-छिप कर अश्लील साहित्य का पारायण किया करते हैं। अन्य देशों में गन्दे साहित्य पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं, अतः वह देश में नहीं फैल सकते। हमारे देश म भी ऐसे प्रतिबन्धों की आवश्यकता है।

अतः हम आवश्यक है कि हम कभी गन्दे साहित्य को हाथ से भी न छुवें और सदैव उत्तम साहित्य ही पढ़ा करें। अन्त में हम यही कहते हैं कि पुस्तकों के अध्ययन से जो आनन्द प्राप्त होता है ऐसा आनन्द किसी अन्य साधन से नहीं प्राप्त होता।

विद्यार्थी में कौन कौन गुण होने चाहियें ?

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—विद्यार्थी का महत्व।

(२) विद्यार्थी के विशेष गुण—

परिश्रमी और एकान्त सेवी, आत्म-संयमी और इन्द्रिय निग्रही, नियम और समय का पालन, अपने गुरुओं के प्रति श्रद्धा और आदर, जिज्ञासा-वृत्ति और खोज, व्यायाम और खेलों म रुचि, मितव्ययता का स्वभाव।

(३) उपसंहार—हमारे देश के विद्यार्थी।

प्रत्येक देश और समाज की उन्नति उसके आधार स्तम्भ के ऊपर

निर्भर है। विद्यार्थी अपने मस्तिष्क और शरीर की शक्तियों को विकसित कर राष्ट्र और समाज का हित कर सकते हैं। प्रत्येक सभ्य राष्ट्र को उठाने में वहा के नवयुवक समाज ही के आत्म-त्याग और बलिदान ने कार्य किया है। अध पतित जातियों की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति विद्यार्थियों की सद्भावनाओ और उच्च गुणों हो पर अवलम्बित है। विद्यार्थी अपने देश की सामाजिक कुप्रथाओं और धार्मिक ढकोसलों का अन्त कर सकते हैं। राजनैतिक और औद्योगिक उन्नति कर सकते हैं।

विद्यार्थियों को ससार-क्षेत्र में अवतीर्ण होने के लिये आवश्यक है कि वे अपने को इस योग्य बनावें कि उन्हें जीवन में कभी किसी का आश्रय न खोजना पड़े। वर्तमान शिक्षा में विद्यार्थियों को परामुखपेक्षी होना पड़ता है। विद्यार्थियों को कठिन परिश्रमी होना चाहिये, वह कभी कठिन कामों से घबराकर न बैठें। जहा पर से अथवा जिस विधि से उन्हें गुण सीखना अपेक्षित हो वहा से वह ज्ञानार्जन करें। ज्ञानार्जन करने में ऊँच नीच की भावनाओं को अपने निकट न आने दें। जहां कहीं भी उन्हें ज्ञान का स्रोत दृष्टिगोचर हो, वहा पहुँचने में कभी वह आलस्य और प्रमाद न करें। वह सदैव अपने ज्ञान-भण्डार को भरते ही रहें। वे समय का मूल्य करने वाले और अध्यवसायी हों। प्रत्यक काय के लिये समय और प्रत्येक समय के लिये काय निश्चित करने की प्रवृति रखते हों। वे सदैव ऊषाकाल में उठें, प्रात कालीन मारुत का आनन्द लें, तत्पश्चात् अपने पठन पाठन में व्यस्त हो जायें। निर्धारित विषयों की गहन स्टडी करें। कठिन स्थानों पर चिन्ह बनाते चलें। जो विषय किल-

कुछ समझ में न आए उन्हें अध्यापक से पूछ लें। जो पाठ पढ़ाया जाय उसे नित्य का नित्य याद करलें। कक्षा में एकाग्रचित्त हो अध्यापक के व्याख्यानों को सुन और समझें। पढ़ते समय अपने ध्यान को कभी इधर उधर न भटकने दें। जो विद्यार्थी कक्षा में अपना पाठ नहीं सुनते घर पर उनको वह विषय कभी समझ में नहीं आता।

१४ वर्ष की अवस्था से विद्यार्थियों में अनेक विशेष गुणों का विकास आरम्भ होता है। यही समय विद्यार्थी के बनने बिगड़ने और सिखाने का है। इस अवस्था में विद्यार्थी को बहुत संयम से रहना चाहिये। अपनी चित्तवृत्तियों पर पूरा अधिकार रखना चाहिये। इस समय जो विद्यार्थी अपनी चलन पर ध्यान न दे सकते वह प्रायः पतन की ओर चले जाते हैं और उनका सुन्दर जीवन नष्ट हो जाता है। अतः ऐसे समय में मन को पूरे नियन्त्रण में रखना चाहिये। जो विद्यार्थी आत्म-संयम नहीं कर सकते वह न विद्या ही प्राप्त कर सकते हैं और न समाज के लिये उपकारी सिद्ध हो सकते हैं। जो विद्यार्थी अपनी इच्छा के वशीभूत होकर कभी सिनेमा कभी सरकस कभी मेला कभी रागरंग कभी तमाशा देखने दौड़ता वह कभी सभ्य नहीं बन सकता। विद्यार्थी को एक योगी की भांति अपना जीवन बनाना चाहिये। वह पढ़ने लिखने को ही खेल-तमाशा और अपने आमोद प्रमोद की वस्तु समझे।

विद्यार्थियों में सबसे विशेष गुण यह होना चाहिये कि वह विनयी और मधुरभाषी हो। मनुष्य में मधुर भाषण और विनय ऐसे गुण हैं जिनसे वह संसार को अपने वश में कर सकता है। जो विद्यार्थी विनयी होते हैं वह प्रायः अध्यापकों के स्नेह प्रेम और कृपा के पात्र हो जाते हैं।

अध्यापकों की कृपा से वह गहन से गहन विषयों को सुगमता से ग्रहण कर लेते हैं। वही विषय उनके जीवन को सुखी बनाते हैं। विद्यार्थियों को विनय और नम्रता ग्रहण करनी चाहिये। ये दोनों गुण विद्यार्थियों के अस्त्र हैं जिसके बल से वह जीवन सग्राम में विजय प्राप्त कर सकते हैं।

आज्ञा-पालन मनुष्य का सबसे उत्तम गुण है। ससार में अनुशासन के बिना कोई कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। आज्ञा पालन अनुशासन मानने का ही रूपान्तर मात्र है। विद्यार्थी में आज्ञा पालन का गुण होना चाहिये। वह अपने अध्यापकों की आज्ञाओं का उसी भांति पालन करे जैसे कि वह अपने माता पिता की आज्ञा का पालन करता है। आज्ञाकारी विद्यार्थी से अध्यापक लोग अधिक प्रसन्न होते हैं और उनकी सारी सहानुभूतियां विद्यार्थी के साथ हो जाती हैं। अध्यापक आज्ञाकारी बालकों को बड़े प्रेम से विविध भांति की शिक्षायें देते हैं और उसे जीवन-सग्राम के लिये उपयोगी मनुष्य बनाते हैं। गुरुओं की कृपा से सरस्वती की भी कृपा उन्हें प्राप्त हो जाती है। सरस्वती के आशीर्वाद से मनुष्य ससार में अपनी जीवन-नौका को खेने में समर्थ हो जाता है।

विद्यार्थी में उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त एक गुण यह भी होना चाहिये कि वह अपने गुरुजनों के प्रति आदर और सम्मान के भाव रक्खे। जो गुरु हमें अनेक उपयोगी शिक्षा देकर पशु से मनुष्य बनाता है क्या उसके प्रति हमारा यह कर्तव्य नहीं है कि हम उसके लिये मस्तक नवायें, उसके प्रति श्रद्धा रक्खे ? उसके दुःख दर्द में उसका हाथ बटायें। कुछ विद्यार्थी अपने अध्यापकों की अवज्ञा करते हैं और उनका मजाक उड़ाते हैं और सदैव उनकी बुराई में तत्पर रहते हैं, मैं कहूंगा कि

ऐसे विद्यार्थी कभी अपने जीवन में सफल नहीं हो सकते। उनको कभी कल्याण प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसे विद्यार्थियों से कभी सरस्वती प्रसन्न नहीं होती। वह कभी परीक्षाओं में उत्तीर्ण नहीं होते। उनका जीवन सदैव सङ्कटों और आपदाओं से घिरा रहता है। ऐसे विद्यार्थी अपने घर के लिये समाज के लिये और राष्ट्र के लिये बड़े घातक सिद्ध होते हैं।

नई नई बातें सीखने की प्रबल इच्छा विद्यार्थियों में सदा बनी रहनी चाहिये। विद्यार्थी स्वयं सन्तोषी हो किन्तु नई बात सीखने के लिये सदैव असन्तोषी बना रहे। जब ज्ञान की पिपासा विद्यार्थी के हृदय में बनी रहती है तब वह कुछ न कुछ नई बात सीखने की प्रवृत्ति रखता ही है। सच्चा विद्यार्थी वही है जिसके हृदय में जिज्ञासा बहुत बढ़ी-चढ़ी हुई हो। जिन विद्यार्थियों की जिज्ञासा वृत्ति मर जाती है उनका जीवन भी मृतवत् हो जाता है। नई नई बातों का ज्ञान प्राप्त करने वाला विद्यार्थी ही संसार में उन्नति प्राप्त करता है और अपनी कीर्ति कौमुदी से संसार को प्रकाशमान करता है।

मस्तिष्क को स्वस्थ और आरोग्य रखने के लिये विद्यार्थियों को खेल और व्यायाम में भी हिस्सा लेना चाहिये। सुबह शाम टहलना भी एक प्रकार का व्यायाम ही है। खेलने और टहलने से मस्तिष्क की थकावट दूर होती है और शरीर में स्फूर्ति उत्पन्न होती है। विद्यार्थी को चाहिये कि वह खेल कूदों में भी हिस्सा ले। खेलने से शरीर का स्वास्थ्य भी बना रहता है और मस्तिष्क को भी शान्ति मिलती है। रात दिन किताबों का कीड़ा बनकर पुस्तकों में चिपका रहने वाला विद्यार्थी भी अच्छा नहीं। यदि खेलने में जी न लगे तो टहलने अवश्य जाना चाहिये। जो विद्यार्थी व

खेलते हैं और न पर्यटन करते हैं उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उनके चेहरे पीले पड़ जाते हैं, नेत्र निर्बल हो जाते हैं और मन्दाग्नि आदि भयङ्कर रोगों के शिकार हो जाते हैं।

हमारे देश के विद्यार्थियों में आजकल फैशन का भूत बड़ी बुरी तरह सवार हुआ है। इस फैशन के पीछे वह अपने घर और चरित्र सबको चौपट कर देते हैं। वह अपने मां बाप की कठिन कमाई के पैसों का पानी की तरह बहाते हैं। कभी सिनेमा देखने जाते हैं, कभी क्रीम पाउडर लगाते हैं। कहीं कोट बूट में रुपया स्वाहा करते हैं। उन्हें अपने इन कृत्यों पर लज्जा आनी चाहिये। विद्यार्थी को मितव्ययी होना बड़ा आवश्यक है। विद्यार्थी को सदैव सादा जीवन व्यतीत करना चाहिये और अपने विचारों को बहुत ऊँचा रखना चाहिये। फैशन, चित्रपट और आमोद-प्रमोद की वस्तुओं को अपने से दूर रखना चाहिये, तब ही वह सच्चा विद्यार्थी कहलायेगा और जीवन संग्राम में सफल सिपाही सिद्ध होगा।

एक नीतिकार ने बताया है कि विद्यार्थी में कौये की सी चेष्टा बगले का सा ध्यान कुत्ते के समान निद्रा होनी चाहिये। कहा है —

काक चेष्टा बकुल ध्यान श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पञ्च लक्षणम्॥

क्या उपरोक्त गुण हमारे देश के विद्यार्थियों में पाये जाते हैं? उत्तर मिलता है 'नहीं'। हां, स्वतन्त्र देशों के विद्यार्थियों में यह सारे गुण मिलते हैं। उन देशों के विद्यार्थी नियन्त्रण में रहते हैं। स्वतन्त्र देशों के विद्यार्थी भारतीय विद्यार्थियों की भांति धक्का मुक्की और गाली गिलोच नहीं करते, न अपने अध्यापकों की अवहेलना करते हैं। भारत के विद्यार्थी पराधीनता

की धूप में पड़े होने के कारण अत्यन्त रुक्ष और उद्दण्ड होते हैं। अध्यापकों को दुःखी करने ही में अपना गौरव समझते हैं। अमेरिका और जापान के विद्यार्थी स्वयं उद्योग धन्धों से अपनी पढ़ाई का खर्चा उपार्जित कर लेते हैं जिससे उनकी शिक्षा का बोझ उनके मा बाप पर नहीं पड़ता। भारत के विद्यार्थी अपने मा बाप के ऊपर भार रूप होकर रहते हैं और वे फैशन के बनाव सिंगार में घर की आर्थिक दशा को खोखला कर देते हैं। वे स्वास्थ्य का बिलकुल विचार नहीं रखते। किन्तु स्वतन्त्र देशों के विद्यार्थी स्वास्थ्य का जितना ध्यान रखते हैं उतना किसी अन्य वस्तु का नहीं रखते।

विज्ञान के चमत्कार

विचार-तालिकायें—

(१) विज्ञान का क्रमशः विकास।

(२) विज्ञान की उन्नति से लाभ—

यात्रा में सौकर्य्य होता है परिश्रम और समय की कमी होती है मानवी अभिलाषाओं की पूर्ति होती है रोग निवारण होता है विद्या-प्रचार और मनोरञ्जन में सहायता मिलती है विलासिता और आनन्द की वृद्धि होती है।

(३) विज्ञान द्वारा अनुचित लाभ—

प्राण मारक शस्त्रों द्वारा नर संहार होता है वैज्ञानिक उन्नति से बेकारी की समस्या बढ़ाई है मानवी अभिलाषायें

अन्तर्मुखी हो गई है, विलासिता की मनोवृत्ति को जन्म दिया है।

(८) उपसंहार—विज्ञान का महत्व और भविष्य की आशा।

बीसवीं शताब्दि में जितनी विज्ञान ने उन्नति की है इतनी किसी अन्य वस्तु ने नहीं की, चारों ओर वैज्ञानिक आविष्कारों की धूम मच रही है। किसी भी विषय को लीजिये, सब में वैज्ञानिक अनुसन्धान हो रहे हैं। इतिहास, ज्योतिष, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीवजन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, खगोल विज्ञान आदि कोई सा भी विषय उठा लीजिये, सब में विज्ञान ने पर्याप्त उथल-पुथल मचाई है।

इसमें कोई सन्देह नहीं जब से विज्ञान ने उन्नति की है, तब से मानव-समाज में सुख की अभिवृद्धि खूब हुई है मोटर और रेल के आविष्कार ने मनुष्यों की वर्षों की यात्रा को दिनों में सीमित कर दिया है। वायुयान के द्वारा उसने आकाश पर अपना अधिकार जमाया है और देवताओं की भांति आकाश में स्वच्छन्द विहार करने लगा है। बुलेट में बैठकर चन्द्रलोक की यात्रा की तैयारी हो रही है। कहिये विज्ञान की उन्नति से पूर्व इनका विचार करना भी मूर्खता समझी जाती थी। अब तो विज्ञान ने समस्त विश्व को घर आँगन बना रक्खा है। "अभी और आगे देखिये होता है क्या?"

विज्ञान ने ऐसी ऐसी विचित्र मशीनों का आविष्कार किया है जो मनुष्य की अपेक्षा लाखों गुना काम क्षणमात्र में कर डालती हैं। समाचारों को पाने में तो इतनी उन्नति हुई है कि एक ही समय में संसार के समस्त स्थानों में समाचार सुनाये जा सकते हैं। रेडियो के आविष्कार ने

मानवी-जीवन की इस कठिनता को हल कर दिया है। संसार भर के समाचार को बात की बात में आप अपने घर बैठे सुन लीजिये।

मनुष्य का शरीर रचना पर बड़ा सूक्ष्म से सूक्ष्म अध्ययन हो रहा है। इंजेक्शन के नये से नये तरीके निकल आ रहे हैं। नित्य नई-नई औषधियों की खोज पड़ताल होकर चिकित्सा विज्ञान में उन्नति हो रही है। एक्स किरणों के द्वारा शरीर के भीतरी भागों का परिचय प्राप्त किया जा रहा है जिससे रोग का मूल कारण ज्ञात हो जाता है और उसकी चिकित्सा नियमानुसार हो सकती है। राजयक्ष्मा कोढ़ आदि रोगों का निदान अब एक्सरे के ही द्वारा होने लगा है। सर्जरी के कामों में विज्ञान ने पर्याप्त मात्रा में उन्नति की है। सूक्ष्म से सूक्ष्म भारी तक की चीड़-फाड़ की जाती है और उसमें पूरी सफलता प्राप्त होती है।

विज्ञान ने मनुष्य के नित्य व्यावहारिक कामों में बड़ी प्रशंसनीय सहायता पहुँचाई है। दियासलाई, सुरमा, मंजन, साबुन पालिश निब आदि नित्य व्यावहारिक वस्तुयें कम मूल्य में विज्ञान ही की सहायता से प्राप्त होती हैं। आजकल तो विज्ञान की उन्नति की चरम सीमा हो रही है। आप वायुयान पर सवार होकर विशाल आकाश की सैर कीजिये। अथवा प्रशान्त महासागर के विशाल वक्षस्थल पर जहाजों द्वारा यात्रा कीजिये। रेडियो पर बैठकर दुनिया के समाचार सुनिये अथवा गाना सुनकर अपने चित्त को बहलाइये। बिजली के पंखों की सुखद समीर में प्रगाढ़ निद्रा का सुख लूटिये अथवा सूर्य के प्रकाश को लज्जित करने वाले बिजली के प्रकाश का सुख लूटिये। कहाँ तक कहें यदि आपको अपने कुल की शोभा बढ़ानी है तो भीम पाउडर

लगाइये, मित्र-मण्डली का आकर्षक फोटो कैमरा से खिंचवाइये। यदि आप गान प्रिय हैं तो भांति भांति के वाद्य-यन्त्रों को क्रय करके अपने आनन्द का मज़ा लीजिये। यदि दिन भर के परिश्रम से थकान आ गई है तो आइये किसी सिनेमा हाल में बैठकर अपना मनोरञ्जन कीजिये।

साक्षरता-प्रचार से अधिक शिक्षा-प्रचार में उन्नति विज्ञान ने की है। अध्यापकों द्वारा शिक्षा प्रचार रेडियो की अपेक्षा महँगा पड़ता है। कितने ही सभ्य देशों ने रेडियो द्वारा जनता को शिक्षित बनाया है भारतवर्ष में भी अब इस कार्य का सूत्रपात हुआ है किन्तु अभी तक रेडियो का विस्तार बहुत ही सीमित क्षेत्र में है। रेडियो स्टेशन से अनेक सुन्दर व्याख्यान ब्राडकास्ट किये जाते हैं, जिससे शिक्षित अशिक्षित सभी प्रकार के मनुष्य लाभ उठा सकते हैं। यह सब विज्ञान का ही चमत्कार है।

आज से कुछ दिनों पहले साधारण से किले आदि को विध्वंश करने में बड़ी भारी शक्तियों का प्रयोग करना पड़ता था, किन्तु आज वैज्ञानिक युग मे डाइनामाइट की सहायता से बड़े से बड़े विशाल-काय क़िले बात की बात मे बर्बाद किये जा सकते हैं। 'डाइविंग वेल' मशीन द्वारा गहरे से गहरे समुद्रों में से चांदी की शिलायें आसानी से निकली जाती हैं। ऊँची-ऊँची विशाल मीनारों पर 'लिफ्ट' के द्वारा क्षणमात्र में उसकी चोटी पर पहुँच जाना सुगम हो गया है। मुद्रण-यन्त्र से सहस्त्रों प्रतियां एक घण्टे में छप जाती हैं। ग्रामोफ़ोन के रिकार्डों में विविध प्रकार के गाने भर लिये जाते हैं जो प्रत्येक अवसर पर मनुष्य का आनन्दवर्द्धन कर सकते हैं। 'लाउडस्पीकर' के द्वारा लाखों मनुष्यों की भीड़ में व्याख्यान बड़ी सुन्दरता से सुना जा सकता है। कपड़ा बुनने की मशीन ने कैसी

पुण्यस्मरणकारी शान्ति उत्पन्न करती है? थोड़े दाम में बढ़िया से बढ़िया कपड़ा तुरन्त प्राप्त हो सकता है। दूरदर्शक यन्त्र के आविष्कार ने तो लोक-लोकान्तर को मिला सा दिया है। कहाँ तक कहा जाय एक वस्तु हो तो गिनाई जाय, नित्य एक से एक बढ़कर वैज्ञानिक आविष्कार होते हैं जो मानवी कठिनाइयों को सुलझाते हैं।

जहाँ विज्ञान सौख्यदायक और मनोरञ्जन प्रदायक है, वहाँ वह बड़ा नर-संहारकारी भी है। आज जो बड़ा विषाक्त और प्रलयकारी गैस और बम तैयार हो रहे हैं वह सब विज्ञान के ही चमत्कार हैं। आज के नर संहारकारी दृश्यों को देखकर यही कहना पड़ता है कि इन विज्ञानों का आविष्कार न होता तो उत्तम था। बेचारे एडीसन और स्टीफेंसन को यह स्वप्न में भी ध्यान न आया होगा कि यह आविष्कार कभी नर-संहार काम में भी प्रयोग किये जायगे। भगवान इन साम्राज्य-लोलुप व्यक्तियों को सद्बुद्धि दे कि वे इन वैज्ञानिक आविष्कारों को नर संहार में काम न लावें।

संसार में बेकारी बढ़ रही है, उसका एक मात्र कारण वैज्ञानिक उन्नति है। मशीनें लाखों मनुष्यों का भोजन छीन लेती हैं। संसार के कला-कौशल और घरेलू उद्योग धन्धों का इन मशीनों का प्रचार चौपट किये देता है। यही कारण है कि संसार की बेकारी सुरसा के मुख की भांति बढ़ती ही जाती है।

वैज्ञानिक उन्नति से संसार में सबसे बड़ी हानि यह की है कि मानवी मनोवृत्तियां बहिर्मुखी हो गई हैं जिसके कारण उनकी अतृप्त आकांक्षायें बढ़ी ही रहती हैं। वैज्ञानिक ढंग से बनी हुई वस्तुयें ऐसी आकर्षक हैं जो

मानवी हृदय को बरबश अपनी ओर खींचती है। वैज्ञानिक वस्तुओं ने मनुष्य की विलासिता और सौन्दर्य में अभिवृद्धि की है। आज का संसार 'खाओ, पीओ और मौज करो' के सिद्धान्त पर चला जा रहा है। वह किसी अन्य बात को सुनने तक को तैयार नहीं है। धर्म के बन्धन ढीले पड़ गये हैं। धर्म की खुले खजाने हँसी उड़ाई जा रही है।

निष्कर्ष यह है कि विज्ञान ने जहां मानवी जीवन को मधुर बनाया है वहां उसको कटु भी बनाया है। जहां सुख के साधन जुटाये हैं वहां उसके गले की फांसी भी तैयार की है, किन्तु मनुष्य दुःख को नहीं देख रहा। एक युग आयेगा कि मनुष्य इन आविष्कारों को घृणा की दृष्टि से देखेगा।

सत्याग्रह-संग्राम १६४०

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—सत्याग्रह की व्याख्या और उसका प्रयोग। भारतीय संस्कृति में सत्याग्रह का स्थान।

(२) सत्याग्रह का आरम्भ और उसकी अमोघ विजय।

(३) सत्याग्रह का क्रमशः विकास।

(४) भारतवर्ष में सत्याग्रह का आरम्भ और उसका इतिहास।

(५) इण्डिया एक्ट १६३५ और प्रान्तीय स्वतन्त्रतायें।

(६) सन १६४० का सत्याग्रह संग्राम और उसका विस्तार।

(७) उपसंहार—सत्याग्रह और हमारी अभिलाषा।

सत्य, अहिंसा और ईश्वर पर विश्वास रखते हुए, कष्ट सहन करते हुए, अत्याचारी के अत्याचार के विरुद्ध ऐसा आचरण करना जो अत्या-

चारी के हृदय का परिवर्तन करके 'सत्याग्रह' कहलाता है। सत्याग्रह भारतीय संस्कृति का अति प्राचीनतम रूप है। हमारे पूर्वजों ने सदैव इस हथियार का आश्रय लिया है। देवासुर संग्राम की लड़ाइयां इसी भांति की लड़ाइयां थीं। भारतीय ब्राह्मण अत्याचारी को शाप तक देने में अपना पतन समझते थे। बौद्ध और जैन सम्प्रदायों ने इस मत पुष्ट में कम्म दिया। महाभारत के युद्ध में हम श्री कृष्ण का पूरा सत्य नहीं पाते हैं। वे न नहीं कहते हैं कि युद्ध क्षेत्र में जाकर भी हथियार नहीं उठाऊंगा। वे अन्त तक अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ मिलते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं हिंसा से हिंसा को दबाना शान्ति नहीं ला सकता। संसार में अहिंसा को अपनाये बिना शान्ति नहीं आ सकती।

सत्याग्रह संग्राम शब्द का जन्म १९०४ ई० में ट्रान्सवाल में हुआ है। इसका सर्व प्रथम प्रयोग महात्मा गांधी ने ट्रान्सवाल सरकार के अत्याचारों से पीड़ित होकर किया था। 'इण्डियन ओपीनियन' में महात्मा गांधी ने सत्याग्रह सम्बन्धी आयोजना जनता के सामने रक्खी थी। जनता ने इस प्रयोग शक्ति का स्वागत किया था। मगनलाल गांधी ने इस योजना का नाम 'सदाग्रह' रक्खा था किन्तु महात्मा गांधी ने इसका 'सत्याग्रह' नाम ही अधिक पसन्द किया था।

भारतीय संस्कृति ही में नहीं अपितु सारे संसार में मनुष्यों ने अपने विरोधों के आधार पर अनेक रूप रखे हैं। अत्याचारी के अत्याचारों का सर्वत्र स्वागत किया है किन्तु अत्याचारी के अत्याचार सत्याग्रही की विचार धारा में तनिक भी अन्तर नहीं डाल सकी है। सुकरात महात्मा ईसा आदि की महानता सत्याग्रहियों की ही महानता है। भारतवर्ष में

ऐसा संग्राम कोई नई बात नहीं है। महात्मा गांधी के हृदय पर इस संग्राम में गीता के उपदेशों की अधिक छाप है।

सत्याग्रह-संग्राम का प्रथम प्रयोग दक्षिणी अफ्रीका में महात्मा गांधी द्वारा हुआ। नेटाल और ट्रांसवाल में हिन्दुस्तानियों के प्रति गोरों के किये गये अत्याचारों के विरोध में यह सत्याग्रह लड़ा गया था, उसमें महात्मा गांधी को पूरी सफलता प्राप्त हुई थी। सत्याग्रह का दूसरा प्रयोग चम्पारन (बिहार) में नील का खेत के अधिकारी गोरों के विरोध में हुआ था और सत्याग्रह की पूरी विजय हुई थी। तीसरा सत्याग्रह का प्रयोग खेड़ा जिले के किसानों ने लगान की माफी के लिये लड़ा और उसमें भी पूरी-पूरी सफलता प्राप्त हुई। सत्याग्रह का अचूक प्रयोग कहीं भी निष्फल नहीं गया।

सन १९१७ ई० में माण्टेगू चेम्स-फोर्ड रिपोर्ट तैयार हुई। उसके अनुसार भारतीय शासन-विधान की सन १९२० ई० में घोषणा हुई। देश ने उसके विरोध में सत्याग्रह किया। इस सत्याग्रह में भारतीयों को कुछ आंशिक सफलता मिली। यूरोपीय महासमर के पश्चात हिन्दुस्तानी सैनिकों और हिन्दुस्तानी जनता की सराहनीय सेवाओं के बदले में ब्रिटिश जाति ने फरवरी सन १९१९ ई० में पार्लमेण्ट में एक बिल पेश किया, जिसमें भारतीय स्वतन्त्रता की रही-सही स्थिति को भी नष्ट कर दिया। इस बिल में ब्रिटिश जाति की संकुचित और स्वार्थ-पूर्ण मनोवृत्ति का पूरा-पूरा परिचय मिलता है। भाषण स्वतन्त्रता के गला घोटने के निमित्त रौलेट-एक्ट नामक बिल पेश किया गया। भारतीय इतिहास का नया अध्याय यहीं से आरम्भ होता है। देश ने ब्रिटिश मनोवृत्ति को पहचाना। देश को

अपने पतन पर घृणा आई। देश ने दासता से अलग कर एक दीर्घ सांस ली। रौलेट एक्ट के विरोध में देश में भीषण हलचल थी। लगभग समस्त भारतवर्ष ने सामूहिक और सार्वजनिक रूप से इस काले कानून का विरोध प्रदर्शन किया और विरोध सभायें की। ६ अप्रैल सन १९१९ रविवार का दिन भारत के इतिहास में उत्तम गिना जायेगा इस शुभ दिन की स्मृति देश स्वर्णाक्षरों में याद रक्खेगा। यहीं से भारत की स्वतन्त्रता का इतिहास आरम्भ होता है।

६ अप्रैल को समस्त भारत ने हड़ताल मनाई। महात्मा गांधी के आदेशानुसार देश के कोने-कोने में रौलेट-एक्ट के विरुद्ध भारतीय जनता ने विरोध प्रदर्शित किया और शाम तक उपवास रक्खा। नंगे सिर और नंगे पैर नगर-नगर और गाँव गाँव में जनता ने प्रोसेशन निकाले। उसी दिन शाम को विराट-सम्मेलन हुए। दिल्ली और पञ्जाब में गवर्नमेंट ने हड़तालियों के साथ हस्तक्षेप किया। दोनों स्थानों पर भीषण दुर्घटनाएं हुई। महात्मा गांधी दोनों प्रान्तों में शान्ति स्थापित करने के लिये बम्बई से पञ्जाब को रवाना हुए। गवर्नमेंट ने महात्मा गांधी को पलवल (गुरगाँवा) स्टेशन पर गिरफ्तार कर लिया और किसी अज्ञात स्थान में ले जाने का निश्चय किया। गवर्नमेंट के इस कार्य से जनता के हृदय में बड़ा क्षोभ उत्पन्न हुआ। समस्त देश में अराजकता की भावनाएं दीखने लगीं। अहमदाबाद और जलियान्वाला बाग में रोमाञ्चकारी हत्याकाण्ड हुए। ब्रिटिश अधिकारियों ने अपनी क्रूरता और बर्बरता का पूर्ण परिचय दिया। महात्मा गांधी के हृदय पर इस घटना से भारी चोट पहुँची। उन्होंने इन घटनाओं का मूल कारण अपने आपको समझ

और अपनी भूल को हिमालय जैसी भूल बताया। अत २१ जौलाई सन १६१६ ई० को सत्याग्रह-सग्राम बन्द कर दिया।

इण्डियन गवर्नमेण्ट ने पञ्जाब की इन दुर्घटनाओं की जाँच कराई, जाँच करने वाली कमेटी का नाम हण्टर कमेटी था। हण्टर कमेटी ने २८ मई सन १६२० में अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की। इन्हीं दिनों में अली-बन्धुओं ने खिलाफ़त आन्दोलन आरम्भ किया।

यह आन्दोलन भी सत्याग्रह ही का रूपान्तर मात्र था। महात्मा गाधी ने इस आन्दोलन का नेतृत्व भी अपने ही कन्धों पर लिया। देश में जागृति हुई। लाखों स्त्री पुरुष जेल जाने लगे। गवर्नमेण्ट ने भी दमन-चक्र आरम्भ किया। देश में उत्तेजना फैली। जनता अहिंसा के सिद्धान्त को भूल गई। क्षोभावेश में चौरा-चौरी जैसी दुर्घटनायें होने लगीं। अत महात्मा गाधी ने इस आन्दोलन को फिर स्थगित कर दिया।

दिसम्बर सन १६२६ ई० मे राष्ट्रीय महासभा के सभापति प० जवाहरलाल नेहरू नियत हुए। आपके सभापतित्व मे देश ने पुन करवट बदली और पूर्ण स्वतन्त्रता की शपथ ली। जनवरी सन १६३० ई० में फिर सत्याग्रह आरम्भ कर दिया गया। इस बार के आन्दोलन का नाम सविनय-अवज्ञा आन्दोलन रक्खा गया। इसका उद्देश्य अनैतिक क़ानूनो का तोड़ना था। सविनय-अवज्ञा भी सत्याग्रह का सक्रिय रूप ही था। आन्दोलन ने भयङ्कर रूप धारण किया। महात्मा गाधी ने नमक-क़ानून तोड़ने के लिये डाँडी यात्रा की। देश के कोने कोने में क़ानून भङ्ग होने लगे। ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने भी अपना दमन-चक्र गर्म किया। लाखों सत्याग्रही जेलों में ठूँस दिये। जेलखानों में जगह न रही। गवर्नमेण्ट ने

स्थापना कैसे बनाई किन्तु वह भी पूरा न हो सकी। देश में एक भयानक भूचाल सा आ गया। इस भयानक भूचाल को देखकर ब्रिटिश गवर्नमेंट घबरा गई। उसने प्रथम सन् १९३१ ई० में महात्मा गांधी के साथ सम्मानपूर्वक समझौता कर लिया। यह समझौता 'गांधी-इरविन-पैक्ट' के नाम से प्रसिद्ध है। ब्रिटिश गवर्नमेंट ने अपनी नीति बदल दी और शासन में परिवर्तन की घोषणा करदी। इस घोषणा के अनुसार भारतीय नेताओं को इङ्गलैण्ड आमन्त्रित किया गया। भारतीय नेता इङ्गलैण्ड गये। महात्मा गांधी भी इस कान्फ्रेंस में सम्मिलित हुए। यह कान्फ्रेंस गोलमेज कान्फ्रेंस के नाम से प्रसिद्ध है।

गोलमेज कान्फ्रेंस हुई कई दिन तक एक अद्भुत अभिनय हुआ किन्तु परिणाम कुछ न निकला। भारतीय नेता ब्रिटिश नेताओं की चालाकी को समझ गये। भारतीय नेताओं को निश्चय हो गया कि स्वत्व सत्ता मांगने की वस्तु नहीं वह तो लेने की वस्तु है। ब्रिटेन वाले भारतीयों को देने वाले कुछ नहीं वह केवल हमें उल्लू बना रहे हैं। महात्मा जी कान्फ्रेंस से निराश लौटे, देश की दशा खराब हो चुकी थी गांधी-इरविन पैक्ट टूट चुका था। लार्ड विलिंगडन की नृशंस नीति अपना दमन चक्र चला रही थी देश भयातुर हो रहा था। महात्मा जी ने इङ्गलैण्ड से लौटते ही सत्याग्रह की घोषणा करदी सारे देश में सत्याग्रह की आग पुनः भड़कने लगी और जेल भरे जाने लगे। गवर्नमेंट ने महात्मा जी को गिरफ्तार करके यरवदा जेल भेज दिया। गवर्नमेंट ने कम्यूनल एवार्ड (साम्प्रदायिक बटवारा) जनता के सामने रक्खा। ब्रिटिश जाति की इस कूट नीति को जो अछूतों को हिन्दुओं से पृथक करना चाहती थी,

महात्मा गांधी ने समझा। महात्मा जी ने इसके विरोधस्वरूप आमरण व्रत लिया। महात्मा गांधी के इस महाव्रत ने भारत और ब्रिटिश दोनों को थर्रा दिया। परिणाम यह हुआ कि कैम्यूनल एवार्ड गवर्नमेण्ट को रद्द करना पड़ा।

सन् १६३५ ई० के इण्डिया एक्ट के अनुसार देश में फिर अशान्ति उत्पन्न हुई। भारतीय नेताओं में प्रान्तीय स्वतन्त्रताओं के ग्रहण और त्याग पर सङ्घर्ष चल पड़ा। सन १६३६ ई० में महात्मा गांधी के इस प्रस्ताव पर कि सूबे के गवर्नर हमारे कार्य में हस्तक्षेप न करेंगे, आश्वासन देने पर प्रान्तीय स्वतन्त्रतायें ग्रहण करली जायें। सन १६३७ ई० में उक्त निश्चय के अनुसार स्वतन्त्रतायें ग्रहण करली गई। ३७, ३८ ई० के दो साल के अनुभवों ने प्रान्तीय स्वतन्त्रताओं के खोखलेपन को प्रकट कर दिया। देश के नेताओं की सारी शक्ति इण्डिया एक्ट १६३५ के रद्द कराने की ओर अग्रसर हो गई। सन १६३९ के अन्त में भारतीय नेताओं के मस्तिष्क में यह विचार धारा चक्कर मारने लगी कि बिना राष्ट्रीय गवर्नमेण्ट की स्थापना के देश में सुख-शान्ति नहीं आ सकती।

सितम्बर सन १६३६ ई० में यूरोप में फिर रण भेरी बज उठी। वरसाई की अनुदार सन्धि ने यूरोप में पुनः प्रलय की काली घटायें उमड़ा दीं। जर्मनी ने हिटलर के नेतृत्व में अपनी शक्ति सञ्चय की। जर्मन-जनता में राष्ट्र-प्रेम की भावनायें तरङ्गित होने लगीं। उन्होंने अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता को पुनः प्राप्त किया। हिटलर ने वरसाई की सन्धि को घृणा की दृष्टि से देखा और उसके अनुसार हुए वचन और प्रतिज्ञाओं को ठुकरा दिया और अपने खोये हुए राष्ट्रों को प्राप्त करने की ब्रिटेन से

अपील की किन्तु अपने पुराने स्वभाव से विवश ब्रिटेन कुछ भी देने को तैयार न हुआ। जर्मनी ने अपने पैर फैलाने आरम्भ कर दिये और लड़ाकू पोलैण्ड चेकोस्लोवेकिया को अपने अधिकार में कर लिया। ब्रिटेन निर्बल राष्ट्रों की सहायता का बहाना लेकर समर-स्थल में अवतीर्ण हुआ। भारतवर्ष ने भी नाज़ीज़्म को घृणा की दृष्टि से देखा। ब्रिटिश अधिकारियों ने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिये भारतवर्ष से भी धन, जन की याचना की। भारतीय नेताओं को इस समय ज्ञान हुआ और ब्रिटिश राजनीतिज्ञों से अपनी इस शंका को व्यक्त पूछा और कहा कि आपका युद्ध निर्बलों की सहायता के निमित्त है अथवा अपनी स्वार्थ साधना को सिद्ध करने के लिये? यदि आपका युद्ध निर्बलों की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये है तो आप हमारी स्वतन्त्रता की घोषणा क्या करते हैं? गवर्नमेण्ट की तरफ से इसका कोई उत्तर नहीं दिया गया। विवश भारतीय नेताओं ने धन और जन ब्रिटेन को न देने का निश्चय किया। गवर्नमेण्ट ने भारत रक्षा नामक काले कानून की रचना की। भारतीय महासभा ने इस कानून को तोड़ने का निश्चय किया। अतः १६ अक्टूबर सन् १९४० ई० को सत्याग्रह संग्राम की घोषणा करदी गई। इस संग्राम की बागडोर महात्मा गांधी ने अपने हाथों में ले रक्खी है। वे बड़ी बुद्धिमानी से इस सत्याग्रह संग्राम को चला रहे हैं। देश में चारों तरफ सत्याग्रहियों की धूम है— पैदल ग्राम में "भारतमाता की" के नारे बुलन्द करते हुए सत्याग्रही स्वयं चल जा रहे हैं। महात्मा जी सत्याग्रहियों के गुणों की तरफ अधिक ध्यान दे रहे हैं। प्रत्येक सत्याग्रही की स्वीकृति वह स्वयं देते हैं। वह योग्य सत्याग्रहियों को ही आज्ञा देते हैं। वह योग्यता

को देखते हैं, संख्या को नहीं देखते। देश के बड़े-बड़े महारथी तपस्वी, त्यागी जेल जा चुके हैं। अभी तक देश के चुने-चुने महापुरुष ही सत्याग्रह करके जेल जा रहे हैं। इन सत्याग्रहियों का तांता तब तक जारी रहेगा जब तक कि पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती। सत्याग्रह करने के बाद कोई सत्याग्रही घर नहीं लौट सकता। जिन सत्याग्रहियों को गवर्नमेण्ट गिरफ्तार नहीं कर रही, वह टोलियों में सत्याग्रह करते हुए देहली की ओर कूँच कर रहे हैं। देश एक आश्चर्यजनक स्थिति में होकर गुजर रहा है, किन्तु ब्रिटिश अधिकारियों के कानों पर अभी तक जूँ भी नहीं रेंगी। इसका भविष्य अच्छा नहीं मालूम होता। अभी तक महात्मा जी व्यक्तिगत सत्याग्रह ही चला रहे हैं। वह व्यक्तिगत सत्याग्रह तब तक जारी रखेंगे जब तक कि वह स्वयं गिरफ्तार नहीं होते। उनके जेल जाने के पश्चात् प्रत्येक भारतीय को अधिकार होगा कि वह अपने दायित्व को समझे और देश की स्वतन्त्रता के लिये अपनी कुर्बानी अर्पण करे।

वर्तमान सत्याग्रह का क्या रूप होगा? यह तो अब भविष्य के गर्भ में छिपा हुआ है। किन्तु हम इतना अवश्य कहेंगे कि जहां सत्य, अहिंसा और ईश्वर विश्वास तीनों कार्य करते हैं वहां विजय अवश्य होती है। ब्रिटिश अधिकारी सूदखोर महाजन की तरह अपने लालच को नहीं छोड़ रहे। उन्हें इस आन्दोलन को समझना चाहिये और अपनी नीति में परिवर्तन करना चाहिये। उन्हें चाहिये कि वह महात्मा गांधी से सम्मानपूर्वक समझौता करलें और अपनी विरोधी शक्तियों को आगे बढ़ने का अवसर न दें। यदि महात्मा गांधी और ब्रिटिश अधिकारियों के मध्य कोई सम्मानपूर्वक समझौता हो जाय तो भारतीय जनता और गवर्नमेण्ट दोनों का भला हो सकता है।

मनोरंजन के साधन

विचार-तालिकायें —

(१) मनोरञ्जन जीवन का क्यों आवश्यक है ?
(२) समयानुसार मनोरञ्जनों में परिवर्तन।
(३) रेडियो द्वारा मनोरञ्जन।
(४) सिनेमा से मनोरञ्जन।
(५) रासलीला और रामलीला आदि मेलों द्वारा मनोरञ्जन।
(६) In door games (घर के अन्दर के खेल)।
(७) Out door games (मैदानी खेल)।
(८) पुस्तकावलोकन और कवि सम्मेलन।
(९) प्रदर्शिनी और अजायबघर।
(१०) व्यावहारिक जीवन में मनोरञ्जन का महत्व।

जब हम दिन भर के कठिन परिश्रम से थक जाते हैं तब हमारे हृदय में अभिलाषा उठती है कि यह थकान कैसे दूर हो। इस थकान को दूर कर जीवन में पुनः स्फूर्ति प्राप्त करने का नाम ही मनोरञ्जन है। अतः हमें आवश्यक है कि हम अपने शारीरिक और मानसिक थकान को दूर करने के लिये कोई मनोरञ्जन तलाश करें, जिससे थकावट दूर हो और हम फिर जीवन संग्राम में जुटने के योग्य हो जावें। बस इसी सिद्धान्त पर मनोरञ्जन के साधनों का आविर्भाव हुआ है।

आजकल मनोरञ्जन के साधनों की कमी नहीं है। अपनी रुचि के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपना मनोरञ्जन निर्धारित कर सकता है। कोई ताश और शतरंज से खेल सकता है कोई हाकी और टेनिस खेल सकता

है कोई ग्रामोफोन से अपना चित्त बहला सकता है, कोई रेडियो पर अपना मानसिक भोजन प्राप्त कर सकता है, कोई सिनेमा के मनोहारी चित्रों से आनन्द लूट सकता है तो कोई कवि सम्मेलनों में अपना मानसिक भोजन पा सकता है। कोई प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन कर अपनी मानसिक भूख बुझा सकता है। कोई सुख से लाइब्रेरी में बैठकर मनोहर और आकर्षक साहित्य का आनन्द लूट सकता है। अभिप्राय यह है कि व्यक्तियों के लिये मनोरञ्जन के साधनों की कमी नहीं। वह अपनी रुचि के अनुकूल कोई भी मनोरञ्जन अपना सकते हैं।

मनोरञ्जन के साधन भी समय समय पर बदलते रहते हैं। अब से १५, २० वर्ष पहिले जो मनोरञ्जन के साधन थे, वह अब बिलकुल देखने में नहीं आते और न जनता अब उन्हें पसन्द ही करती है। विज्ञान ने मनोरञ्जन और मनोविनोद में बड़ा क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। विज्ञान ने हमारी मनोवृति को बदल दिया है। जो खेल तमाशे हमारे मन को खूब बहलाते थे अब उनमें वह आकर्षण नहीं रह गया। जो दृश्य हमको बहुत प्यारे लगते थे वह आज फीके दृष्टिगोचर होते हैं।

मनोरञ्जन की सामग्रियों में सबसे ऊँचा स्थान आजकल रेडियो को है। इस यन्त्र ने संसार का इतना उपकार किया है कि संसार के अच्छे से अच्छे गायक का गाना आप अपने घर के कोने में बैठकर सुन सकते हैं। रेडियो के आविष्कार ने मानवी गायन-क्षुधा की पूरी निवृति करदी है। अब कहीं अन्यत्र भटकने की आवश्यकता नहीं रहने दी। संसार के विख्यात गवैये प्रत्येक समय और प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध हो सकते हैं और अपनी गायन कला से संसार को मोह सकते

हैं। रेडियो के पश्चात् ग्रामोफोन और हारमोनियम आदि बाजे मानवी-जीवन की अभिलाषा को पूरा कर सकते हैं।

मनोरञ्जन का दूसरा उपयोगी साधन सिनेमा है जिससे प्रत्येक समाज का व्यक्ति लाभ उठा सकता है। दिन भर की मानसिक अशान्ति मिटाने के लिये सिनेमा से सुलभ और सस्ता मनोरञ्जन कोई नहीं है। चित्रपट पर प्राकृतिक दृश्य बड़ी सुन्दरता से प्रदर्शित किये जाते हैं। दृश्य-विधान और संगीत कला के समस्त आकर्षक और मनोहारी दृश्य चित्रपट पर दिखाये जाते हैं। विविध प्रकार के दृश्य और घटनाओं को चित्रपट पर अवलोकन करके थोड़े समय के लिये संसार भुलाया जा सकता है।

कार्निवाल और सरकस भी ऐसे ही मनोरञ्जन के साधनों में कम उपयोगी नहीं हैं। मोटर-साइकिल का गोले के अन्दर घूमना, बन्दर का साइकिल चलाना और मनुष्य का अग्नि में कूदना, भागते हुए घोड़ों पर खड़े होकर चलना, सिंह और बकरी का साथ साथ खेल करना मनुष्य के हृदय में कम कौतूहल उत्पन्न नहीं करते। मानवीय स्वभाव है कि वह नवीन और विचित्र-वस्तुओं का अवलोकन कर सुख अनुभव करता है। नट, बाजीगर, मस्मरेज्म आदि के खेल देखते देखते ऊबने को जी नहीं चाहता। चौपड़, ताश, शतरंज आदि ऐसे खेल हैं जो घर के अन्दर खेले जा सकते हैं। देखने में आता है कि इन खेलों में मनुष्य ऐसा डूब जाता है कि उसे दुनिया का कुछ पता नहीं है। हम अपने कई ऐसे मित्रों को जानते हैं जो शतरंज के खेल में खाना-पीना आदि सब भूल जाते हैं। फुटबाल हाकी मैच [illegible] आदि सामयिक खेल भी खेलते हैं। पर भी

शतरंज के खिलाड़ी से कम आनन्द नहीं लेते। इनके अतिरिक्त कितने ही अंगरेजी खेल हैं जो नित्य रिवाज पाते जाते हैं।

क्रिकेट हाकी फुटबाल, वालीबाल टेनिस आदि ऐसे खेल हैं जो मैदान में खेले जाते हैं। यह ऐसे खेल हैं जिनमें मनोरञ्जन के साथ ही साथ व्यायाम भी होता है, क्रिकेट और हाकी के खेल सबसे उत्तम हैं। इन खेलों के खेलने से बुद्धि प्रखर होती है, दृढ़ता आती है, सहनशीलता बढ़ती है, धैर्य साहस पाता और स्वास्थ्य उत्तम होता है। ये खेल खेलने वालों को तो आनन्द देते ही हैं मगर दर्शकों के हृदय पर भी यह आनन्द की रेखा खींचते हैं।

मनोरञ्जन का सबसे उत्तम साधन वाचनालय और पुस्तकालय हैं, जिनमें मनुष्य अपने खाली समय का उपयोग साहित्य पढ़ने और समाचार जानने में लगा सकता है। जहां पर एक से एक बढ़कर उपन्यास, कहानी, नाटक और आलोचनायें पढ़ी जा सकती हैं। भारतवर्ष में पुस्तकालय और वाचनालय नित्य खुलते ही जा रहे हैं। आधुनिक पत्र-पत्रिकायें तो कहानियों और उपन्यासों से भरी हुई आती हैं। अतः अब पुस्तकालय और वाचनालय बड़े सुलभ और सस्ते मनोरञ्जन हैं।

कवि सम्मेलनों और कान्फ्रेंसों में भी अच्छा मनोरञ्जन रहता है। देश में कवि-सम्मेलनों और कान्फ्रेंसों की तो धूम ही मची रहती है। यदि कवि सम्मेलनों और कान्फ्रेंसों के अवसरों पर प्रतियोगिता की प्रदर्शिनी स्थापित करदी जाय तो उत्साह और मनोरञ्जन अधिक बढ़ सकता है।

मेले आदि अवसरों पर भी अच्छा मनोरञ्जन रहता है। भारतवर्ष में तो कोई अवसर ऐसा नहीं जब कोई मेला सम्पन्न न हो रहा हो। मेलों में

को दृष्टि से देखता है। सच्चरित्रता जीवन में शान्ति और सुख उत्पन्न करती है। सच्चरित्रता मानवी-जीवन को ऊँचा उठाने की प्रथम सीढ़ी है। बड़ों के प्रति सम्मान के भाव उदय होते हैं। आज्ञा-पालन का व्यसन पड़ता है। पतित कामों की ओर से हृदय में अरुचि (घृणा) उत्पन्न होती है।

(४) सच्चरित्रता और उसका संसार पर प्रभाव —

सच्चरित्र व्यक्ति के दर्शन करने, उसके विचार सुनने और उसके आचरण को देखने से मानवी-हृदय में सद्-भावनायें उत्पन्न होती हैं। बुरे कामों की ओर से हृदय में घृणा उत्पन्न होती है। श्रेष्ठ आचरण सबके हृदय में पवित्र भावनायें उत्पन्न करता है। सदाचारी व्यक्ति के उपदेशों का प्रभाव जनता पर बिजली जैसा पड़ता है। सदाचार के वायु-मण्डल में पापाचार का नामोनिशान नहीं रहता। चरित्रवान व्यक्ति का आचरण ही समाज का आदर्श बनता है।

(५) सच्चरित्र महापुरुषों के उदाहरण —

राम, भरत, प्रताप शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह आदि के सच्चरित्रताओं के प्रभाव से भारत का इतिहास आज संसार का सिरमौर हो रहा है। मैत्रेयी, अनुसूया, सीता, सावित्री, लक्ष्मीबाई आदि नारियां आज तक हिन्दू जाति के सर को रख रहीं हैं। राणा प्रताप ने अनेक आपत्तियों को झेला किन्तु अपनी प्रतिज्ञा और आचरण को न छोड़ा। शिवाजी ने स्वाभिमान के बल पर हिन्दू-साम्राज्य की नींव डाली। गुरु गोविन्दसिंह और बन्दा बैरागी आदि महापुरुषों ने समाज की

आज बोलो और बताओ कि मनुष्य सच्चरित्रता के बल पर क्या-क्या नहीं कर सकता ? लक्ष्मीबाई के पवित्र आदर्श ने हिन्दू-नारियों के हृदय में वीरता और साहस भरा। सीता और सावित्री ने अपने उज्ज्वल आचरण का परिचय समाज को दिया। महात्मा गांधी के चरित्र बल ने मृतक भारतीय जाति में स्वतन्त्रता की रूह फूँक दी। उनके सत्य और अहिंसा को जगत आश्चर्य की दृष्टि से देख रहा है।

(६) *सारांश*—

प्रत्येक व्यक्ति को चरित्रवान बनने की चेष्टा करनी चाहिये। समाज में सच्चरित्रता का बाहुल्य ही सुख शान्ति और समृद्धि उत्पन्न करता है। सच्चरित्रता का पाठ महापुरुषों की संगति, उत्तम साहित्य और सज्जनों की सेवा ही से भली भांति सिखा जा सकता है। अपने चरित्र को ऊँचा उठाने के लिये *'कल्याण'* जैसे पत्रों और *गीता रामायण* आदि ग्रन्थों की पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिये। सत्य, अहिंसा ब्रह्मचर्य अस्तेय अपरिग्रह अस्वाद और अभय आदि व्रत ऐसे हैं जिन पर चलने से मनुष्य स्वयं ऊँचा उठता जाता है। दीन पुरुषों पर करुण दया दृष्टि रखना भी *सच्चरित्रता की भावना को* जाग्रत करता है। अपने गुरुजनों के प्रति सम्मान और आदर के भाव तथा उनकी आज्ञा पालन एवं सेवा आदि ऐसे गुण हैं जिनसे मनुष्य के सुन्दर आचरण पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है ?

जो भाषा देश में अधिक बोली और समझी जाती हो, जिसका साहित्य देश की संस्कृति का परिचायक हो, वह लिखने, पढ़ने और बोलने में सुगम और सरल हो, जनता के सामाजिक व्यवहार में अधिक आती हो, साम्प्रदायिकता की भावनाओं से सुरक्षित हो, ऐसी भाषा ही राष्ट्र भाषा होने के गुण रखती है, उसी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का गौरव प्रदान करना चाहिये।

हमारे देश में अनेक प्रकार की भाषायें बोली जाती हैं, उनमें से प्रत्येक का कुछ न कुछ थोड़ा बहुत साहित्य है। उन सबका विकास नागरी लिपि और संस्कृत भाषा के तौर पर क्रमश हुआ है। भारत की समस्त प्रान्तिक भाषाओं की लिपि नागरी लिपि है। गुजराती, बङ्गाली और महाराष्ट्री भाषायें तो बिलकुल हिन्दी जैसी ही हैं, केवल क्रियापादों में अन्तर है। क्रियाओं से उनमें प्रान्तिकता का बोध होता है अन्यथा वह भाषायें विशुद्ध हिन्दी के बहुत निकट हैं। अत. इन प्रान्तों के निवासी हिन्दी को राष्ट्र-भाषा अपना लें तो कोई विशेष आपत्ति नहीं।

संसार में अनेक लिपिया प्रचलित हैं किन्तु उनमें से नागरी, अरबी और रोमन लिपि अधिक प्रसिद्ध हैं। लिपि वही श्रेष्ठ मानी जाती है जो अधिक स्पष्ट और सरल हो। सरलता तो रोमन लिपि में सबसे अधिक है किन्तु वह उच्चारण की ध्वनियों को स्पष्ट प्रकट करने में असमर्थ है। लिपि में यही प्रधान गुण होना चाहिये कि वह भाषा के उच्चारण में यथासाध्य सहायता कर सके। हमारी नागरी लिपि में उपरोक्त सारे गुण मौजूद हैं।

सरलता और सरसता नागरी लिपि की सबसे उत्तम है। नागर अक्षरों का लिखना पढ़ना भी सबसे सुगम है। अतः जिन भाषाओं की लिपि नागर है वह हिन्दी को बड़ी सुगमता से अपना सकती है।

कुछ लोग उर्दू को राष्ट्र-भाषा बनाने के पक्ष में हैं। वह कहते हैं कि उर्दू हिन्दी का ही रूप है। देश में उर्दू को समझने और जानने वाले हिन्दी से भी अधिक हैं। हिन्दी की अपेक्षा उर्दू में व्यावहारिकता अधिक बतलाते हैं यह सत्य है किन्तु उर्दू भाषा और लिपि पर विदेशी संस्कृति का प्रभाव है। अतः उर्दू हमारी संस्कृति का परिचायक नहीं है। यदि किसी कारणवश भारतीय जनता उर्दू को अपना भी ले तो उसका परिणाम यह होगा कि जनता अपनी प्राचीनतम् संस्कृति से हाथ धो बैठेगी जिसे कभी भी भारतीय जनता बरदाश्त नहीं कर सकती। उर्दू भाषा की दृष्टि से राष्ट्र भाषा बनाई जाने में कोई आपत्ति नहीं है आपत्ति है नागर लिपि के त्याग और अपनाने की। यदि लिपि का प्रश्न हल हो जावे तो देश में कोई ऐसी समस्या नहीं जिससे हिन्दी राष्ट्र-भाषा न बनाई जा सके। आज की हिन्दी का यह रूप है कि हिन्दू शिक्षित समुदाय संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों का व्यवहार करके हिन्दी बोलते हैं और मुसलमान महाशय अरबी फारसी के शब्दों से भाषा को सजा कर बोलते हैं। संस्कृत अरबी और फारसी के कठिन शब्दों से मुक्त भाषा यदि व्यावहारिक रूप धारण करले तो उस दशा हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनने में कोई कठिनाई नहीं आ सकती। रही लिपि की समस्या इसे मुसलमान महानुभावों को उदारता-पूर्वक अपना लेना चाहिये, इसी से देश का अधिक कल्याण सम्भव है। भाषा को व्यावहारिक रूप देना अधिक

बुद्धिमत्ता नहीं है। व्यावहारिक भाषा जहां तक सम्भव हो साम्प्रदायिक भावनाओं से दूर रहे, तब ही राष्ट्र और समाज का हित है।

कुछ लोग कहते हैं कि भारतवर्ष के हिंदू और मुसलमान दोनों को कमालपाशा की तरह रोमन लिपि को अपनी राष्ट्रीय लिपि अपना लेनी चाहिये। इसमें साम्प्रदायिकता की भावनायें भी न रहेंगी। लिखने पढ़ने की भी सुगमता होगी। रोमन अक्षर नागर लिपि से आसान और कम हैं। नागर-लिपि मे जहां ५२ अक्षर सीखने पड़ते हैं वहां रोमन-लिपि में केवल २६ अक्षरों से काम चल जाता है। शार्ट हैण्ड मशीन आदि भी तैयार करने में बड़ी सुगमता होती है। इसके सम्बन्ध में हम इतना ही कहेंगे कि रोमन लिपि भारत की भौगोलिक परिस्थिति में नहीं पनप सकती। वह भारतीय कण्ठ ध्वनि से उच्चरित होने वाले शब्दों का स्पष्ट उच्चारण करने में कभी सफल नहीं हो सकती। भारतीय संस्कृति की अनुकूलता ग्रहण करने की उसमें सामर्थ्य नहीं है। रहा संस्कृति का प्रश्न यह तो हल हो ही नहीं सकता। अत रोमन-लिपि भी भारत में राष्ट्र भाषा के पद पर विराजमान होने की अधिकारिणी नहीं है।

भारत की प्रान्तीय भाषाओं में सबसे अधिक व्यापकत्व हिंदी भाषा का है। भारत की ⅔ जनता हिन्दी बोल और समझ सकती है। अन्य भारत की प्रान्तीय भाषाओं का क्षेत्र बहुत संकुचित और परिमित है। बङ्गाली भाषा का साहित्य सब प्रान्तीय भाषाओं से बढ़ा-चढ़ा है किन्तु वह केवल ४ करोड़ जनता की बोली जाने वाली भाषा है। गुजराती भाषा का व्यापकत्व केवल ३ करोड़ व्यक्तियों तक सीमित है। इसके अतिरिक्त अन्य भाषाओं की तो चर्चा ही क्या ? दक्षिणी कनयाडम और

नेपाली आदि भाषाओं का क्षेत्र इतना संकुचित है कि केवल ५-१ करोड़ आदमियों से अधिक नहीं बोल सकते। न उन भाषाओं के पास अपना कुछ साहित्य है किन्तु भारतवर्ष की प्रान्तिक भाषाओं में हिन्दी ही को यह गौरव प्राप्त है कि इसे १८ करोड़ भारतीय जनता समझ और बोल सकती है। भारतवर्ष में हिन्दुओं के जितने पवित्र स्थान हैं वह लगभग सबके सब हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों में हैं। अतः हिन्दुओं के अधिक सम्पर्क में आने वाली भाषा हिन्दी है। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी को राष्ट्र भाषा होने का गौरव इस कारण भी प्राप्त हो सकता है कि वह अधिक भारतीय जनता की व्यावहारिक और बोल चाल की भाषा है।

इस वैज्ञानिक युग में हिन्दी भाषा भी उन्नति की दौड़ में किसी भाषा से पीछे नहीं है। हिन्दी में संक्षिप्त लिपि का प्रचार दिन पर दिन बढ़ता चला जा रहा है। हिन्दी टाइप-राइटर मशीन तैयार हो ही गई है। लीनो टाइप यन्त्र भी हिन्दी अक्षरों में तैयार हो चुके हैं। पर उर्दू लीनो अन्य भाषाओं में व्यवहार में आना कठिन ही नहीं वरन असम्भव है।

भाषाओं पर अपने देश की संस्कृति का बड़ा प्रभाव पड़ता है। प्रकृति का नियम है कि जो वस्तु जहाँ उत्पन्न होती है वहाँ का ही जल वायु उसके विकसित होने में अधिक सहायता करती है। जो भाषायें और लिपियाँ जिस देश में उत्पन्न होती हैं वे अपने जन्म-स्थान ही में अधिक विकास पा सकती हैं। रोमन और अरबी लिपियों का जन्म भारत के वातावरण में नहीं हुआ और न वे भारतीय संस्कृति में पली हैं अतः भारतवर्ष में इनका विकास असम्भव है। अरबी और रोमन लिपि

भारतीय संस्कृति में जोड़ी जा सकती हैं। उनमें पर्याप्त संख्या में परिश्रम और अध्यवसाय का खाद पानी दिया जा सकता है, किन्तु यह कभी सम्भव नहीं हो सकता कि वह भारतीय जलवायु में वृक्ष बनकर फूल फल से जनता को सन्तुष्ट कर सकें।

गमनागमन के अभाव के कारण पिछली शताब्दियों से उत्तरी भारत का दक्षिणी भारत से निकट सम्बन्ध नहीं रहा। इसी कारण हम पिछले युग को ऐसा देखते हैं कि दक्षिणी भारत में हिन्दी की गन्ध तक नहीं पहुँची। दक्षिणी भाषाओं का निकट सम्पर्क संस्कृत भाषा से रहा है। अतः दक्षिणी भाषाओं में नागरी लिपि और भारतीय संस्कृति ऐसी ही बनी हुई हैं जैसी कि उत्तरी भारत की भाषा में सन्निहित है। अब तो दक्षिणी भारत में हिन्दी जानने वालों का तूफान सा आ गया है। सन १९१५ से लेकर आज तक केवल २५ वर्ष के अल्प काल में दक्षिणी भारत में लाखों आदमी हिन्दी भाषा के ज्ञाता हो गये हैं और वहां हिन्दी के प्रति प्रगाढ़ स्नेह है यदि यही प्रगति रही तो एक दिन समस्त दक्षिणी भारत हिन्दी भाषा-भाषी हो जायगा। यदि दक्षिणी भारत इस भांत हिन्दी को अपना लेता है तो राष्ट्र भाषा बनने में हिन्दी को कोई रुकावट नहीं आती।

हिन्दी का साहित्य भी क्रमशः दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा है। ऊँची कक्षाओं में पढ़ाये जाने वाला साहित्य भी पर्याप्त संख्या में निर्मित हो चुका है। अब ऐसी कोई आपत्ति शेष नहीं रहती जिससे हिन्दी को माध्यम बनाकर ऊँची शिक्षा न दी जा सके। अब हिन्दी का साहित्य और शब्द भण्डार इतना पर्याप्त हो चुका है कि प्रत्येक विषय की शिक्षा

एम. ए. के समकक्ष हो आ सकती है। अतः हिन्दी का यह कठिनाई भी राष्ट्र-भाषा बनने में नहीं आ सकती।

भारतवर्ष में ज्यों-ज्यों वैज्ञानिक उन्नति होती जाती है त्यों-त्यों इसकी आवश्यकताएँ भी भिन्न भिन्न होती जा रही हैं। जब से हमारे देश में रेडियो का प्रचार बढ़ना आरम्भ हुआ है तब से देश को यह आवश्यकता अनुभव होने लगी है कि रेडियो की भाषा ऐसी हो जिससे सर्व साधारण के समझने में कोई कठिनाई न हो। भाषा ऐसी हो जिससे एक ही समय में हिन्दू मुसलमान और ईसाई समान आनन्द ले सकें और उनको उस भाषा के समझने में किसी कठिनाई का सामना न करना पड़े। इस समय में एक ऐसी भाषा की रचना हो रही है जो संस्कृत, अरबी और फारसी के सारगर्भित और सिलष्ट शब्दों से रहित रक्खी जा रही है। इसका नामकरण संस्कार भी हो चुका है हिन्दुस्तानी भाषा।

हिन्दुस्तानी भाषा का प्रश्न भी आजकल बड़ा गम्भीर प्रश्न बन रहा है किन्तु भाषा का प्रश्न इतना गम्भीर नहीं है जितना कि लिपि का प्रश्न है। हम हिन्दुस्तानी भाषा के पक्षपातियों में हैं और न हमें हिन्दुस्तानी भाषा को अपनाने में कोई आपत्ति है। हमें तो सिर्फ इतना कहना है कि नागरी-लिपि अपना ली जाय भाषा का नाम चाहे हिन्दी रख लिया जाय अथवा हिन्दुस्तानी भाषा सरल से सरल व्यवहार में लाई जाय तब ही वह राष्ट्र के भावों को व्यक्त करेगी और समझने में सहायता करेगी। भाषा को संस्कृतमय बनाना अथवा अरबी फारसी के रङ्ग में रँगना भाषा का गला घोटना है।

उपर्युक्त कारणों से स्पष्ट है कि भारतीय भाषाओं में से हिन्दी ही

एक भाषा ऐसी है जो राष्ट्र भाषा के स्थान पर पूर्णरूपेण सफल हो सकती है, राष्ट्र की अन्य भाषायें नहीं।

देश में राष्ट्र-भाषा का होना अत्यन्त आवश्यक है। जिन जातियों की अपनी राष्ट्र-भाषा नहीं वह नपुंसक हैं और निर्जीव हैं। वह संसार में मृतक के समान अपना जीवन व्यतीत करती हैं। वह जातियां राष्ट्र की जीवित जातियों के सामने अपना सिर ऊँचा नहीं कर सकतीं।

हमें चाहिये कि हम हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बनाने में भरसक प्रयत्न करें, जिससे संसार की जातियों के समक्ष हम भी यह कहने का साहस कर सकें कि हमारी भी राष्ट्र-भाषा है।

मितव्ययता

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—मितव्ययता की आवश्यकता और उसकी व्याख्या
(२) अपव्ययता की हानियां।
(३) मितव्ययता से लाभ।
(४) मितव्ययता का महत्व।
(५) मितव्ययता से हानि।
(६) मितव्ययता का चरित्र पर प्रभाव।
(७) मितव्ययता की उपलब्धि के साधन।
(८) उपसंहार—हमें मितव्ययी होना चाहिये।

मनुष्य अपने जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये धन-उपार्जन करता है। वह अपने उपार्जित धन को ऐसी व्यवस्था के साथ

व्यय करे, जिससे आवश्यक आवश्यकतायें पूरी हो जावें और उसमें से भविष्य की आवश्यकताओं के लिये भी कुछ धन बच जावे। वास्तव में यह है कि थोड़ा व्यय करने का गुण "मितव्ययता" कहलाता है। भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मितव्ययता बड़ी आवश्यक वस्तु है। संसार में धन कमाना इतना कठिन नहीं जितना उसे उचित रूप से व्यय करना कठिन है। धन जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कमाया जाता है। उसको उपयोगी कामों में व्यय करना ही बुद्धिमानी है किन्तु यह ध्यान रहे कि धन सदैव उचित कामों में ही व्यय हो। व्यय कभी आमदनी से अधिक न हो। ऐसा भी न हो कि आवश्यकतायें ठुकरा दी जावें। आवश्यकताओं के लिये व्यय न करना कंजूसी है। अतः अपनी चादर देखकर पांव फैलाने की नीति का नाम मितव्ययता है। मनुष्य को अपनी सामर्थ्य के अनुसार व्यय करना चाहिये क्योंकि यदि वह बिना समझे व्यय करता चला जायगा तो एक दिन अवश्य दिवालिया हो जायगा।

हम ऐसे अनेक व्यक्तियों को जानते हैं जिन्होंने धन को उचित ढंग से व्यय नहीं किया। जो कुछ पास था सब व्यय कर दिया और स्वयं पैसे पैसे को दूसरों का आसरा तकते फिरे। उनके दुःखमय जीवन को देखकर सबके हृदय में दुःख होने लगता है। मनुष्य की अपव्ययता और अभिमान प्रवृत्ति सदैव कष्टों में डालती है। उसका जीवन एक भयंकर और भाररूप हो जाता है। वह अपने जीवन का एक बोझ समझता है और अपनी मृत्यु ही में आनन्द अनुभव करता है।

अपव्ययता की बान प्रायः उन्हीं लोगों में देखने में आती है जो अपनी झूठ-मूठ की शान से प्रतिष्ठा पाने का अभिमान रखते हैं। अथवा

ऐसे खोखले जीवन के मनुष्य इस पिशाचिनी के शिकार होते हैं, जो अपना बनावटी जीवन रखते हैं और अपनी रहन सहन को सर्वसाधारण से ऊँचा बताते हैं। अथवा आराम तलब और विलासी व्यक्ति जिनकी विचार-शक्ति कुण्ठित हो जाती है, प्राय अपव्ययी देखे जाते हैं। असभ्य जातियां प्राय अपव्ययी होती हैं। वे जो कुछ उपार्जित करती हैं उसे वे तुरन्त उड़ा देती हैं, किन्तु सभ्य जातियों मे ऐसा नहीं होता। वह आगामी आवश्यकताओं के लिये अवश्य कुछ न कुछ बचाती हैं।

यह मनुष्य जाति के विकास का युग है। समाज में अब नित्य नई व्यवस्थित और विधायक प्रवृतियां विकसित हो रही हैं। मनुष्य में अब पहिले की अपेक्षा विचारशीलता, दूरदर्शिता और कर्तव्य-बुद्धि पर्याप्त मात्रा में विकसित हो रही हैं। आज मनुष्य अपने लिये ही नहीं जीवित रहता वरञ्च वह अपने परिवार, अपने समाज और अपने राष्ट्र के लिये भी जीवित रहता है। यदि वह अपनी सामर्थ्य को बिना समझे ही व्यय करता चला जायगा तो वह अपने उत्तरदायित्व को पूरा न कर सकेगा। ऐसी परिस्थिति में वह स्वयं तो कष्ट उठायेगा ही, किन्तु वह अपने आश्रितों को भी एक संकट में डाल जायेगा। अत मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने को मितव्ययी बनाये, तब ही वह अपने तथा अपने आश्रितों को सुखी बनाने में समर्थ हो सकेगा। वही देश शक्तिशाली गिने जाते हैं जिनमें मिताचारी, मिताविहारी और मितव्ययी व्यक्तियों की संख्या अधिक होती है। माता, पिताओं को चाहिये कि वह बाल्य काल ही से अपने बच्चों को मितव्ययी बनाने की चेष्टा करें। बालकों में मितव्ययता के विकास होने से आत्म-विश्वास की मात्रा बढ़ती है। मितव्ययता का गुण अभ्यास से आता है। निरन्तर के अभ्यास से अपव्ययी मनुष्य भी मितव्ययी बन सकता है।

मितव्ययता ही मानव मनुष्य जीवन को सफल बनाती है और सद्गुणों का विकास करती है। दुर्गुणों को रोकती है। कुत्सित मनोवृत्तियों को नष्ट करती है। सादगी और स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाती है। संकटों को सहने की सामर्थ्य पैदा करती है। सत् असत् का ज्ञान उत्पन्न करती है। मानवी मनोवृत्तियों को सन्मार्ग में ले जाने का निरत करती है।

मितव्ययता एक कठोर संयम है। इससे आत्म निषेध और आत्म-शासन की प्रवृत्ति बनती है। इससे ही मनस्विता और अक्षुण्ण स्वावलम्बन का विकास होता है। दया और करुणा के पनपने का पूरा अवसर मिलता है। धनु की स्थिरता मितव्ययता ही से हो सकती है।

मितव्ययता जीवन में सरलता और सादगी उत्पन्न करती है। ये दोनों गुण ऐसे हैं जो मनुष्य में देवत्व का गुण उत्पन्न करते हैं। मित-व्ययी कभी किसी का मुँह नहीं ताकता वह अपना काम सुचारु रूप से चला लेता है। राष्ट्र और समाज भी मितव्ययी के आश्रित जीवित रहते हैं।

मितव्ययता के अभ्यासियों को चाहिये कि वह कभी अपनी आमदनी से अधिक व्यय न करें। सदैव अपनी आमदनी को आवश्यक कामों में ही व्यय करें। आवश्यकता से अधिक व्यय करना फिजूलखर्ची कहलाती है और आवश्यकता से कम खर्च करना कंजूसी कहलाती है। मानव-जीवन में कंजूसी एक भयङ्कर रोग है। कंजूसी से स्वार्थ और परमार्थ कुछ भी प्राप्त नहीं होते। बुद्धिमान व्यक्तियों को इस रोग से दूर रहना चाहिये।

मितव्ययता राष्ट्र और समाज की जब ही तक लाभकारी है जब तक

मितव्ययता द्वारा संचित धन से राष्ट्र और समाज की सेवा हो। यदि मनुष्य मितव्ययता के साधन बर्तने में सावधान न रहे तो यह मितव्ययता कृपणता में परिवर्तित हो जाती है। कृपणता राष्ट्र और समाज दोनों के लिये बड़ी हानिकारक है। धन का वितरण राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है।

मितव्ययता की उपलब्धि के लिये मनुष्य को बहुत सावधानी से काम लेना चाहिये। मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी दैनिक आय व्यय का हिसाब रक्खे। दैनिक आय व्यय का हिसाब रखने से यह लाभ होगा कि व्यय की आवश्यक और अनावश्यक मदें ज्ञात हो जायँगी, जिससे अनावश्यक मद को बन्द करने का साधन मिल जायगा। जहाँ तक सम्भव हो मनुष्य को अपनी आमदनी और व्यय का लेखा स्वयं ही लिखना चाहिये, नौकरों के भरोसे कभी न रहना चाहिये। यदि नौकरों बिना काम न चले तो हिसाब किताब की चौकसी रखना बड़ा आवश्यक है। नौकरों को बदलते-बदलते रहने से नौकरों को धोखा देने का अवसर कम मिलता है। खाद्य भण्डारों का प्रबन्ध कभी नौकरों के भरोसे न छोड़ना चाहिये। तनिक सा लापरवाही करने से खर्चा अधिक बढ़ जाता है। दैनिक जीवन में मनुष्य कपड़ों पर अधिक व्यय करता है। कपड़े वही तैयार कराये जायें जिनकी जीवन में आवश्यकता है। बोक्सेज की शोभा बढ़ाने के लिये कपड़े बनवाना अपव्ययता की गिनती में आता है। सैर सपाटे और बाग-बगीचों के खर्चे ऐसे हैं जिन पर प्रायः निश्चय से अधिक व्यय हो जाता है, इसमें समुचित कमी कर देनी चाहिये। यदि खर्चे बढ़ते ही जा रहे हों तो खेल तमाशा और क्लब-घरों के खर्चों को कम कर देना चाहिये,

मितव्ययता द्वारा सञ्चित धन से राष्ट्र और समाज की सेवा हो। यदि मनुष्य मितव्ययता के साधन वर्तने में सावधान न रहे तो यह मितव्ययता कृपणता में परिवर्तित हो जाती है। कृपणता राष्ट्र और समाज दोनों के लिये बड़ी हानिकारक है। धन का वितरण राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है।

मितव्ययता की उपलब्धि के लिये मनुष्य को बहुत सावधानी से काम लेना चाहिये। मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी दैनिक आय व्यय का हिसाब रखे। दैनिक आय व्यय का हिसाब रखने से यह लाभ होगा कि व्यय की आवश्यक और अनावश्यक मदें ज्ञात हो जायँगी, जिससे अनावश्यक मद को बन्द करने का साधन मिल जायगा। जहां तक सम्भव हो मनुष्य को अपनी आमदनी और व्यय का लेखा स्वयं ही लिखना चाहिये, नौकरों के भरोसे कभी न रहना चाहिये। यदि नौकरों बिना काम न चले तो हिसाब किताब की चौकसी रखना बड़ा आवश्यक है। नौकरों को बदलते-बदलते रहने से नौकरों को धोखा देने का अवसर कम मिलता है। खाद्य-भण्डारों का प्रबन्ध कभी नौकरों के भरोसे न छोड़ना चाहिये। तनिक सी लापरवाही करने से खर्चा अधिक बढ़ जाता है। दैनिक जीवन में मनुष्य कपड़ों पर अधिक व्यय करता है। कपड़े वही तैयार कराये जायें जिनकी जीवन में आवश्यकता है। बोक्सेज की शोभा बढ़ाने के लिये कपड़े बनवाना अपव्ययता की गिनती में आता है। सैर सपाटे और बाग-बगीचों के खर्चे ऐसे हैं जिन पर प्रायः निश्चय से अधिक व्यय हो जाता है, इसमें समुचित कमी कर देनी चाहिये। यदि खर्चे बढ़ते ही जा रहे हों तो खेल तमाशों और क्लब-घरों के खर्चों को कम कर देना चाहिये,

(२) दीर्घ जीवी होने के निम्नलिखित साधन हैं —
स्वच्छता, सादा भोजन, नशा का त्याग, व्यायाम,
गहरी निद्रा, नियमित जीवन, ब्रह्मचर्य।

(३) हमारा स्वास्थ्य और भविष्य की आशा।

जीवन सबको प्यारा है। सबकी अभिलाषा रहती है कि हमारा जीवन स्वस्थ और सुन्दर बने। हम सौ वर्ष तक जीवित रहें और हमारा समस्त जीवन लोक सेवा में व्यतीत हो। यह बड़ी सुखद और पवित्र भावनायें हैं। हमें दीर्घ जीवन इसलिये प्राप्त हो कि हम परोपकार और समाज सेवा कर सकें। यदि दीर्घ जीवन हम इसलिये चाहते हैं कि हम दीर्घ काल तक सासारिक सुखों को उपभोग करें तो यह भावना निकृष्ट कोटि में गिनी जाती है। यदि हमारा दीर्घ-जीवन लोक-रञ्जन और लोक-सेवा में व्यतीत हो रहा है तो निस्सन्देह हमारा जीवन सार्थक है अन्यथा हमारा जीवन एक झंझट है और एक परेशानी है।

अब प्रश्न उठता है कि हम कैसे दीर्घ जीवी हो सकते हैं? इसका मैं यही एक उत्तर दूगा कि शुद्ध वायु, पवित्र भोजन, सयत जीवन और उत्तम विचार से हमें दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है। शुद्ध वायु के साथ शारीरिक स्वच्छता की भी बड़ी आवश्यकता है। बताया गया है कि स्वच्छता स्वास्थ्य की जननी है और स्वास्थ्य दीर्घ जीवन का पिता है। अत हमें चाहिये कि हम दीर्घ जीवन प्राप्त करने के लिये स्वच्छ रहें और उत्तम स्वास्थ्य बनाने की चेष्टा करें।

दीर्घ-जीवन प्राप्त करने के लिये स्वच्छता सबसे आवश्यक वस्तु है। हमें चाहिये कि हम शुद्ध वायु, शुद्ध जल और शुद्ध भोजन का आयोजन

करें। अपने कमरा, दरी और उसके अन्य सामानों को स्वच्छ रक्खें। नित्य स्नान करें। आदमी को बिछावन तथा पहनने के कपड़ों को साफ रखने। रहने का कमरा और मकान गन्दगी से दूर हो। शरीर के प्रत्येक अङ्ग को गन्दगी से दूर रक्खे तथा वातावरण ऐसा रक्खे जिसमें किसी प्रकार की गन्दगी और बेचैनी न हो। विचारों को सदैव शुद्ध रक्खें। विचारों की शुद्धि से बाहरी शुद्धि का बड़ा सम्बन्ध है। शुद्ध हृदय बाहरी गन्दगी को पसन्द नहीं करते।

दीर्घ-जीवन का दूसरा साधन है उत्तम भोजन। दीर्घ जीवन प्राप्ति के अभिलाषियों को चाहिये कि वह भोजन की स्वच्छता और सादगी पर विशेष ध्यान रक्खें क्योंकि जीवन का दारमदार उत्तम भोजन ही के ऊपर निर्भर है। हम सदैव शीघ्र पचने वाला और पुष्टिकारक सादा भोजन करना चाहिये। मस्तिष्क की शक्ति बढ़ाने और शरीर की शक्ति को ठीक रखने के लिये दाल भात रोटी दूध तरकारी हरे फल और घी से बढ़कर दूसरा भोजन नहीं है। भोजन सदैव स्वच्छ शुद्ध और रुचि प्रिय ही करना चाहिये। ऐसा भोजन कभी नहीं करना चाहिये जिसको देखने से भूख उत्पन्न नहीं हो। सदैव सादा भोजन करना चाहिये। भारी भोजन आलस्य उत्पन्न करता है और स्मरण शक्ति को मन्द करता है। भोजन देश काल और परिस्थिति के अनुकूल होना चाहिये। आयु और अवस्था के अनुसार भी भोजन होना चाहिये। हरे शाक और शुद्ध घी को भोजन में अधिक महत्त्व देना चाहिये। भोजन में शाक, मिठाइयां अचार मुरब्बे इत्यादि का बाहुल्य स्वास्थ्य को हानि पहुँचाता है। भोजन में जितने ही कम पदार्थ हों उतना ही अच्छा है। भोजन जितना

ही सादा और मिर्च मसाले से रहित होगा उतना ही वह अधिक स्वास्थ्य-वर्द्धक होगा। भोजन में रसदार पदार्थों का होना आवश्यक है क्योंकि शुष्क भोजन देर में पचता है और अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। भोजन में स्निग्ध पदार्थों की मात्रा भी अच्छी नहीं है। सदैव भोजन ऐसा करना चाहिये जो आसानी से पचे। फल ताजे और अधपके विशेष उत्तम होते हैं। अधिक पके और घुले फल स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं। दूध सदैव धारोष्ण पीना चाहिये। भोजन सदैव धीरे धीरे और चबाकर करना चाहिये जिससे वह शीघ्र पच जाय।

दीर्घ जीवन प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि कभी जीवन में नशीली वस्तुओं का उपभोग न करें। शराब, अफ़ीम, भांग, चाय, कहवा आदि मादक वस्तुओं से सदैव बचना चाहिये क्योंकि यह वस्तुयें मस्तिष्क और आयु को क्षीण करती हैं।

दीर्घ जीवी बनने का अन्य साधन है व्यायाम — हमारे जीवन के लिये जिस प्रकार स्वच्छ वायु और स्वच्छ भोजन आवश्यक हैं, उसी प्रकार नियमित व्यायाम की भी आवश्यकता है। व्यायाम के द्वारा शरीर के प्रत्येक भाग में शुद्ध रक्त का सञ्चार होता है, क्योंकि व्यायाम करने से पेशियों का दबाव रक्तवाहिनी नाड़ियों पर पड़ता है जिससे रक्त का सञ्चार तीव्र होता है। व्यायाम से पाचन शक्ति भी तीव्र होती है कान्ति बढ़ती है, निर्भयता आती है, उत्साह की अभिवृद्धि होती है और मन फुर्तीला हो जाता है।

जब तक हम नियमित व्यायाम द्वारा अपने को स्वस्थ नहीं बना लेते, तब तक हमारा शरीर और मस्तिष्क ठीक नहीं रह सकता। हमारा मतलब

यह नहीं है कि आप दण्ड-बैठक ही लगायें तभी व्यायाम हो। आप फुटबाल खेल सकते हैं वालीबाल खेल सकते हैं। खुली वायु में दौड़ सकते और टहल सकते हैं। निष्कर्ष यह है कि किसी विधि शरीर को हिलाओ-डुलाओ। यदि तुम व्यायाम नहीं करोगे तो याद रक्खो तुम दुनिया में अधिक काल तक नहीं रह सकते और न सुखमय जीवन व्यतीत कर सकते हो।

दीर्घ जीवी बनने का चौथा साधन है प्रगाढ़ निद्रा एक अंग्रेजी लोकोक्ति है—"Early to bed and early to rise makes a man healthy wealthy and wise" अर्थात् जल्दी सोने और जल्दी उठ जाने से मनुष्य स्वस्थ समृद्ध एवं बुद्धिमान बनता है। मनुष्य को चाहिये कि वह ९ बजे तक सो जाय और ४ बजे उठ बैठे और इस काल में प्रगाढ़ निद्रा का भोग करे। स्वस्थ पुरुष को प्रगाढ़ निद्रा आता है। गहरी नींद लेने वाले पुरुष दीर्घ-जीवी होते हैं।

दीर्घ जीवी बनने का पाँचवा साधन है नियमित जीवन— अनियमित जीवन में स्वास्थ्य का सत्यानाश हो जाता है। दैनिक-जीवन के क्रियाकलापों को प्रत्येक काम सावधानी से करने की आदत डालनी चाहिये। प्रत्येक काम नियम-बद्ध होना चाहिये। यदि कोई काम करना हो तो पहले सोच समझ लेना चाहिये, तब उस काम को आरम्भ करना चाहिये। उत्तम पुरुष वह हैं जो काम को सोच समझ लेने के बाद आरम्भ करते हैं। जो लोग अपना काम को निश्चित समय पर नहीं करते वह कभी जीवन में सफल नहीं हो सकते। जो काम करने हो उसे कभी टाल टूल न करो।

उस काम में फौरन लग जाओ। किसी काम को इसलिये न पड़ा रहने दो कि वह भविष्य में हो जायगा।

दीर्घ जीवी होने के लिये छठा साधन है ब्रह्मचर्य—ब्रह्मचर्य से मेधा-शक्ति बढ़ती है, दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है। स्वास्थ्य ठीक रहता है। उत्साह और बल बढ़ता है। संसार में यश प्राप्त होता है। सुन्दर वंश चलता है। रोगों का नाश होता है। ब्रह्मचारी की मेधा-शक्ति इसलिये तीव्र हो जाती है कि वह वीर्य की रक्षा करता है। सदैव उसके मस्तिष्क में अच्छे-अच्छे विचार प्रवाहित होते हैं। वीर्य-रक्षा से मस्तिष्क पुष्ट होता है। मस्तिष्क पुष्ट होने से मेधा तीव्र हो जाती है। संसार में जितने बड़े काम हुए हैं वह सब ब्रह्मचर्य के बल पर हुए हैं। ब्रह्मचर्य के बल पर ही देवताओं ने मृत्यु पर विजय पाई है। कहा हमारे वीर्यवान, सामर्थ्यवान तथा प्रतिभावान पूर्वज और कहा वीर्यहीन, अकर्मण्य और निस्तेज उनकी सन्तान हम लोग। आकाश पाताल का अन्तर है। हमारे इस पतन का कारण वीर्यनाश ही है। ब्रह्मचर्य-नाश ने हमारा सुख, तेज, आरोग्य, बल, विद्या, स्वातन्त्र्य और धर्म सब मिट्टी में मिला दिया है।

"मरणं विन्दु पातेन जीवनं विन्दु धारणात्"

भगवान् ने कहा है कि वीर्य का एक बूँद नष्ट करना मरण है और उसकी एक बूँद धारण करना जीवन है। वीर्य की रक्षा करना ही जीवन है और उसका नाश करना ही मृत्यु है। उन्नति का मूल मन्त्र ब्रह्मचर्य है। धन्वन्तरी जी ने ब्रह्मचर्य के महत्व पर अपने शिष्यों को उपदेश दिया था—"मृत्यु, रोग तथा बुढ़ापे को नाश करने वाला ब्रह्मचर्य है।"

(७) दुग्धाहार।

(८) उपसंहार—उत्तम भोजन का महत्व।

हमारा शरीर प्रत्येक समय कुछ न कुछ काम करता रहता है। हम जब बेसुध होते हैं तब भी हमारा हृदय और फेफड़े तथा अन्य शारीरिक अवयव अपना कार्य पूर्ववत करते रहते हैं। काम करने से शरीर घिसता और क्षीण होता है। चलने, शब्द बोलने, तनिक भी सोचने-विचारने अथवा चिन्ता करने से प्रत्युत स्वास लेने से भी शरीर में कुछ न कुछ ह्रास होता है। यदि किसी व्यक्ति को तोलकर किसी कड़े परिश्रम पर लगा दिया जाय, काम के पश्चात उसे फिर तोला जाय तो उस व्यक्ति का भार पहले की अपेक्षा अवश्य कम हो जायगा। स्पष्ट है कि काम-धन्धा करने से शरीर क्षीण होता है। उपवास की दशा में भी शारीरिक क्षीणता बढ़ती जाती है और शरीर का भार कम हो जाता है। यह शारीरिक क्षीणता और ह्रास केवल आहार से ही पूरा होता है। आहार ही से शरीर के टूटे हुए सेलों (Cells) के स्थान पर नये सेल बनते और उनकी मरम्मत होती रहती है।

अब समस्या बनती है कि हमारा भोजन कैसा होना चाहिये? आहार ही शरीर का सर्वस्व है किन्तु आहार के महत्व को लोगों ने समझा ही नहीं है। इसी कारण से संसार में दुःखों की मात्रा नित्यश: बढ़ती जाती है। आहार तीन प्रकार का होता है— सात्विक राजसिक और तामसिक। हमारी आयु, बलवीर्य और सुख की वृद्धि केवल आहार पर ही निर्भर है।

सात्विक भोजन से हमारी बुद्धि सात्विकी, राजसिक भोजन से राजसी

चबा कर धने शने करना चाहिये। चबा-चबा कर खाया हुआ भोजन शीघ्र पच जाता है और स्वास्थ्य के लिये हितकारी सिद्ध होता है।

भोजन करते समय शान्त और प्रसन्न रहना चाहिये। क्रोध के साथ किया हुआ भोजन चाहे वह सात्विकी हो क्यों न हो, राक्षसी हो जाता है। विलासी लोग अपने विलास के लिये अनेक पौष्टिक पदार्थ खाते हैं, किन्तु वह उसे पचा नहीं सकते। अत अनेक रोगों के शिकार हो जाते हैं। हमें चाहिये कि हम मिठाई, खटाई और मसालेदार चीजें खाकर चटोरे न बनें। सदा सादा और स्वच्छ भोजन करें। चटपटी चीजें स्वास्थ्य को बिगाड़ देती हैं।

भोजन दिन में दो बार करना चाहिये। १०, ११ बजे प्रात काल और ७, ८ बजे शाम को भोजन करना उचित है। शाम को भोजन करने के घण्टे भर बाद चीनी पड़ा हुआ गर्म दूध पीना चाहिये। दूध को सदैव धीरे धीरे पीना चाहिये। एक साथ ही में दूध पीना स्वास्थ्य को अधिक लाभ नहीं करता। भोजन कभी अधिक गर्म न खाना चाहिये। अधिक देर का रक्खा हुआ भोजन भी न करना चाहिये, क्योंकि ऐसे भोजन में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। भोजन करने के एक घण्टे तक कोई शारीरिक और मानसिक परिश्रम न करना चाहिये। भोजन के समय जहां तक हो सके, पानी कम पिये तो बहुत अच्छा है। भोजन के १ घण्टे बाद इच्छानुसार पानी पी लेना स्वास्थ्य के लिये अधिक हितकर होता है। भोजन के पश्चात कुछ दूर शनै शनै टहलना बड़ा उपयोगी और स्वास्थ्य-वर्द्धक है। भोजन करके चारपाई पर पड़ जाना अच्छा नहीं है।

भोजन में फलाहार का स्थान अधिक महत्व का है। प्रत्येक को फलाहार करना अत्यन्त आवश्यक है। फलों में रोगनाशक शक्ति बहुत होती है। भोजन करने के दो घंटे बाद फल खाना उत्तम है। फलों का भोजन स्वास्थ्य, आयु शक्ति और बुद्धि को बढ़ाता है शरीर प्रसन्न और हल्का रहता है। रक्त साफ होता है। मन में कुवासनायें नहीं उत्पन्न होतीं। फलों में गुण तेज और विटामिन अधिक होती है, इस कारण फलाहारी कभी बीमार नहीं हो सकता।

भोजन करने वाले पदार्थों में दूध से बढ़कर कोई दूसरी वस्तु नहीं। सबसे अधिक गुणकारी भोजन दूध है किन्तु धारोष्ण दूध ही में ये सारी विशेषतायें हैं। दूध बल और वीर्य को बढ़ाता है और मन को शान्ति देता है। दुग्धाहार से बुद्धि पवित्र होती है और विचारों में पवित्रता आती है। दूध सदैव कपड़े से छानकर पीना चाहिये। दूध के स्वास्थ्यवर्द्धक कीटाणु गर्म करने से मर जाते हैं। अतः दूध ताजा और धारोष्ण पिया जाय तो बहुत ही अच्छा है। देर के रक्खे हुए दूध को बिना गर्म किये कभी न पीना चाहिये।

भोजन के पश्चात दाँत और मुँह को खूब साफ करना चाहिये। दाँत और मुँह साफ न रहने की दशा में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

भारतवर्ष में ग्राम-सुधार

विचार-तालिकायें —

(१) प्रस्तावना—गाँवों की दुर्दशा और उनके सुधार की आवश्यकता।

(२) रूढ़िवाद और निरक्षरता ने गांवों का पतन किया है।

(३) रूढ़िगत अन्ध विश्वास।

(४) गाव सुधार कैसे हो?

कृषी की सुव्यवस्था हो, अच्छे हल और औज़ारों का प्रयोग किया जाय, उत्तम खादों का प्रबन्ध हो, उत्तम बीजों का प्रबन्ध हो, रोगों से फ़सलों की रक्षा की जाय, फलों की खेती का प्रचार बढ़ाया जाय।

(५) पशुओं के चरागाहों का प्रबन्ध और बीमारियों की रोक थाम

(६) गांवों में सफ़ाई की व्यवस्था।

(७) गावों में दवा का प्रबन्ध और वैद्यों की नियुक्ति।

(८) साक्षरता-प्रसार।

(९) घरेलू उद्योग धन्धों का पुनरुत्थान।

(१०) गावों के मनोरञ्जन।

(११) स्वास्थ्य-सुधार और खेलों का प्रचार।

(१२) पुस्तकालयों और वाचनालयों का प्रबन्ध।

(१३) कुरीतियों का निवारण।

(१४) पञ्चायतों की स्थापना।

(१५) उपसंहार— नवीन उपयोगी संस्थाओं की योजना।

भारतवर्ष की ९० प्रतिशत जनता गावों में रहती है। भारत के नगरों के अवलोकन से भारत की वास्तविक स्थिति का पता नहीं चलता। कहा जाता है कि भारतवर्ष के गाव किसी समय में सुख शान्ति के केन्द्र थे, किन्तु आज के गाव दुख, क्लेश, अशान्ति, अधःपतन, बेकारी और

पारस्परिक वैमनस्य के अड्डे बने हुए हैं। कहीं कर्जे का बोझ है कहीं निरक्षरता है कहीं मुकदमों की भरमार है कहीं जुआ खेला जा रहा है कहीं व्यभिचार का बोलबाला है। यहां तक कहना यदि गांवों का वर्तमान हाल का नक्शा खींचा जाय तो कुछ अत्युक्ति न होगी। गांव वालों की दशा इतनी शोचनीय है कि उनकी दशा में परिवर्तन करना एक कठिन समस्या हो गई है। भारतवर्ष की राजनीति में गांव वालों का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। गांवों को उत्थान किये बिना भारत की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकती। गांवों की दशा सुधारने ही से आज भारतवर्ष का कल्याण है। देश के सौभाग्य से महात्मा गांधी का ध्यान ग्राम सुधार की तरफ गया है। उन्होंने ग्राम सुधार की योजना को सन् ३७ ई० में कांग्रेसी मन्त्रि मण्डलों के सामने रक्खा और मन्त्रि मण्डलों ने ग्राम-सुधार की योजना को अपने अपने प्रान्तों में कार्यान्वित करने की चेष्टा की। वर्तमान गवर्नमेंट ने भी इस समस्या की ओर विशेष ध्यान दिया है और पिछले पांच वर्षों से कितने ही करोड़ रुपया ग्राम-सुधार पर व्यय कर रही है।

हमारे देश में ७ लाख के लगभग गांव हैं। ३२ करोड़ भारतीय ग्राम्य जीवन व्यतीत करते हैं। भारतवर्ष का मुख्य व्यवसाय खेती है। खेती के द्वारा ही भारतवर्ष की ९० प्रतिशत जनता भोजन और कपड़ा पाती है। ग्राम-सुधार के लिये खेती की स्थिति में सुधार करना विशेष आवश्यक है। गांव वालों की गरीबी जब तक दूर होना सम्भव नहीं तब तक उनकी आर्थिक दशा को सुधारने का मसला नहीं निपटाया जाय। साधारण तौर पर आम गांव वालों के रहन सहन की शिकायत करते हैं किन्तु उनका रहन सहन बिना पैसे के ऊँचा नहीं हो सकता। आर्थिक

स्थिति को उन्नति देने के लिये खेती के अतिरिक्त भारतवर्ष में ऐसा कोई व्यवसाय नहीं, जो गांव वालों की बेकारी की समस्या को हल कर सके। आजकल भारतवर्ष की खेती की बड़ी बुरी दशा है।

भारतवर्ष की उपज बहुत ही कम है। यद्यपि किसान भरसक प्रयत्न करते हैं किन्तु फिर भी अच्छी फ़सल नहीं उगा सकते। इन सबके कारण सिंचाई के साधनों का अभाव है। गरीब किसान गरीबी के कारण कुआ नहीं बनवा सकते। अतः हमारे किसान आसरे की खेती करते हैं। बादल बरसे तो खेती हो अन्यथा नहीं।

इसके अतिरिक्त हमारे किसान नई प्रकार के हलों का प्रयोग करना भी नहीं जानते। हमारे देशी हल पृथ्वी की उपजाऊ मिट्टी को ऊपर लाने में असमर्थ हैं। खाद जो खेती का प्राण है, वह हमें कम मिलता है। हमारा सारा गोबर जो खाद बनाने का सबसे उत्तम साधन है, ईंधन की भांति जला दिया जाता है। दूसरे खाद का प्रयोग भी हमारे किसान नहीं जानते, न खाद बनाने का नियम ही उन्हें आता है। किसानों को चाहिये कि वह वैज्ञानिक ढङ्ग के गढ्ढों में अपना खाद तयार करें। उत्तम बीज के अभाव में भी पैदावार का औसत कम हो जाता है। हमारी गवर्नमेण्ट को चाहिये कि वह गाव-गाव उत्तम बीज गोदामों का प्रबन्ध करे और उसमें उत्तम से उत्तम बीजों को सुरक्षित रखवाये। खेती की बीमारियों को रोकने के लिये भी सरकार प्रबन्ध करे जिससे फ़सलों को अधिक हानि न हो। वर्तमान गवर्नमेण्ट यदि तनिक भी उसे प्रोत्साहन दे तो किसानों की बहुत कुछ दशा सुधर सकती है, किन्तु वह ऐसा करने क्यों चली? कांग्रेस मन्त्रि मण्डलों ने ग्राम सुधार का कार्य इन्हीं उद्देश्यों को सम्मुख

का ठिकाना ही नहीं रहता। अनेक छोटे छोटे तालाब भर जाते हैं, जिनमें मलेरिया उत्पन्न करने वाले मच्छर उत्पन्न होते हैं। गोबर और कूड़े करकट के ढेरों से लाखों मक्खियां उत्पन्न होती हैं, जो गन्दगी और रोगों को चारों तरफ फैलाती हैं। बस, नर्क के सहोदर गांव वर्षा ऋतु ही में बनते हैं। सारी बातों का कारण गांव वालों की अशिक्षा है। गांव-सुधार आर्गेनाइजर्स को चाहिये कि वह गांव वालों को सफाई के लाभ समझावें और गन्दगी की बुराइयों को उनके सामने रक्खें।

गन्दगी के कारण गांवों में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं, जिनमें प्रत्येक वर्ष गांव-निवासी काल-कवल होते हैं। मलेरिया बुखार तो लाखों की जान लेकर ही दम लेता है। ग्रीष्म के दिनों में हैजा फैलता है। अतः आवश्यक है कि गांव गांव में दवा और डाक्टर मिलने का प्रबन्ध हो, जिससे बेचारे ग्राम-निवासी कुत्ते की मौत न मरें।

गांवों में साफ़ पानी मिलने का कोई प्रबन्ध नहीं है। गांव वाले या तो कच्चे कुओं का गन्दा पानी पीते हैं अथवा तालाबों का पानी पीते हैं, जो बरसात में जमा कर लिया जाता है। कहीं कुएं हैं भी तो उनकी ऐसी बुरी दशा है कि बाहर का समस्त गन्दा पानी उन्हीं में जाता है। उन पर कोई मनि आदि नहीं होती। गवनमेंएट को चाहिये कि पानी पीने के कुओं का वह प्रबन्ध करदे और उन कुओं की मनि आदि बनवादे, जिनमें बाहर से पानी जाता है। ऐसे कुएँ किसी पञ्चायत की देख-रेख में रहने चाहियें, जो किसी व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति न समझी जावे।

ग्राम-सुधार के कामों में जनता और सरकार दोनों ही के सहयोग की आवश्यकता है। गांवों की प्रत्येक परिस्थिति बिगड़ गई है, जिनके

सुधार की आवश्यकता है। गाँव वालों का आर्थिक ही पतन नहीं हुआ है उनकी शारीरिक और मानसिक दशा भी बहुत कुछ क्षीण हो चुकी है। गाँव वालों की आर्थिक समस्या दो प्रकार से हल हो सकती है—एक तो गाँव वालों की आमदनी में वृद्धि कराई जाय और दूसरे उनकी अपव्ययता को रोक दिया जाय। क्योंकि यदि हम किसी प्रकार गाँव वालों की आमदनी को तो बढ़ा दें और उनकी अपव्ययता को न रोकें तो हमारा प्रयत्न निष्फल चला जायगा। अतः उनकी खेती की उत्पादन शक्ति उन्नत बताये हुए उपायों से बढ़वाई जाय। मितव्ययता रखने के लिये उनकी मुकदमेबाजी शराबखोरी और व्यभिचार आदि पर पर्याप्त नियंत्रण रक्खा जाय तब कहीं उनकी दशा में कुछ सुधार होगा। गाँव वालों की बेकारी की समस्या भी हल हो सकती है कि गाँवों में घरेलू उद्योग धन्धों का पुनरुत्थान किया जाय जिससे वह बेकार समय को इन उद्योग धन्धों में लगाकर अपनी आजीविका को बढ़ा लें। भारत के नगरों को अब इतना सुधारने की आवश्यकता नहीं है जितना कि गाँवों के सुधारने की आवश्यकता है क्योंकि बिना क्रान्तिकारी युग-परिवर्तन किये गाँव वालों की मोह-निद्रा को तोड़ना कठिन है।

ग्राम-सुधार का सबसे महत्वशाली अंग यह है कि गाँव वालों की कूप मण्डूकता और उनके परम्परागत कुप्रथाओं को मिटाया जाय। कुरीतियाँ गाँव वालों में ऐसी घर कर गई हैं जिनका निकालना बड़ा कठिन हो रहा है। इस कार्य के लिये काफी प्रचार की आवश्यकता है। ब्याह, गमी और अन्य उत्सवों के अवसर पर वाह ! वाह ! की खातिर गाँव वाले अनाप शनाप व्यय कर डालते हैं और झूठी मर्यादा और लोक-लाज के

वश में होकर किसान अपने कोठे कुठिये भी वेच देते हैं। नेताओं का कर्तव्य है कि वह इन कामों के प्रति गाव वालों के हृदय में घृणा के भाव भरें और उन्हें मिताचारी और मितव्ययी बनावें। उनके हृदय से परम्परा-गत कुरीतियों को निकाल कर उनके अन्ध-विश्वास और कूप मण्डूकता को दूर करें। उनका भय दूर करें। उन्हें सच्चे नागरिक बनायें। उनको उनके अधिकारों से परिचित करावे। पटवारी, कारिन्दा और पुलिस के अत्याचारों से उन्हें बचायें। जमींदार की धौंस और वेगार से बचाने के लिये उनमें जीवन उत्पन्न करें तब ही गाव सुधार की ओर आगे बढ़ सकते हैं।

गांव वालों के आपसी झगड़ों को निबटाने के लिये ग्राम-पञ्चायतें होनी चाहियें। पञ्चायतों को क़ानूनी अधिकार होने चाहियें। पञ्चायतें केवल शासन-प्रबन्ध ही न करें वरञ्च गांव वालों की दुष्प्रवृत्तियों को भी रोकें। गाव-गाव में सहयोग-समितियों की स्थापना की जाय, जो सस्ती ब्याज दर पर गाव वालों को रुपया दे और उन्हें मितव्ययी बनाकर महाजनों के खूनी हाथों से रक्षा करे। को आपरेटिव सोसाइटियां ही गाव वालों को महाजनों के पञ्जों से छुड़ा सकती हैं तब ही गाव वाले स्वस्थ वातावरण में सास ले सकते हैं।

गावों के पतन का एक कारण उनकी निरक्षरता भी है। गाव वाले अशिक्षा के कारण सामाजिक कुरीतियों के शिकार हो रहे हैं। ये लोग चपरासी, मुखिया, सिपाही, पटवारी और थानेदार से बड़े डरते हैं। ये लोग उन्हें तङ्ग करते हैं और उनको लूटते-खसोटते भी हैं। महाजन और ज़मींदार भी उन्हें अपने चगुल में फँसाकर उल्लू बनाये रखते हैं। गाव

वाले संसार की स्थिति से बिलकुल अनभिज्ञ होते हैं। उनके लिये गाँव ही संसार है। गाँव वालों की निरक्षरता को दूर करने के लिये आवश्यक है कि शिक्षा अनिवार्य करदी जाय जिसमें बालक और बालिकायें दोनों साथ २ शिक्षा पावें। १४ वर्ष से लेकर ४ वर्ष तक के प्रौढ़ों के लिये रात की प्रौढ़-पाठशालायें खोल दी जावें। शिक्षा का सारा व्यय गवर्नमेंट बरदाश्त करे। गाँव की पाठशालायें मनोरञ्जन का केन्द्र हों। अध्यापक अनुभवी और सेवा-भाव वाले हों। पाठशालायें शान्ति का बिगुल बजाने वाली हों। पुरुषों की शिक्षा के साथ ही साथ स्त्रियों की शिक्षा का भी समुचित प्रबन्ध हो। राष्ट्र-निर्माण काम में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक उपयुक्त हो सकती हैं। भारत में योग्य नागरिक योग्य मातायें ही पैदा कर सकती हैं। पाठशालाओं के साथ ही साथ गाँवों में पुस्तकालय और वाचनालय भी खोले जावें जिससे गाँव वाले देश विदेश की परिस्थिति से परिचित हो जाय। प्रान्तीय सरकारों ने ग्राम पुस्तकालयों की आयोजना की है किन्तु अभी उनका क्षेत्र संकुचित और परिमित है। भारतीय लेखकों को चाहिये कि वह ऐसा साहित्य-निर्माण करें जो गाँव वालों के काम हो और उससे वह लाभ उठा सकें। यदि वह साहित्य उन्हीं की भाषा में हो तो और भी अच्छा है। शहर की भाषा को गाँव वालों के सिर पर लादना एक प्रकार का अत्याचार करना है।

ग्राम सुधार के साधनों में गाँव के उद्योग धन्धों को पुनरुत्थान देना भी है। उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देने से गाँव वालों का बेकार समय इन कामों में लग जायगा। इनकी मासिक आमदनी भी कुछ बढ़ जायगी और महाजन के शिकारी पंजे से भी सुरक्षित हो जावेंगे। आजकल किसान

भूखे मरते हैं, उनके पास तन ढाकने को वस्त्र नहीं हैं। क़र्ज़ के बोझ की चिन्ता से घुले जा रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में उद्योग धन्धों को अपना लेने से उनकी बहुत कुछ दशा सुधर सकती है। चर्खा चलाना कपड़ा बुनना, साबुन बनाना, शहद की मक्खियां पालना, रस्सियां बनाना, चटाइयां बनाना, तेल इत्र आदि बनाना ऐसे व्यवसाय हैं जिनमें अधिक पूँजी की आवश्यकता नहीं है। गांव वाले अपनी रुचि के अनुसार कोई सा धन्धा चुन सकते हैं।

गांव वालों के मनोरञ्जन के लिये भी कुछ प्रबन्ध आवश्यक है, क्योंकि बिना मनोरञ्जन के ज़िन्दगी कुछ अधूरी सी रहती है। गांव के लिये सरल, सुलभ और सस्ते मनोरञ्जन होने चाहिये। प्रान्तीय सरकारें मनोरञ्जन के लिये गांव-गांव रेडियो लगवा रही हैं, किन्तु यह मनोरञ्जन गांव वालों की दृष्टि से बहुत ही महँगे पड़ेंगे। आवश्यकता है कि गांवों में देशी खेलों को खेलने की योजना की जाय। उनकी प्रतियोगितायें कराई जांय, उनको पुरस्कार दिये जायें। नगर के आमोद-प्रमोद की चीज़ों की गांवों में व्यवस्था करना ठीक नहीं और न ऐसा मनोरञ्जन गांव वालों के अनुकूल ही हो सकता है।

गांवों की गन्दगी को दूर करना भी गांव सुधार का एक अङ्ग है। गांव की गन्दगी प्रत्येक वर्ष लाखों प्राणियों की जान लेती है। गांव के कुएँ गलियां और नालियां बड़ी गन्दी होती हैं जिन्हें देखकर घिन आती है, गांव वालों के बच्चे और स्त्रियाँ बड़े गन्दे रहते हैं। ग्राम सुधार आर्गेनाइज़रों को चाहिये कि वह सफ़ाई का पूरा ध्यान रक्खें। गलियों की और कुओं की सफ़ाई पर विशेष ध्यान दें। उनके मकानों की आकृति

वहाँ उनके रहने और पशुओं के बाँधने के घर अलग अलग बनायें, घर वैज्ञानिक ढंग से बने हुए हों, मकानों में खिड़कियाँ और रोशनदान पर्याप्त संख्या में हों। लगान भी दर बहुत अधिक है। लगान जहाँ तक सम्भव हो सके गवर्नमेंट को कम कर देना चाहिये। वर्तमान कानून भी कुछ ऐसे दोषपूर्ण हैं जिनमें भारी संशोधनों की आवश्यकता है। सरकारी कर्मचारियों को चाहिये कि वह अपनी रोब-दौब वाली नीति को बिल्कुल बदल दें। गाँव वालों से प्रेमपूर्वक वार्तालाप करें जिससे उनका भय दूर हो जाये।

जंगली जानवरों से खेती को बड़ी हानि पहुँचती है। जंगली जानवरों का प्रबन्ध सरकारी तौर पर होना चाहिये।

गाँवों में कला कौशल के मेले और प्रदर्शिनियाँ होनी चाहियें जिनमें प्रतियोगितायें होनी चाहियें। प्रतियोगिता में जीतने वालों को पुरस्कार भी मिलने चाहिये। इस प्रकार उन्नति के पथ पर चलकर गाँव आदर्श गाँव बन सकते हैं। अतः राष्ट्र-निर्माणकारी नेताओं को चाहिये कि वह अपनी सारी शक्ति को ग्राम सुधार में लगावें। हमारा सौभाग्य है कि जनता और सरकार दोनों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। हमें आशा है कि निकट भविष्य में हमारे ग्राम स्वर्ग के सहोदर बन जायेंगे।

हमारी प्रथम राजक्रान्ति (१८५७)

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—सन् १८५७ में भारत की स्थिति।

(२) भारत की स्थिति और विदेशी शासकों की नीति।

(३) दत्तक पुत्र का निषेध और डलहौज़ी की स्वेच्छाचारी नीति।
(४) सेना में असन्तोष और विद्रोह का आरम्भ।
(५) क्रान्ति का विकास और उसकी असफलता।
(६) क्रान्ति क्यों विफल रही?
(७) क्या यह सचमुच राजक्रान्ति थी अथवा विद्रोह?
(८) उपसंहार—जनता का कर्तव्य।

पराधीन जातियां अपनी खोई हुई सत्ता को पुनः प्राप्त करने के लिये अनेक प्रयत्न करती हैं। यदि ये प्रयत्न सफल हो जाते हैं तो इन सफल प्रयत्नों को राज-क्रान्ति के नाम से पुकारा जाता है और विफल प्रयत्न विद्रोह आदि नामों से पुकारे जाते हैं। जीवित जातियां सदैव आगे बढ़ने का प्रयत्न करती हैं। वे सफलताओं और विफलताओं की चिन्ता नहीं करतीं, किन्तु नपुंसक जातियां प्रायः आगे बढ़ने से घबराती हैं और आगे बढ़ने वालों को और धक्का पहुँचाती हैं। दीर्घ काल की दासता ने भारतीय भावनाओं में ठण्डापन ला दिया है, जिसके कारण उसके प्रत्येक प्रयत्न विफल हो जाते हैं। मुग़ल साम्राज्य के अधःपतन पर भारतीय जनता में राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न हुए, मरहठा और सिक्ख-साम्राज्यों का जन्म हुआ। देश ने स्वतन्त्रता की वायु को ग्रहण किया। रक्त में स्वतन्त्रता की गूँज गूँजी। उधर मुसलमानों ने भी साम्राज्य के वैभव को नष्ट होते देखा। उनके मान सम्मान पर भी धक्का लगा। भारत में अँगरेज़ी हुकूमत की जड़ मज़बूत हो चली। मरहठा गृह-कलह में फँस गये और अपनी प्राप्त स्वतन्त्रता को दे बैठे। विदेशियों की इस नीति और आचार-विचार ने भारतीय हिन्दू मुसलमानों की मोह-निद्रा को तोड़ा।

अधिकार-च्युत कर दिये गये। सन १८४८ ई० में सितारा अँग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। लक्ष्मीबाई का राज्य डलहौजी ने एक झांसे में अँग्रेजी राज्य में मिला लिया। इसके पश्चात नागपुर का राज्य भी सन १८५४ में ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया। १८५१ ई० में बाजाराव पेशवा के मरने पर धाधूपन्त नाना साहब को पेंशन देने से कम्पनी ने इन्कार कर दिया। अँग्रेजों की इस नीति ने भारतीयों के हृदय में आग धधका दी। विजित और विजेता जातियों में द्वेष और सन्देह भर गये और उसका परिणाम वही हुआ जो अग्नि में घी डालने पर होता है।

सारे देश में विद्वेष की आग जल उठी। नामओ पैगाम दौड़ने लगे। जो अब तक असङ्गठित थे, वे सङ्गठन में आने लगे किन्तु सङ्गठन प्रान्तीयता का रूप धारण कर गया। सारी शक्तियां पृथक-पृथक काम करने लगीं। सबने सामूहिक प्रयत्न नहीं किया। राज्यों में प्रचार किया, फौजें बिगड़ीं, देश में सर्वत्र अशान्ति फैल गई और अँग्रेजों के प्रति घृणा के भाव भर गये। जिन राजनैतिक शक्तियों और व्यक्तियों को स्थान-च्युत कर दिया था, वह एकत्र हुए, सबने अपनी अपनी सेनायें एकत्र कीं, सर्वत्र एक साथ स्वतन्त्रता की उपासना की घोषणा कर दी। इस प्रकार भारतवर्ष ने पहली बार परतन्त्रता का अनुभव किया और नींद से चौंककर भड़भड़ा कर उठ खड़ा हुआ।

यह राजनीतिक आन्दोलन धीरे-धीरे विकसित हो रहा था, उसके अनेक छोटे छोटे कारण बनते जाते थे। कहीं सेनाओं में असन्तोष की अग्नि भड़की, कहीं वेतन वृद्धि का प्रश्न उठा, कहीं अफसरों के कटु व्यवहार का प्रतिकार किया गया, कहीं समुद्र पार सेना भेजी जाने की

पर दिल्ली में सर्वत्र अग्निकाण्ड और हत्याकाण्ड का ताण्डव नृत्य उप-स्थित होने लगा। जहां जो कोई अँग्रेज अथवा अँग्रेज का बच्चा मिला, उसे तुरन्त तलवार के घाट उतारा गया। विद्रोह की यह विकराल अग्नि समस्त मध्य भारत में फैल गई। इनमें से कानपुर का हत्याकाण्ड सबसे अधिक रहा। कानपुर पर नाना साहब का आधिपत्य था। इस भांति आगरा, बनारस, लखनऊ आदि स्थानो पर यह प्रलयकारी अग्नि धधक उठी और लगभग ८ मास भारत में अँग्रेजी शासन का अस्तित्व मिट गया। सर्वत्र सर्वतन्त्र स्वतन्त्र छोटे २ राज्यो ने जन्म लिया, जिनका अस्तित्व आज तक देखने को मिलता है।

भारत में सवत्र बिखरी हुई शक्तिया रही हैं। इन बिखरी हुई शक्तियो ने कभी मिलकर सयुक्त शक्ति का निर्माण नहीं किया। यही कारण है कि भारत में अनेक आक्रमण हुए और उसका केवल किसी एक शक्ति ने सामना किया और वह परास्त हो गई। दूसरी शक्तियो के कानों पर जूँ तक न रेंगी और यही कहते रहे कि सतलज के पार आने पर हम देखेंगे, भारत की यह निर्बलता अब तक वतमान है। भारत में केन्द्रीय शक्ति की महान आवश्यकता थी, जिसे ब्रिटिश जाति ने समझा और भारत में एक छत्र साम्राज्य की स्थापना की। सन १८५७ में भी भारत की व्यक्तिगत नीति की पौलिसी ने प्राप्त साम्राज्य को अपने हाथ में न रहने दिया। फिर भारत में अपनी अपनी डापली और अपना-अपना राग चल पड़ा। इस नीति ने परस्पर फूट उत्पन्न करदी और द्वेष की भावनायें सबके हृदय में भर गईं।

अविश्वास की मात्रा बढ़ी और भारत की यह प्रथम सशस्त्र राज-

अवस्थित अवश्य रही। साम्राज्य प्राप्त किया किन्तु उसकी रक्षा न हो सकी। इस अल्प काल में वह किसी प्रकार का संगठन न कर पाई। यह सब देश का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है। घर में विभीषण पैदा हो गये। ये राष्ट्र की प्राप्त स्वतन्त्रता को कुचलने चल पड़े। सिक्ख और गोरखों ने देश के साथ द्रोह किया। राष्ट्र की प्राप्त स्वतन्त्रता को इन्होंने विदेशी अंग्रेजों के हवाले कर दिया। जब कभी देश स्वतन्त्र होगा तब कहीं इस घोखा की गहन वृत्त कहानियां लिखी जायेंगी। राष्ट्रीय-स्वातंत्र्य की सेनाएं अंग्रेजों के वश हुईं। भीषण युद्ध हुए। महारानी लक्ष्मीबाई और तात्या जैसे देश भक्त इस समर-यज्ञ की बलिवेदी पर बलिदान हुए। लाखों हिन्दू और मुसलमानों को फांसी के तख्तों पर लटका दिया गया, जिसके रक्त से आज भी भारत का इतिहास रंगा हुआ है। एक दिन आयेगा कि राष्ट्र की बलिवेदी पर बलिदान होने वालों के प्रति देश श्रद्धांजलि अर्पित करेगा। अंग्रेजी सेनानायकों की इस नृशंसता और निष्ठुरता को सभ्य जगत घृणा की दृष्टि से देखेगा।

इस प्रकार का राष्ट्रीय संग्राम समाप्त हुआ। निरपराध भारतीयों की आशाएँ भस्म करदी गई। राष्ट्र द्रोहियों को बड़ी-बड़ी जागीरें मिलीं जिनका वह आज तक उपभोग कर रहे हैं। लोग इसे गदर कहें अथवा पागलपन कहें हम तो इसे एक सीमित क्रान्ति की राज्य क्रान्ति ही कहेंगे। यह राष्ट्र का संयुक्त प्रयास था उसमें राष्ट्र की संयुक्त भावना थी और यह परतन्त्रता के जुआरे को देश से हटाने का प्रथम प्रयत्न था।

मित्र के कर्तव्य

विचार तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—सामाजिक जीवन में मित्र का स्थान।

(२) मित्र के कर्तव्य —

मित्र की आपत्ति काल में स्थिरता। मित्र को सन्मार्ग पर लाना। मित्र को सङ्कट में सन्त्वना और सहानुभूति। मित्र का हित चिन्तन।

(३) कृष्ण-सुदामा की मित्रता।

(४) मित्रता कैसे मनुष्यों में होती है?

(५) मित्र का चुनाव।

(६) मैत्री और स्वार्थ साधन।

(७) उपसंहार—हमें कैसा मित्र बनाना चाहिये?

मनुष्य के संसार में जितने नाते हैं, उनमें मित्रता का नाता सबसे महत्व का है। मित्रता में मानवी जीवन की शक्तियों और मनुष्यता का विकास होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, वह चाहता है कि वह मिल-जुल कर रहे। मनुष्य क्या पशु-पक्षी भी मिलकर रहने को पसन्द करते हैं। सत्य बात यह है कि मित्रता से जीवन में एक प्रकार की मधुरिमा आ जाती है, जीवन भाररूप प्रतीत नहीं होता। मित्र गोष्ठी में गपशप लड़ाकर मन बहलता रहता है। इसी कारण विद्वानों ने मित्रता की मुक्त-कण्ठ से सराहना की है। गोसाईं तुलसीदास जी ने मित्रता के महत्व को बड़ी उत्तमता से वर्णन किया है —

"जेन मित्र दुख होहिं दुखारी। तिनहिं बिलोकत पातक भारी॥

मित्र दुःख गिरि सम रज के जाना। मित्र क दुख गिरि मेरु समाना" ॥

मित्र वह है जिसे मित्र का साधारण दुःख सुमेरु पर्वत के समान दिखलाई पड़े और उसकी रक्षा के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करदे। वे लोग धन्य हैं जिन्हें ऐसे मित्र मिल गये हैं। जिनको संसार में इस तरह मित्र मिल गये हैं उनको अब संसार में अधिक कुछ पाने की आवश्यकता नहीं है। सच्चा मित्र वही है, जो हमारी शोक-चिन्ताओं को भुलादे। हमारा हृदय उसको देखकर कमल की भांति खिल जाय।

मित्र के कर्तव्य बड़े महत्व के होते हैं। जब हमारे सामने संकटों के बादल छाये हुए हों, दुःख और आपत्तियों के पहाड़ टूट रहे हों, संसार में चारों तरफ घोर अन्धकार ही अन्धकार दृष्टिगोचर हो रहा हो, उस समय हमें संसार सूना ही सूना नजर आ रहा हो तब मित्र का कर्तव्य है कि वह हमारी सहायता करे और हमें गिरते हुए से बचावे। निस्सन्देह दुःख में मित्र से बड़ी सहायता मिलती है। मित्र को चाहिये कि संकट काल में तन, मन और धन से मित्र की सहायता करे। यदि अपने मित्र के लिये उसे प्राण तक भी देने पड़े तो भी वह सहर्ष दे दे। सच्चे मित्र का कर्तव्य इससे बढ़कर अधिक क्या हो सकता है? कहा भी है कि—

धीरज, धर्म, मित्र और नारी। आपत्ति-काल परखिये चारी ॥

स्वार्थ-भाव और मित्रता में बड़ा अन्तर है। जहां स्वार्थ होता है वहां मित्रता जैसी पवित्र वस्तु नहीं ठहर सकती। जहां मित्रता स्वार्थ के ऊपर अवलम्बित है वहां तो स्वार्थ का आधिपत्य होता है। स्वार्थ का आमन्त्रण तो केवल स्वार्थ पूर्ति तक रहता है फिर उसका पता देखने को नहीं मिलता।

हमें संसाररूपी मार्ग की यात्रा पार करने के लिये एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता रहती है, जिस पर हम अपने पथ का सुख दुख कह सकें। यदि कभी वह हमें गिरता हुआ देखे तो हाथ बढ़ाकर हमें सहारा दे दे। वह हमारा पूरा विश्वासनीय हो, उससे हमारा कोई भेद गोपनीय न हो, वह हमारा शुभेच्छुक, परामर्श-दाता और संरक्षक हो। वह हमसे हार्दिक सहानुभूति रखता हो।

सच्चे मित्र की व्याख्या करते हुए राजा भर्तृहरी ने एक स्थान पर बतलाया है कि—"मित्र वह है जो मित्र को पाप से बचाता है, मित्रहित की योजना करता है, वह दोषों को छिपाता है और मित्र के गुणों को प्रकाशित करता है, वह विपत्ति में मित्र का साथ नहीं छोड़ता, वास्तव में ऐसे गुणों से विभूषित मित्र तो साक्षात कुबेर का भण्डार ही है। आपत्ति काल में धीरज, धर्म और नारी चाहे भले ही साथ छोड़ जायें किन्तु सच्चा मित्र साथ नहीं छोड़ सकता।

मित्र का धर्म है कि वह दुःख के समय हमें सान्त्वना दे, हमारे दुख सुख को अपना ही दुख सुख समझे, हमारे सुख से उसे सुख हो, हमारे दुःख से उसे दुःख हो, जब हम साहस खो रहे हों तब वह हमें सान्त्वना दे और सदैव हमें आश्वासित करता रहे, हमें कभी हताश न होने दे, हमारी कर्तव्य बुद्धि को उत्तेजित करे, हमारी आमदनी के साधनों को सहायता पहुँचाये, जीवन-संग्राम में कभी वह पीछे न हटे और न हमें पीछे हटने दे, हमारी उन्नति के मार्गों को परिष्कृत करे, हमें ऐसे कार्यों में लगाये जिससे लोक और परलोक में सुख शान्ति मिले।

सच्चे मित्रों की कहानियों से संसार का इतिहास भरा पड़ा है। कृष्ण

और सुदामा की मैत्री का आदर्श बहुत ऊँचा है। कृष्ण सुदामा की मित्रता की कथा से अब तक संसार गन्धायमान हो रहा है। कहाँ त्रिलोकीनाथ श्री कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द और कहाँ दाने-दाने को तरसने वाला दीन सुदामा! आकाश पाताल का अन्तर है परन्तु श्री कृष्ण अपना ऐश्वर्य भूलकर सुदामा की दीन दशा देखकर व्यथित हो जाते हैं। उनका हृदय करुणा से गद्-गद् हो जाता है। वे अपने हृदय के प्रेम उद्गारों को नहीं रोक सकते। उनका प्रेम आँसुओं के रूप में उमड़ पड़ता है। वे सुदामा के चरणों को पकड़ लेते हैं और गद्गद् होकर कहते हैं—

"ऐसे बिहाल बिवाइन सों, पग कण्टक जाल गड़े मग जोये।
ऐ हो सखा! दुख पायो महा तुम आये इतै न किते दिन खोये॥
देखि सुदामा की दीन दशा करुणा करके करुणानिधि रोये।
पानी परात को हाथ छुयो नहीं नैनन के जल सों पग धोये॥

ऐसी मित्रता को देख किसे आनन्द न होगा! कृष्णचन्द्र तुम धन्य हो। तुम्हारा यश वर्णन करना कठिन है।

कुछ लोग कहते हैं कि समान अवस्था और गुण वाले व्यक्तियों की मित्रता प्रिय समान स्वभाव होती है यथा—

जे लघु जे बड़ मीत मत सम समान दुख देय।
तुलसी घृत मधु सम मिले महा विषम विष होय॥

किन्तु इस नियम में अपवाद है। साधारणतया यह विश्वास किया जाता है कि समान स्वभाव तथा समान उद्देश्य वाले व्यक्तियों में मैत्री हो जाती है। परन्तु इसके विपरीत भी मित्रता की व्यवस्था देखी गई है।

मित्रता में एक प्रकार से दो आत्माओं मे मिलना होता है। स्वार्थ का लवलेश होने पर वह आत्मायें कलुपित हो जाती हैं। मित्रता लज्जावती छुई मुई की तरह स्नेह, सहिष्णुता, सहृदयता और सहानुभूति का जल पाकर बढ़ती है और उसमें स्वर्गीय उल्लास के फूल लगते हैं। अत समान धर्म वाली बात बहुत दूर तक नहीं जाती। जहां उपर्युक्त गुण हैं, वहां धर्म की समानता न होते हुए भी गहरी मित्रता निभ सकती है।

मित्रता और परिचय में बड़ा अन्तर। साधारण परिचय को मित्रता समझना भयङ्कर भूल है। साधारण जान-पहचान वाले व्यक्ति अपने मित्र नहीं हो सकते और न ऐसे फसली मित्र हमारा सुख-सम्वर्धन ही कर सकते हैं। यद्यपि मित्रता भी पहले-पहल साधारण परिचय से ही आरम्भ होता है, किन्तु परिचित व्यक्तियों में कुछ ही व्यक्ति मित्र बनाये जा सकते हैं।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि मित्र कैसा होना चाहिये ? बहुधा हम ऊपरी तड़क-भड़क पर मुग्ध हो जाते हैं। सुन्दर मुख, कला-पूर्ण बातचीत करने का ढङ्ग, थोड़ी चञ्चलता, विनोद-प्रिय प्रकृति आदि ऐसे गुण हैं, जिनको देखकर हमें किसी साथी को मित्र समझ लेना पर्याप्त है, किन्तु "विपत्ति कसौटी पर कसे सोई सांचे मीत।" जब तक कोई व्यक्ति सङ्कट-काल में खरा साबित न हो तब तक उसमें कोई गुण मित्र बनने के नहीं हैं। सच्चा मित्र वही है, जो दुख में हमारा साथ दे और सुख में हमारे आनन्द को दूना करदे। जहां स्वार्थ है वहां मित्रता नहीं है, परन्तु स्वार्थी और निःस्वार्थी मित्र की परीक्षा करना कठिन है। नवयुवकों को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि नवयुवक तनिक भी कुमित्र के चक्कर में पड़े और उनका जीवन पतन की ओर गया।

और सुदामा की मैत्री का आदर्श बहुत ऊँचा है। कृष्ण सुदामा की मित्रता की गन्ध से अब तक संसार सुवासित हो रहा है। कहाँ त्रिलोकीनाथ श्री कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द और कहाँ दाने दाने को तरसने वाला दीन सुदामा। आकाश पाताल का अन्तर है परन्तु श्री कृष्ण अपना ऐश्वर्य भूलकर सुदामा की दीन दशा देखकर व्यथित हो जाते हैं। उनका हृदय करुणा से गद्-गद् हो जाता है। वे अपने हृदय के प्रेम-उद्गारों को नहीं रोक सकते। उनका प्रेम आँसुओं के रूप में उमड़ पड़ता है। वे सुदामा के चरणों को पकड़ लेते हैं और गद्गद् होकर कहते हैं—

"कैसे बिहाल बिवाइन सों भए कण्टक जाल लगे पग जोये।
ऐ हो सखा ! दुख पायो महा तुम आये इते न किते दिन खोये॥
देखि सुदामा की दीन दशा करुणा करके करुणा निधि रोये।
पानी परात को हाथ छुयो नहीं नैनन के जल सों पग धोये॥

ऐसी मित्रता को देख किसे आनन्द न होगा। कृष्णचन्द्र तुम धन्य हो! तुम्हारा यश बखान करना कठिन है।

कुछ लोग कहते हैं कि समान अवस्था और गुण वाले व्यक्तियों की मित्रता नित्य समान सुखदाई होती है यथा—

जे लघु जे बड़ मीत मन सम समान दुख लेय।
तुलसी घृत मधु सम मिले महा विषम विष होय॥

किन्तु इस विषय में अपवाद है। साधारणतया यह विश्वास किया जाता है कि समान स्वभाव तथा समान उद्देश्य वाले व्यक्तियों में मैत्री हो जाती है किन्तु इसके विपरीत भी मित्रता की पराकाष्ठा देखी गई है।

मित्रता में एक प्रकार से दो आत्माओं में मिलना होता है। स्वार्थ का लवलेश होने पर वह आत्मायें कलुषित हो जाती हैं। मित्रता लजावती छुई मुई की तरह स्नेह, सहिष्णुता, सहृदयता और सहानुभूति का जल पाकर बढ़ती है और उसमें स्वर्गीय उल्लास के फूल लगते हैं। अत समान धर्म वाली बात बहुत दूर तक नहीं जाती। जहां उपर्युक्त गुण हैं, वहां धर्म की समानता न होते हुए भी गहरी मित्रता निभ सकती है।

मित्रता और परिचय में बड़ा अन्तर। साधारण परिचय को मित्रता समझना भयङ्कर भूल है। साधारण जान-पहचान वाले व्यक्ति अपने मित्र नहीं हो सकते और न ऐसे असली मित्र हमारा सुख-सम्वर्धन ही कर सकते हैं। यद्यपि मित्रता भी पहले-पहल साधारण परिचय से ही आरम्भ होता है, किन्तु परिचित व्यक्तियों में कुछ ही व्यक्ति मित्र बनाये जा सकते हैं।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि मित्र कैसा होना चाहिये? बहुधा हम ऊपरी तड़क-भड़क पर मुग्ध हो जाते हैं। सुन्दर मुख, कला पूर्ण बातचीत करने का ढङ्ग, थोड़ी चञ्चलता, विनोद-प्रिय प्रकृति आदि ऐसे गुण हैं, जिनको देखकर हमें किसी साथी को मित्र समझ लेना पर्याप्त है, किन्तु "विपत्ति कसौटी पर कसे सोई साचे मीत।" जब तक कोई व्यक्ति सङ्कट-काल में खरा साबित न हो तब तक उसमें कोई गुण मित्र बनने के नहीं हैं। सच्चा मित्र वही है, जो दुख में हमारा साथ दे और सुख में हमारे आनन्द को दूना करदे। जहां स्वार्थ है वहां मित्रता नहीं है, परन्तु स्वार्थी और निःस्वार्थी मित्र की परीक्षा करना कठिन है। नवयुवकों को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि नवयुवक तनिक भी कुमित्र के चक्कर में पड़े और उनका जीवन पतन की ओर गया।

कहा भी तो है 'सुर मुनि नर सबकी यह रीती स्वार्थ लागि करै सब प्रीती।' यह कथन अक्षरशः सत्य है अतः हमें मित्र के निर्वाचन में पर्याप्त सचेत रहना चाहिये। प्रत्येक परिचित व्यक्ति मित्र नहीं हो सकता।

आजकल तो स्वार्थी मित्रों का प्राधान्य है जो सुख के समय हमारे साथ रहते हैं और दुःख के समय हमें छोड़कर अलग हो जाते हैं। जब तक हमारे पास पैसा है तब तक तो मित्र साथ ही साथ रहते हैं जब पैसा पास नहीं रहता तब मित्र भी दो ग्यारह हो जाते हैं।

अन्त में कहना यही है कि सच्चे मित्र वही हैं जो हमें संकट-काल में सहायता दें और सान्त्वना देवें। कबीर ने कैसा सुन्दर कहा है—

'कहि रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहु रीति।
विपति कसौटी जे कसे सोई साँचे मीत॥'

महात्मा बुद्ध

विचार-तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—बुद्ध जी के जन्म से पहले की स्थिति।
(२) जन्म-काल (५६८ पू० ई०)।
(३) माता पिता और लालन पालन।
(४) माता की मृत्यु मौसी द्वारा पालन।
(५) जीवन पर बाहरी वस्तुओं का प्रभाव।
(६) वैवाहिक सम्बन्ध और राहुल का जन्म।
(७) गौतम का संसार से वैराग्य और गृह त्याग।
(८) घोर तप और गया में ज्ञान-प्राप्ति।

(९) बुद्ध जी के उपदेश ।
(१०) ८० वर्ष की अवस्था में कुशी नगर में मृत्यु ।
(११) बुद्ध जी का महत्त्व ।
(१२) उपसंहार—बुद्ध जी के विचार और भारतवर्ष ।

महात्मा बुद्ध के जन्म से पहले देश की परिस्थिति बड़ी डाँवाडोल हो रही थी। धर्म की आड़ में बड़े २ घोर अत्याचार हो रहे थे। ब्राह्मणों के यज्ञ विशाल आयोजन के साथ सम्पन्न होते थे, जिसमें जीवित पशु बलिदान किये जाते थे। ब्राह्मणों का अखण्ड साम्राज्य था, उनके सामने किसी को जिह्वा खोलने का अधिकार न था। ब्राह्मण धर्म की आड़ में मनमानी कर रहे थे। इन धार्मिक परम्पराओं के पीछे घोर से घोर अत्याचार, व्यभिचार और अनाचार हो रहे थे, जिनके कारण समाज की व्यवस्था क्षीण होती चली जा रही थी। वर्ण व्यवस्था गड़बड़ हो रही थी। जनता धार्मिक प्रतिबन्धों से ऊब गई थी। वह उसमें सुगम और सुलभ क्रान्ति चाहती थी। ठीक ऐसे ही अवसर पर महात्मा बुद्ध जी का जन्म हुआ। बुद्ध जी ने आडम्बर, रूढ़िवाद, कुरीतियों और वर्णाश्रम धर्म का मूलोच्छेद किया और पुनः देश में धर्म का परिष्कृत रूप रक्खा। देश में एक सुगम और सार्वभूमिक धर्म का जन्म हुआ और समाज एक सुन्दर व्यवस्था में बँधने लगा।

हमारे चरितनायक का जन्म ईसा से ५६८ वर्ष पूर्व कपिलवस्तु नगरी में हुआ था। कपिलवस्तु नेपाल की तराई में वर्तमान गोरखपुर प्रान्त में था, जहाँ शाक्य वंश के राजा राज करते थे। आपके पिता का नाम शुद्धोदन और माता का नाम महामाया था। एक सुरम्य कानन में (जिसे

(९) बुद्ध जी के उपदेश ।

(१०) ८० वर्ष की अवस्था में कुशी नगर मे मृत्यु ।

(११) बुद्ध जी का महत्त्व ।

(१२) उपसंहार—बुद्ध जी के विचार और भारतवर्ष ।

महात्मा बुद्ध के जन्म से पहले देश की परिस्थिति बड़ी डावाडोल हो रही थी। धर्म की आड़ मे बड़े २ घोर अत्याचार हो रहे थ। ब्राह्मणों के यज्ञ विशाल आयोजन के साथ सम्पन्न होते थे, जिसमे जीवित पशु बलिदान किये जाते थे। ब्राह्मणों का अखण्ड साम्राज्य था, उनके सामने किसी को जिह्वा खोलने का अधिकार न था। ब्राह्मण धर्म की आड़ में मनमानी कर रहे थे। इन धार्मिक परम्पराओं के पीछे घोर से घोर अत्याचार, व्यभिचार और अनाचार हो रहे थे, जिनके कारण समाज की व्यवस्था क्षीण होती चली जा रही थी। वर्ण व्यवस्था गड़बड़ हो रही थी। जनता धार्मिक प्रतिबन्धों से ऊब गई थी। वह उसमें सुगम और सुलभ क्रान्ति चाहती थी। ठीक ऐसे ही अवसर पर महात्मा बुद्ध जी का जन्म हुआ। बुद्ध जी ने आडम्बर, रूढिवाद, कुरीतियों और वर्णाश्रम धर्म का मूलोच्छेद किया और पुन देश में धर्म का परिष्कृत रूप रक्खा। देश में एक सुगम और सार्वभूमिक धर्म का जन्म हुआ और समाज एक सुन्दर व्यवस्था में बँधने लगा।

हमारे चरितनायक का जन्म ईसा से ५६८ वर्ष पूर्व कपिलवस्तु नगरी में हुआ था। कपिलवस्तु नेपाल की तराई में वर्तमान गोरखपुर प्रान्त में था, जहा शाक्य वंश के राजा राज करते थे। आपके पिता का नाम शुद्धोदन और माता का नाम महामाया था। एक सुरम्य कानन में (जिसे

उस समय लुम्बिनी वन कहा जाता था) महामाया के गर्भ से आपका जन्म हुआ। इस नवजात-शिशु का नाम सिद्धार्थ रक्खा गया जो बाद में महात्मा बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अभी हमारे चरितनायक ११ दिन के भी नहीं होने पाये थे कि इनकी माता का देहान्त हो गया। तब आपका लालन-पोषण आपकी विमाता माया ने किया। माया के गर्भ से भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसका नाम देवदत्त था।

सिद्धार्थ बड़ा सुन्दर था उसका शरीर गठन बड़ा उत्तम था बुद्धि बड़ी प्रखर थी। सिद्धार्थ ने अपने बाल्य-काल में 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली लोकोक्ति चरितार्थ की थी। आपकी शिक्षा-दीक्षा बड़ी धूमधाम-पूर्वक हुई। बड़े बड़े सच्चरित्र और विद्वान आचार्य आपको शिक्षा के लिये नियुक्त हुए। आपने अल्प काल ही में अगाध ज्ञान अर्जन कर लिया जिसे देख आचार्य लोग चमत्कृत हुए थे।

छन्दक उनका मुख्य सखा और मित्र था जो चौबीसों घण्टे छाया की भांति सिद्धार्थ के साथ रहता था। वह सिद्धार्थ का मनोरंजन करता रहता, साथ जाता उनकी विचार धारा में अपनी परामर्श देता। एक दिन कुमार ने छन्दक के साथ कपिलवस्तु नगर की सैर की और नगर से बाहर का भी निरीक्षण किया। सिद्धार्थ ने उस भ्रमण में एक रोगी, एक वृद्ध एक मृतक और एक प्रसन्नवदन संन्यासी को देखा। सिद्धार्थ का मन इन सांसारिक दुःखों को देखकर व्यथित हो गया और सहसा उनके हृदय में विचार उठे कि संसार दुःखों का केन्द्र है। इन दुःखों से क्योंकर छुटकारा मिल सकता है?

सिद्धार्थ का मन घोर चिन्तन में निमग्न रहने लगा। उन्हें यह सब

भासने लगा कि ससा॰ में रोग, शोक और दुःख हैं, इससे किस प्रकार मनुष्य छुटकारा पा सकता है? सिद्धार्थ की इस विचार धारा ने पिता शुद्धोदन को विचलित कर दिया। वे सोचने लगे, कहीं सिद्धार्थ ससार-त्यागी न हो जाय। अत पिता ने एक परम सुन्दरी विदुषी कन्या यशोधरा से उनका विवाह कर दिया। विवाह हो जाने पर कुछ काल के लिये सिद्धार्थ के मन का ज्वालामुखी शान्त रहा और एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ, जो राहुल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सिद्धार्थ ने पुत्र को ससार की दूसरी वेड़ी समझा। अब उनके हृदय में यह दृढ़ निश्चय हो गया कि दुःखों का मूल कारण क्या है और उनसे मनुष्य क्योंकर छुटकारा पा सकता है। इस खोज का कार्य बिना ससार त्यागे नहीं हो सकता।

ससार घोर रात्रि में सो रहा था। सिद्धार्थ के मन में घोर तूफान आ रहा था, जो किसी प्रकार भी नहीं दबाया जा सकता था। आज सिद्धार्थ अपनी निर्बलताओं पर विजय पाने को सुख और वैभव की जञ्जीर को काटने को प्रस्तुत हो गया। उन्होंने शैया को त्यागकर राज-प्रासाद का अवलोकन किया। चित्रशाला के प्रमुख भाग में देखा कि मदिरा और विलास की नींद में डूबी नर्तकियां चित्र की भांति अचेत पड़ी हैं। उनकी जुगप्सा जाग उठी। वे आगे बढ़े और यशोधरा के कमरे में पहुँचे। यशोधरा और नवजात-शिशु के मोह ने उन्हें आकर्षित किया, किन्तु हृदय पर क़ाबू कर अश्वशाला में पहुँचे। छन्दक को जगाया। कण्टक तैयार किया गया। सिद्धार्थ कण्टक पर सवार हुए और नगर से बाहर हो गये। मोह का क़िला धड़ाम शब्द करता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा।

नगर से बाहर जाकर उन्होंने राजसी वस्त्रों को त्याग दिया और

लगा कि उन्हें सत्य के दर्शन हो गये हैं। जीवन-मरण की समस्या हल हो गई और सांसारिक रोगों की उन्हें औषधि मिल गई। अब वे प्रबुद्ध हो गये। यहीं से अब आपका नाम गौतम बुद्ध हो गया। आपको जो सत्य प्रकाश हुआ था, उसको वह वितरण करने चल पड़े।

अब गौतम 'बुद्ध' हो गये और संसार को दु:खों से छुड़ाने को निकल पड़े। अब उन्होंने उस पीपल के वृक्ष को छोड़ दिया, जिसके नीचे उन्हें सत्य का प्रकाश हुआ था। उन्होंने पहले उन पाचों शिष्यों की खोज की जो इन्हें तप-भ्रष्ट समझ कर छोड़ गये थे। बुद्ध जी ने सर्वप्रथम उनके सामने सत्य प्रकाश को रक्खा और वे उनके अनन्य भक्त हो गये। बुद्ध जी ने बताया कि दु:ख सात हैं—जन्म दु:खमय है, जगत दु:खमय है, रोग दु:खमय है, मृत्यु दु:खमय है, जिसे हमारा हृदय नहीं चाहता उसे समर्पित होना ही दु:ख है, अतृप्त-आकांक्षा दु:ख का कारण है, प्रिय वस्तु के वियोग में दु:ख है।

बुद्ध जी का सिद्धान्त था कि मनुष्य की वासनायें जन्म-मरण के चक्र में घुमाये फिरती हैं। मनुष्य की विविध अभिलाषायें और वासनायें उसे भव-बन्धन में बांधती हैं। उसको इन्द्रिय-जनित सुख की इच्छा सदैव पागल बनाये रखती है। वह जगत में इन्द्रिय सुखोपभोग के लिये जितना लालायित रहता है, इतना किसी अन्य वस्तु के लिये नहीं रहता। इसका बुद्ध जी उपचार बतलाते हैं कि मनुष्य को अपनी इच्छाओं पर क़ाबू करना चाहिये। इच्छाओं पर नियन्त्रण होने से वासनायें स्वमेव ही दुर्बल हो जाती हैं। वासनाओं के दुर्बल होने पर वस्तुओं के लिये अधिक आकर्षण नहीं रहता। जिसने अपनी इच्छाओं पर विजय पा ली है, उसने मूल सत्य को पा लिया है।

बुद्ध जी के जन्म से पहले ब्राह्मणों का बड़ा मान था। शूद्र तुच्छ पतित समझे जाते थे। शूद्रों को धर्म करने का अधिकार न था। बुद्ध जी ने इसका विरोध किया। उनका धर्म सरल धर्म था। वह कर्मकाण्ड की गुत्थियों से धर्म को रहित रखना चाहते थे। बुद्ध जी विलास और भोग की अत्यावश्यकता से सदैव समाज को दूर रखना चाहते थे। उनके धर्म में सब प्राणी बराबर थे।

बुद्ध जी ने धर्म प्रचार में अथक परिश्रम किया। बड़े-बड़े आदर्श मठों की स्थापना की। अपने आदर्शों के अनुकूल भिक्षु तैयार किये और उन्हें देश देशान्तर में भेजकर बौद्ध-धर्म का प्रचार किया। अनेक बौद्ध संघ स्थापित किये। बुद्ध जी के जीवन ही में अनेक राजाओं ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। उनके प्रचार का मूल मंत्र यह था—

'धम्म शरणं गच्छामि संघ शरणं गच्छामि बुद्ध शरणं गच्छामि।

महात्मा बुद्ध का तूफानी दौरा समाप्त हो चुका था। वे अब अधिक परिश्रम के कारण शिथिल भी हो गये थे। उनके अगणित शिष्य और शिष्या भारतवर्ष में हो गये थे। कुशी नगर में उनका उपदेश हो रहा था। अनेक बौद्ध-भिक्षु एकत्र हो रहे थे। ८० वर्ष की अवस्था हो चुकी थी। सहसा मृत्यु आ गई और भगवान बुद्ध अपने अन्तिम पहर को एक शाल के वृक्ष निर्वाण को गमन कर गये।

महात्मा बुद्ध ने भारतीय समाज को बहुत ऊँचा उठाया। उन्होंने लोगों की निराशा को मिटा आशा का संचार किया। उन्होंने सदाचार पर विशेष जोर दिया। उन्होंने बताया कि मनुष्य का श्रेष्ठ आचरण ही सच्चा धर्म है। यद्यपि आज बौद्ध भगवान हम में नहीं हैं किन्तु आज भी

उनकी विचार-धारा से सारा दीर्घान्य जगत चमत्कृत हो रहा है। हमारी अभिलाषा है कि हमारे देश म बौद्ध जैसी महान आत्मायें समय-समय पर आविर्भाव हों, जिससे हमारे समाज और राष्ट्र का उत्थान हो।

महात्मा गांधी

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—महात्मा जी के जन्म के समय भारतवर्ष की स्थिति।

(२) प्रारम्भिक जीवन —

जन्म—२ अक्टूबर १८६९, पोरबन्दर काठियावाड़ पिता करमचन्द। माता पुतली बाई। शिक्षा। विवाह। घरेलू वातावरण और उसका प्रभाव। विलायत यात्रा और भारत वापिसी।

(३) गांधी जी वकील, दक्षिणी अफ्रीका गमन और सत्याग्रह का जन्म।

(४) १९१४ में भारत वापिसी, खेड़ा आन्दोलन, १९१९ का सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन, १९२४ का उपवास, १९३० का प्रचण्ड आन्दोलन और नमक क़ानून भङ्ग।

(५) हरिजन आन्दोलन, गोलमेज कान्फ्रेंस में आमरण उपवास।

(६) वर्तमान सत्याग्रह।

(७) गांधी-गौरव।

उन्नीसवीं शताब्दि का अन्तिम युग भारतवर्ष में अँग्रेज़ों का स्वर्ण युग

कहा जाता है। भारत में चारों तरफ अंग्रेजों का आतङ्क छाया हुआ था। सर्वत्र अंग्रेजी शासन के सुप्रबन्ध के गीत सुनाई पड़ रहे थे। राष्ट्रीय भावनाएं देश में लगभग मर ही चुकी थीं। सन १८५७ के महासमरी दमन ने भारतीय जनता की जिह्वा पर लगाम लगा रखी थी। देश पूर्णत: दासता की अगाध निद्रा में सो रहा था। भारत में पाश्चात्य संस्कृति निरन्तर बढ़ती चली जा रही थी। भारतीय भाव भाषा और संस्कृति कुचली जा रही थी। ऐसी राष्ट्रीय प्रगति में हमारे चरितनायक महात्मा गान्धी का जन्म हुआ।

महात्मा जी का जन्म २ अक्टूबर सन १८६९ ई० को काठियावाड़ देश के पोरबन्दर राज्य में हुआ था। इनके पिता का नाम करमचन्द गान्धी और माता का नाम पुतली बाई था। पिता करमचन्द गान्धी पहले राजकोट स्टेट, फिर वीकानेर स्टेट में दीवान पद पर आरूढ़ रहे। माता पुतली बाई बड़ी साधु स्वभाव की महिला थीं। आपका सारा समय पूजा पाठ और व्रत-उपवास में व्यतीत होता था। हमारे चरितनायक के जीवन पर माता के चरित्र का अधिक प्रभाव पड़ा है। इनका पूरा नाम मोहन दास-करमचन्द गान्धी है। सत्य और अहिंसा के वे जन्म से ही भक्त रहे हैं। गान्धी का विद्यारम्भ संस्कार पोरबन्दर की पाठशाला में हुआ था। गान्धी जी मन्दबुद्धि, लजालु और संकोची स्वभाव के बालक थे। आप एक बहुत ही साधारण कोटि के विद्यार्थी थे। आपका विवाह विद्यार्थी जीवन ही में ११ वर्ष की अवस्था में हो गया था। प्रसिद्ध माता कस्तूरी बाई से आपका पाणिग्रहण संस्कार हुआ। अतः आपका किशोर-काल बड़ा ही आपत्ति-मय रहा। इसी काल में मांस-भक्षण बीड़ी, चोरी और

चार आदि की ओर भी आपकी प्रवृत्ति हुई किन्तु आगे सँभल गये। १८८५ ई० में आपके पिता का देहावसान हुआ और इसी वर्ष १५ की अवस्था में आपके एक सन्तान उत्पन्न हुई, किन्तु वह केवल (दिन जीवित रहकर मर गई। १८८७ में आपने मैट्रिक पास किया। १८८७ ई० में आप भावनगर के शामलदास कालेज में भरती हुए। वर्ष सितम्बर मास में बैरिस्टरी की शिक्षा पाने विलायत चले गये। लायत जाते समय आपने अपनी माता से वचन दिया था कि विलायन कर मैं मास-मदिरा और पर-स्त्री-गमन से अलग रहूँगा। आपने भरसक प्रतिज्ञा को निभाया। विलायत-यात्रा के अपराध में आपके कुटुम्बियां जाति से बहिष्कृत भी कर दिया गया। सन १८९१ ई० में आप रेस्टरी पास करके भारतवर्ष लौट आये।

बम्बई में आपने अपनी वकालत आरम्भ की, किन्तु आप इस कार्य असफल सिद्ध हुए। आप मुक़दमो की पैरवी न कर सकते थे। अदालत बोल न सकते और आपके हाथ पैर काम न करते। विवशत: राजकोट टि आये और अर्जियां, दावे आदि लिखकर अपना जीवन निर्वाह करने गे। इसी समय पोरबन्दर के एक फर्म के ४० हजार पौण्ड के दावे में हायक वकील होकर आप दक्षिणी अफ्रीका गये। मार्ग व्यय और भोजन फ़्त और १०५ पौण्ड मेहनताना ठहरा। सन १८९३ ई० में आपने दक्षिणी अफ्रीका की एक अदालत मे पगड़ी पहन कर प्रवेश किया। आपको वहां पगड़ी उतारने को विवश किया गया। आप अदालत से लौट आये। आपकी राजनैतिक भावनाये यहीं से प्रज्वलित हो उठीं। उसी दिन अफ्रीका में उग्र आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ। जिस दावे में आप

बसीत होकर गये थे उनका आपने फैसला करा दिया और आप भारतीयों की दशा सुधारने के शुभ कार्य में बड़ी तत्परता से लग गये। नेटाल सरकार व्यवस्थापक-सभा में एक बिल पेश हो रही थी, जिसमें भारतीयों के समस्त नागरिक अधिकार छीने जा रहे थे। आपने अफ्रीका निवासी भारतीयों को इस बिल के विरोध में संगठित किया और सन १८९४ ई० में नेटाल में इण्डियन कांग्रेस का जन्म हुआ। नेटाल-सरकार की इस नई धारा का विरोध खूब चला। महात्मा जी ने दस हजार आदमियों के हस्ताक्षर से एक प्रार्थना-पत्र उपनिवेश सेक्रेटरी लार्ड रिपन के पास भिजवाया। गांधी जी के कार्यों से यूरोपियन काफी चिढ़ गये। सन १८९६ ई० में महात्मा जी इस आन्दोलन का प्रचार करने भारत आये और फिर वापिस अफ्रीका जाने लगे तो आप और आपके साथ आठ सौ भारतीयों को २१ दिन तक डरबन के बन्दरगाह पर रोके रक्खा। बाद में उतार भी तो उस किस गोरों के जन-समूह ने उनके ऊपर बेहूदा आक्रमण किया मान्यवर पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की पत्नी ने उनकी प्राण-रक्षा की।

उन्हीं दिनों में बोअर युद्ध हुआ। महात्मा गांधी ने भरसक ब्रिटिश सरकार की मदद की। बोअर युद्ध के बाद ट्रान्सवाल के भारतीयों की स्थिति पहले से भी बदतर हो गई। अतः महात्मा गांधी ने डरबन में एक आश्रम की स्थापना की और "इण्डियन ओपीनियन" नामक चार तीन भाषाओं का एक मुख-पत्र प्रकाशित किया। १९ ६ में ट्रान्सवाल सरकार ने अपना काला कानून पास किया। इसके विरोध में महात्मा गांधी ने दस सत्याग्रहियों के साथ सत्याग्रह का युद्ध आरम्भ किया। मसले बढ़े। गिरफ्तारियाँ हुईं अन्त में जनरल स्मट ने समझौता कर लिया। आखिर

ं कर दिया गया। परन्तु भारतीय विवाह-पद्धति के खिलाफ़ क़ानून पास
र देने के सिलसिले में पुन सत्याग्रह-युद्ध छेड़ना पड़ा। महात्मा जी को
था अन्य साथियों को कारावास का दण्ड दिया गया। भारत-सरकार ने
में कुछ हस्तक्षेप किया, जिसके कारण परिस्थिति बदल गई और बन्दी
ड़ दिये गये और समझौता हो गया। इस भांति सन १९१४ में
फ्रीका में सत्याग्रह पूर्ण सफल हुआ। भारतीय मांगें स्वीकार करली गई
र महात्मा गांधी स्वदेश लौट आये।

महात्मा जी का भारत में बड़ा सम्मान हुआ। आप भारत के समस्त
ुख नेताओं से मिले। कुछ काल आप गोपालकृष्ण गोखले के संसर्ग में
रहे। बिहार में नील की खेती करने वाले मजदूरों का प्रश्न लेकर
रों के खिलाफ़ सत्याग्रह आरम्भ किया, उसमें आप पूर्ण सफल हुए।
हमदाबाद के मजदूरों की समस्या को भी आपने सुलझाया। खेड़ा जिले
फसल नष्ट हो गई थी, किन्तु सरकार लगान माफ़ नहीं करती थी,
हात्मा गांधी ने यहां भी सत्याग्रह की घोषणा करदी और इसमें इनकी
ूरी विजय हुई। इस सत्याग्रह के कारण भारत-सरकार पर भी महात्मा
गांधी का आतङ्क छा गया। यूरोपीय महासमर में भारत ने जो इङ्गलैण्ड
की सेवा की थी, उसके फलस्वरूप भारतीय शासन तन्त्र में परिवर्तन करने
की चेष्टा की गई। सरकार ने रौलेट एक्ट बनाया। जनता ने महात्मा जी
के नेतृत्व में देश व्यापी आन्दोलन खड़ा किया। ६ अप्रैल सन १९१९
ई० को सत्याग्रह की घोषणा की गई। अमृतसर, दिल्ली और जलियान
वाले में घोर हत्या-काण्ड हुए। भारत का वायु-मण्डल हिंसामय हो गया,
अतः महात्मा गांधी ने सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दिया। महात्मा जी

के लिये आमरण उपवास किया। जनता और सरकार दोनों ही आपके इस निश्चय से घबरा गये। अतः सरकार ने प्रथक निर्वाचन नियम रद्द कर दिया।

इसके पश्चात महात्मा जी ने अछूतों की दशा सुधारने के लिये हरिजन आन्दोलन आरम्भ किया। आपके प्रयत्नों का ही फल है कि आज अछूतों को मन्दिर-प्रवेश, शिक्षा आदि की सुविधायें मिल गई हैं। इसके पश्चात आपने कांग्रेस से अवकाश ग्रहण किया और ग्राम सुधार के लिये अपनी सारी शक्ति लगा दी। आपने नगरों को छोड़ सेवा-ग्राम में रहना पसन्द किया। कितनी ही सरकारों ने आपके आन्दोलन को अपनाया और अपने-अपने प्रान्तों मे ग्राम सुधार-विभाग स्थापित किये।

सन १९३७ ई० में प्रान्तिक सरकारें स्थापित हुई। राष्ट्रीय सरकारें बनीं। राष्ट्रीय सरकारों ने महात्मा गांधी के आदर्श का ही अनुकरण किया। सन १९३७ ही में वर्धा शिक्षा-योजना तैयार हुई। देश ने आपकी इस शिक्षा-योजना को अपनाया और उसी के अनुसार बेसिक क्लासें खुलने लगीं।

सितम्बर सन १९४० ई० में यूरोप में फिर युद्ध की रण-भेरी बज उठी। सरकार ने बिना भारतीय स्वीकृति के भारतीय सेनाओं को ब्रिटेन की रक्षा के लिये भेज दिया और भारत के कन्धों पर बहुत सा खर्चा भारतीय मेम्बरों की बिना स्वीकृति के लाद दिया, इससे देश में बड़ा क्षोभ उत्पन्न हुआ। कांग्रेस ने सरकार को मदद न देने की घोषणा करदी। कांग्रेस ने पर्याप्त चेष्टा समझौते की की, किन्तु सरकार किन्हीं कारणों से कांग्रेस की मांगों को स्वीकार नहीं कर सकी। न भविष्य का कोई वचन ही

दिया। इधर राष्ट्रीय महासभा ने अपना सारा अधिकार महात्मा गांधी को दे दिया। ११ अक्टूबर सन १९४० ई० को महात्मा गांधी ने फिर सरकार के विरोध में सत्याग्रह आरम्भ कर दिया है। देश के बड़े-बड़े नेता कारागारों में भरे जा रहे हैं। महात्मा गांधी का व्यक्तिगत सत्याग्रह सामूहिक सत्याग्रह में परिवर्तित होने जा रहा है। आज १ दिसम्बर तक यह स्थिति है। आगे भविष्य में क्या होता है भगवान ही जाने।

महात्मा गांधी हमारे इस युग के सबसे महान पुरुष हैं। शरीर के दुबले हैं, जिनमें आकृति से कोई भी गुण प्रकट नहीं होता। किन्तु हृदय का ऐसा ज्ञान है, उन्हें अपने ऊपर अगाध विश्वास है। न जाने कितने वर्षों के सोये हुए भारत को जगाया है और देश में जागृति की लहर फूंकी है। आपका रहन-सहन सादा है। आप एक उग्र हैं। सत्य और अहिंसा के पुजारी हैं। आपका चरित्र अनुकरणीय व उज्ज्वल है। भारत को एक राष्ट्र बनाने वाले आप ही हैं। भारत की गुलामी नष्ट करने व एक का सुधार करने वाले भी आप ही हैं। आप भारत के हृदय सम्राट हैं। आपके जन्म से भारत का गौरव तब तक ऊंचा रहेगा जब तक संसार में सूर्य और चन्द्रमा वर्तमान हैं। भगवान आपको दीर्घ जीवन प्रदान करें।

भारतीय इतिहास का प्रसिद्ध पुरुष

(छत्रपति शिवाजी)

विचार-तालिकायें —

(१) शिवाजी के जन्म के समय भारत की परिस्थिति।

(२) जन्म और माता पिता।

(३) शिवाजी की शिक्षा-दीक्षा।

(४) प्रारम्भिक जीवन—

संगठन और आसपास के धावे। बीजापुर के सुलतान से छेड़-छाड़ और अफ़ज़लखां की मृत्यु। मुग़लों से छेड़-छाड़, शायस्ताखां का भागना। आगरे में बन्दी होना और चतुराई से निकल आना।

(५) राज स्थापना और प्रबन्ध।

(६) व्यक्तित्व।

(७) शिवाजी शासक के रूप में।

(८) आचरण।

(९) मृत्यु।

(१०) उपसंहार—शिवाजी का महत्व।

मुग़लों का साम्राज्य ग्रीष्म ऋतु के सूर्य के समान प्रखरतर हो रहा था। इस्लामी धर्म और उसके अत्याचारों के विरुद्ध कोई ज़बान नहीं खोल सकता था। मुसलमानों के अत्याचारों की सीमायें नहीं रही थीं। सारी हिन्दू जाति निराशा में डूबी हुई थी। धार्मिक भावनाओं के वशीभूत होकर मुसलमान अधिकारी हिन्दुओं को तंग कर रहे थे। हिन्दुओं को राज से कोई अधिकार और पद नहीं मिल सकते थे। पद-पद पर हिन्दुओं को अपमानित किया जाता था, फिर भी मुसलमान अधिकारियों के सामने चीं-चपड़ नहीं कर सकते थे।

हिन्दुओं के धर्म पर आक्षेप किये जाते, किन्तु वह कुछ

सकते थे। हिन्दू जाति में जीवन नहीं रह गया था। उसका जीवन बड़ा नीरस था। कोई हिन्दुओं के आंसू पोंछने वाला ही न था। ऐसे समय में हिन्दू-धर्म-रक्षक वीर शिरोमणि छत्रपति शिवाजी का जन्म हुआ। और शिवाजी ने अपने अदम्य उत्साह से विरोधी परिस्थितियों का सामना किया। एक असंगठित मराठी जाति को संगठित करके एक महत्वपूर्ण राजनैतिक शक्ति शाली जाति बना दिया।

शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में पूना के निकट शिवनेर के किले में हुआ। सिसोदिया वंश के रत्न शाहजी आपके पिता थे। यादव-राव की विदुषी कन्या जीजाबाई आपकी माता थीं। शाहजी गोलकुण्डा राज्य के जागीरदार थे। शिवाजी के जन्म के बाद शाहजी और शिवाजी के माता में कुछ बातों पर मनोमालिन्य बढ़ गया। शाहजी ने दूसरा विवाह कर लिया। शिवाजी अपनी माता जीजाबाई के साथ अपने नाना के यहाँ चले गये। कुछ काल के पश्चात् यादवराव और शाहजी में मैत्री हो गई और जीजाबाई शिवाजी के साथ शाहजी के घर आ गईं। जीजाबाई असाधारण बुद्धिमती और विदुषी माता थीं। बालक शिवाजी पर माता के उपदेशों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। जीजाबाई ने शिवाजी को साहस और कर्तव्य का पाठ पढ़ाया। उन्होंने हिन्दू महापुरुषों की धार्मिक कहानियाँ सुनाईं, जिनका शिवाजी के जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

शिवाजी की शिक्षा शाहजी के विश्वासपात्र दादा कोंडदेव की देख-रेख में आरम्भ हुई। कोंडदेव ने शिवाजी को हिन्दू धर्म के सांचे में ढालना आरम्भ किया। राम-कृष्ण आदि बड़े-बड़े भारतीय पुरुषों की वीर-

गाथायें सुन-सुन कर शिवाजी परम उत्तेजित हो गया और उसका हृदय अगम्य उत्साह से भर गया। दादा कोणदेव शिवाजी का अधिक मानसिक विकास न कर सके। पर हां, उन्होंने शिवाजी को व्यावहारिक शिक्षा में पूरा पारङ्गत बना दिया। आखेट करना, अस्त्र-शस्त्र चलाना, घुड़-सवारी आदि-आदि करना सब कोणदेव ने इन्हें सिखा दिया। शिवाजी युद्ध-विद्या में निपुण हो गये। शिवाजी के बढ़ते शौर्य और बुद्धि-चातुर्य ने समस्त मरहटा जाति को अपनी तरफ आकर्षित कर लिया और शिवाजी का शौर्य और साहस नित्य बढ़ता ही गया। उसने मरहठों में सङ्गठन की रूह फूँकदी।

शिवाजी के हृदय में शूरवीरों के आदर्श थे। वे प्रबल पराक्रमी योद्धा बनने के अभिलाषी थे। समर्थ रामदास के राष्ट्रीय उपदेशों का प्रभाव शिवाजी के हृदय पर पड़ा। एक तो शिवाजी स्वयं महत्त्वाकांक्षी, दूसरे गुरु रामदास के उपदेशों का प्रभाव। शिवाजी कार्य क्षेत्र में उतर पड़े। स्वतन्त्रता की उमंगें शिवाजी के हृदय में तरंगें मारने लगीं। शिवाजी की स्वतन्त्र भावना के साथ ही साथ समस्त मरहठा जाति में स्वतन्त्रता की भावना गूँज उठी। शिवाजी की सङ्गठित सेना ने इधर-उधर हमले मारना आरम्भ कर दिया। इन्होंने पुरन्दर तोरन, जुनेर आदि क़िलों पर अधिकार जमा लिया। बीजापुर का नवाब शिवाजी की इस बढ़ती को न सह सका और मन ही मन कुढ़ने लगा और चाहा कि शिवाजी को पकड़वा लिया जाय, किन्तु वह इस कार्य में सफल न हो सका।

जब बीजापुर का नवाब शिवाजी को न पकड़ सका तो उसने शाहजी को कैद कर लिया। शिवाजी ने शाहजहां को लिखा। शाहजहां के आतङ्क

से आतंकित होकर बीजापुर के नवाब ने शाहजी को छोड़ तो दिया किन्तु उसे शान्ति न मिली। शिवाजी उसकी आँखों में चुभने लगा। उसने अपने सेनापति अफजलखां को एक बड़ी सेना देकर शिवाजी को पकड़ने भेजा। अफजलखां बड़ा चालाक था। अफजलखां ने शिवाजी को लिख भेजा कि यदि शिवाजी मुझसे बिना हथियार के अकेले मिलें तो मैं उनका सारा अपराध क्षमा कर दूँगा। शिवाजी ने उसके प्रस्ताव को फौरन स्वीकार कर लिया। अफजलखां की नीयत यह थी मुमकिन था कि वह शिवाजी पर हमला करता किन्तु शिवाजी पहले से ही सचेत थे। उन्होंने एक बघनख निकाल कर अफजलखां का काम तमाम कर दिया। मराठों की जो सेना पास ही छिपी खड़ी थी, उसने तमाम सेना को मार भगाया। शिवाजी ने खान के शव को पहाड़ी पर गड़वा दिया और उसके ऊपर एक मीनार बनवा दी। इसके अतिरिक्त बीजापुर नवाब ने अनेक चेष्टायें शिवाजी को काबू में करने की कीं, किन्तु सब निष्फल गईं। अन्त में बीजापुर के नवाब ने शिवाजी का लोहा मान लिया और उसे जीते हुए भू-भागों का शासक मान लिया।

अब शिवाजी ने मुगल साम्राज्य के दक्षिणी भागों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। सम्राट औरंगजेब ने शाइस्ताखां को एक बड़ी सेना के साथ दक्खिन भेजा। शाइस्ताखां की पूना में शिवाजी से भेंट हुई। आधी रात के समय शिवाजी मय चन्द सैनिकों के बराती बनकर शाइस्ताखां के महल में घुस गए और मारकाट मचाने लगे। शाइस्ताखां डरकर भागा। शिवाजी ने उसकी उँगलियाँ काट दीं। इस युद्ध में शाइस्ताखां का लड़का मारा गया। इस समाचार को सुनकर सम्राट

औरङ्गजेब बहुत घबराया। उसने जयपुर-नरेश जयसिंह को शिवाजी के विरुद्ध युद्ध करने भेजा। शिवाजी राजपूतों से लड़ना नहीं चाहता था। अत: जयसिंह से सन्धि करली। जयसिंह दिल्ली लौट आये।

शिवाजी का आतङ्क क्रमश: फैलता गया। १६६४ ई० में उसने यूरोपीय सौदागरों की सूरत वाली कोठी लूट ली, जिससे यूरोपीय सौदागर बड़े क्षोभित हुए किन्तु कुछ कर न सके। उधर जयसिंह के साथ हुई सन्धि के समाचार को सुनकर सम्राट बड़ा प्रसन्न हुआ। शिवाजी से मिलने को सम्राट ने निमन्त्रण पत्र भेजा। जयसिंह के आश्वासन पर शिवाजी आगरे आया। सम्राट ने शिवाजी का अपमान किया। उसने शिवाजी को कैद कर लिया शिवाजी ने बड़ी चतुराई से अपने को कैद से छुड़ाया। वह मिठाइयों की टोकरी में बैठ क़िले से बाहर आ गया। साधुओं का भेष बनाकर छिपते छिपते पूना आ गया। दक्षिण पहुँच कर शिवाजी ने पुन: अपनी सेना का निर्माण और सङ्गठन किया। जयसिंह के साथ सन्धि में जिन मुग़लों के क़िलों को शिवाजी ने लौटा दिया था, उन पर पुन: अधिकार जमा लिया। शिवाजी ने फिर कभी सम्राट का विश्वास न किया। सम्राट ने अनेक चेष्टायें शिवाजी की शक्ति को दबाने की कीं, किन्तु सब निष्फल गईं। सन् १६७४ में उन्होंने अपने को महाराजा घोषित किया। रायगढ में बड़ी धूमधाम से आपका राज्याभिषेक हुआ। समस्त दक्खिन में भगवा ध्वजा फहराने लगी। तमाम नवाब और राजे कर देने लगे। राज्य शासन के लिये इन्होंने एक सभा बनाई, जिसके आठ सदस्य थे। राज का सारा काम-काज सभा की आज्ञा से होता था। सारे दक्षिण में एक छत्र शिवाजी का साम्राज्य था। चारों तरफ शिवाजी

का पद-पात होने लगा और शत्रुओं के हृदय पर शिवाजी का आतंक छा गया।

शिवाजी ठिगने कद का, बलवान, दृढ़-प्रतिज्ञ, तीक्ष्ण-बुद्धि, राज-नीतिज्ञ और महान धार्मिक व्यक्ति था। हिन्दू-धर्म पर उनकी महान आस्था थी। समर्थ रामदास के पट्ट-शिष्यों में से थे। रामदास का उद्देश्य हिन्दू धर्म का पुनरुत्थान करना था। शिवाजी ने अपने व्यक्तित्व के बल पर गुरु के स्वप्न को सत्य कर दिखाया।

शिवाजी बड़े बुद्धिमान, परिश्रमी और उदार-प्रकृति के पुरुष थे। राज करने की क्षमता उनमें असाधारण थी। स्त्रियों का बड़ा सत्कार करते थे। गाय और ब्राह्मण के प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। स्त्रियों के प्रति बड़ा सम्मान रखते थे। विधर्मियों के प्रति भी आप श्रद्धा रखते थे कभी उन्होंने किसी मसजिद को नहीं नष्ट कराया। मुसलमान स्त्रियों के सतीत्व को कभी नष्ट न होने दिया। शिवाजी के चरित्र पर आलोचना करते हुए खफीखाँ ने लिखा है कि 'शिवाजी की आज्ञा थी कि मुसलमान स्त्रियों और कुरान शरीफ का कभी अपमान न किया जावे।" वे बुद्धिमान साहसी और तेजस्वी थे और कभी कठिनाइयों का सामना करने से घबराते न थे।

शिवाजी को सिंहासन पर बैठे हुए पूरे ६ वर्ष भी न हो पाये थे कि उनके पैर में पीड़ा उठ खड़ी हुई। बहुत उपचार किया गया किन्तु कुछ फायदा न हुआ। अन्त में मृत्यु आ ही गई। इस प्रकार ५३ वर्ष की छोटी अवस्था ही में शिवाजी ने परलोक-यात्रा की।

हिन्दू जाति की आत्म मर्यादा के युग में आत्म विश्वास को जाग

वीर शिवाजी ने हिन्दुओं की रक्षा की। शिवाजी के व्यक्तिगत गुण आज भी हिन्दू जाति के हृदय में बड़ा सम्मान पा रहे हैं।

महाकवि तुलसीदास

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—तुलसीदास के जन्म के समय की परिस्थिति।

(२) जीवन वृत्त।

जन्म १५८९ वि० राजापुर (बांदा)। पिता आत्माराम, माता हुलसी। बाल्यकाल और शिक्षा। विवाह और आसक्ति। स्त्री का। राम भक्ति और सन्यास ग्रहण। रामायण की रचना। वृद्धावस्था, बाहुपीड़ा और मृत्यु।

(३) काव्य-रचना।

(४) तुलसीदास के ग्रन्थ।

(५) तुलसीदास की कविता, भक्ति और समाज-सुधार।

(६) उपसंहार—हिन्दू जाति और तुलसीदास।

हिन्दू जाति पर बराबर विदेशी जाति के आक्रमण होते रहे हैं, विदेशी शासकों ने धर्म के नाम पर बड़े बड़े भयङ्कर और नृशंस अत्याचार किये हैं, जिसके कारण हिन्दुओं में आत्माभिमान की भावनायें कम हो गईं। विधर्मियों की धार्मिक उत्पीड़न की नीति ने हिन्दुओं के जीवन को निर्जीव सा बना दिया था, उसमें चारों तरफ निराशा का साम्राज्य स्थापित हो गया था। भारतीयों में मृतक जीवन शेष रह गया था। हिन्दुओं की पुकार सुनने वाला कोई न था। हिन्दुओं की ऐसी दुर्दशा के

समय गोस्वामी तुलसीदास का जन्म हुआ जिन्होंने हिन्दुओं के मन-हृदय में आशा का संचार किया। जनता के हृदय में भक्ति का बीज बोया और अपनी अनोखी प्रतिभा से हिन्दी-साहित्य का मस्तक बहुत ऊँचा उठा दिया।

बालक रामबोला का जन्म राजापुर जिला बाँदा (यू० पी०) में सम्वत् १५८९ विक्रमी में हुआ था। यही बालक आगे तुलसीदास के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हुलसी था। "गर्भ लिये हुलसी फिरे तुलसी सो सुत होय।" बचपन का नाम इनका रामगुलाम था जो रामबोला में परिवर्तित हो गया था। आपके जन्म के अवसर पर ही माता का देहान्त हो गया था। अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्म होने के कारण आप घर से निकाल दिये गये थे। अतः आप माता पिता के स्नेह से वंचित रहे। आपका बालकपन बड़े कष्ट से बीता। इनकी सहायता मौसी ने ५ वर्ष पर्यन्त इनका लालन पालन किया। दुर्भाग्य से मौसी का भी शरीरान्त हो गया। अब हमारे चरित-नायक बिलकुल अनाथ हो गये और पेट की ज्वाला शान्त करने के लिये द्वार द्वार भीख मांगते फिरे। घूमते-फिरते वैष्णव साधु नरहरी से सोरों में आपकी भेंट हो गई। बाबा नरहरी से ही आपने राम-नाम की दीक्षा ली। इस समय तक आप इतने छोटे थे कि राम-कथा आपकी समझ में न आती थी। बाबा नरहरी के साथ आप काशी गये और पंचगंगा घाट पर रहने लगे। वहां महात्मा शेषसनातन जी से तुलसीदास ने वेद पुराण और शास्त्रों को पढ़ा। पन्द्रह वर्ष पर्यन्त इनका पठन-पाठन जारी रहा।

शिक्षा समाप्त करके आप अपने मित्र के साथ राजापुर लौटे। यहां इनके परिवार का कोई नहीं रहा था। एक ब्राह्मण के आग्रह से तुलसीदास

ने राजापुर रहना ही निश्चित किया। यहां राम की कथा में आप मग्न रहते और लोगों को राम-कथा का रसास्वाद कराया करते। आपकी आजीविका केवल कथा कहना मात्र था। एक दिन दीनबन्धु नामक एक ब्राह्मण जमुना-स्नान करने राजापुर आया। उस ब्राह्मण ने तुलसीदास की कथा सुनी। दीनबन्धु तुलसीदास की योग्यता और सौन्दर्य पर मुग्ध हो गया। उसने अपनी रत्नावली नामी लड़की से तुलसीदास का विवाह कर दिया। कुछ दिनों पश्चात रत्नावली की मृत्यु हो गई। अत तुलसी-दास का दूसरा विवाह कञ्चनपुर निवासी लक्ष्मणदास की कन्या बुद्धिमती से हो गया। बुद्धिमती बड़ी बुद्धिमान और रूपवती थी। तुलसीदास का मन उसके प्रेम पाश में फँस गया। प्रेमी हृदय बड़े कोमल होते हैं। एक बार बुद्धिमती मायके चली गई। तुलसीदास को उसका वियोग असह्य हो गया। विषम प्राकृतिक कठिनाइयों का सामना करते हुए वे नदी पार करके पत्नी के प्रकोष्ठ पर जा चढ़े। बुद्धिमती ने तुलसीदास की ऐसी प्रेम-व्यग्रता देखी और व्यङ्ग में कहा —

> अस्थि चरम मय देह मम, तामें जैसी प्रीति।
> तैसी जो श्रीराम में, होत न तौ भव-भीति॥

आसक्ति का रूप विरक्ति ने ले लिया। गुरु नरहरी के बोये बाल्य-काल के संस्कार उभर आये और तुलसीदास विरागी हो गये। लोक-प्रेम का स्थान ईश्वर प्रेम ने ले लिया। आपके ज्ञान-चक्षु खुल गये। उन्हें जगत की समस्त वस्तुओं में भगवान का ही भास होने लगा। तुलसी का काया कल्प हो गया। अब तुलसी की महायात्रा आरम्भ हुई। जहां गये वहीं भगवत प्रेम का प्रसार किया। १५ वर्ष के लम्बे यात्रा काल ने तुलसी को एक ऊँचा अनुभवी व्यक्ति बना दिया।

संवत् १६१६ वि० में चित्रकूट पर तुलसीदास ने 'गीतावली' की रचना की। संवत् १६३१ वि० में अयोध्या आकर रामचरित-मानस लिखना आरम्भ किया।

संवत सोरह सौ इकतीसा। करौं कथा हरि-पद धरि सीसा॥
नौमी भौमवार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकासा॥

अयोध्या में तुलसीदास को रामचरित-मानस लिखने में बड़ी-बड़ी बाधाएँ आईं। अतः २ वर्ष ७ मास अयोध्या में रामायण लिखने के पश्चात् काशी चले आये। असी घाट पर निवास किया। यहीं पर रामचरित-मानस समाप्त हुआ।

संवत् १६८० वि० में काशी में महामारी का बड़ा प्रकोप हुआ। हमारे चरित-नायक भी इस प्रकोप से न बच सके। भयंकर बीमार हुए। औषधि-उपचार किया गया किन्तु कुछ लाभ न हुआ। अन्तिम घड़ी आ गई। तुलसी के मुख से यह अन्तिम दोहा निकला और शान्ति की नींद सो गये—

"राम-नाम यश बरनि कै, भयो चहत अब मौन।
तुलसी के मुख दीजिये, अब ही तुलसी सोन।"

तुलसीदास की काव्य-कला अनन्य भक्ति प्रकृति-निरीक्षण और मनोविज्ञान कला का भण्डार है। कविता की दृष्टि से तुलसीदास का स्थान बहुत ऊँचा है। कर्म शत्रु भी समाप्त होता है और वही उसमें कविता बनता है। तुलसीदास जी ने जन्म लेकर मृतक हिन्दू जाति में जीवन डाला, भक्ति और ज्ञान की तरंगें बहाईं। हिन्दी और हिन्दू जाति का गौरव बढ़ाया।

तुलसीदास ने लगभग १० ग्रन्थों की रचना की है। प्रत्येक रचना काव्य-गुण-सम्पन्न और अनूठी है। आपके ग्रन्थों में रामचरित मानस का स्थान बहुत ऊँचा है। दूसरे नम्बर पर गीतावली और कवितावली हैं। कौन ग्रन्थ कब लिखा गया इसका अभी तक सही पता नहीं चला है। अभी खोज हो रही है। उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त रामलला नहछू, बरवै रामायण, जानकी मङ्गल, पार्वती मङ्गल, दोहावली और कृष्ण गीतावली हैं।

तुलसी और उनके ग्रन्थों का महत्त्व महान है। तुलसी का जन्म ऐसे अवसर पर हुआ है, जब देश अपनी देश भाषा संस्कृत को खो चुका था। जनसाधारण के सामने नैतिक और सामाजिक व्यवस्था रखने वाला कोई ग्रन्थ न था। देश में चारों तरफ अराजकता फैली हुई थी। देश विलासिता और आलस्य के नशे में चूर था। हिन्दू धर्म पर इस्लामी संस्कृति का प्रभाव पड़ता जाता था। ऐसी भयङ्कर परिस्थिति में उत्पन्न होकर उन्होंने हिन्दू समाज को बचाया नया जीवन प्रदान किया और वर्णाश्रम धर्म की फिर से प्रतिष्ठा की। लोगों ने वेद, शास्त्रों के महत्त्व को समझा। उन्होंने वास्तविक धर्म को सर्व साधारण के सामने रक्खा।

तुलसी की कविता साहित्यिक दृष्टि से बहुत ऊँची है। इनकी कविता में मानव हृदय के सभी भाव चित्रित किये गये हैं। भारतवर्ष में जितना स्थान जनता के हृदय में तुलसी ने पाया है, उतना किसी कवि ने नहीं पाया।

गोस्वामी तुलसीदास को भक्ति भावना के प्रचार करने में भी बड़ी सफलता मिली है। इन्होंने अपनी राम-भक्ति में हिन्दू-धर्म के सब पक्षों

। मानव जीवन के मनोरञ्जन के साधनों में से एक साधन कवि-सम्मेलन भी है। कविता मानवी जीवन में लोकोत्तर आनन्द पैदा करती है। कवि लोग मृतक जीवन को उत्साहित करते हैं। पतित राष्ट्रों को उठाने के लिये उत्तम कवियों की बड़ी आवश्यकता है। कवि मानव-जीवन की विभिन्न दशाओं का चित्र कविता में खींचता है। अत कवि कभी हँसाता है, कभी रुलाता है और कभी मानव-हृदय में क्रोध सञ्चार करता है। कभी हृदय में प्रेम उमड़ाता है, कभी मानव-हृदय को उत्साह से ओतप्रोत कर देता है। अत प्रत्येक अवस्था में कवि मानव-हृदय पर अधिकार जमाता है। कवि मानव-हृदय में पर्याप्त उलट फेर कर देता है। समाज को कवियों की बड़ी आवश्यकता है। जिन राष्ट्रों के पास उत्तम कवि नहीं हैं, वह राष्ट्र अपना जीवन मृतकवत् व्यतीत करते हैं। समाज का कर्तव्य है कि वह कवियों का आदर करे। कवियों को प्रोत्साहन देने के लिये कवि सम्मेलनों का आयोजन करे। कवियों को पुरस्कार दे। कवि-सम्मेलन ऐसे ही प्रकार के उत्सव हैं, जिनमें कवियों को उत्साहित करने और जनता के मनोरञ्जन के निमित्त नियोजित किये जाते हैं। कवि और श्रोता इकट्ठे होते हैं। नियत समस्या अथवा स्वतन्त्र विषय पर कवि लोग कविता पाठ करते हैं। उत्तम कवियों को पारतोषिक और उपाधियां भी दी जाती हैं।

कवि-सम्मेलनों का आयोजन किसी उत्सव, त्यौहार, कान्फ्रेंस या मेलों के अवसर पर होता है। सम्मेलन की तिथि और निर्धारित समस्या कवियों के पास हफ्तों पहले भेजदी जाती है, ताकि कवि लोग अपनी अपनी रुचि के अनुकूल समस्या-पूर्ति करें। नियत तिथि और समय पर सब कवि लोग और श्रोता एकत्र होते हैं। कवि-सम्मेलन का सभापति या तो पहले ही से

अनुकूल कवितायें सुनाते हैं। हास्यरस की कवितायें जनता को खूब हँसाती हैं।

कविता पाठ के पश्चात निर्णायक समिति अपने निर्णय कार्य में जुट जाती है। सर्वोत्तम कविता सुनाने वाले महाशयों के नाम अलग छांट लिये जाते हैं। सबसे पीछे सभापति महोदय की कविता पढ़ी जाती है। कवि सम्मेलनों के सभापति प्रायः कवि लोग ही बनाये जाते हैं। सभापति महोदय अपनी कविता सुनाने के पश्चात आगत महानुभावों को धन्यवाद देते हैं। काव्य कला का गुण दिखलाते हैं। सम्मेलन में पढ़ी गई कवि ताओं की आलोचना करते हैं। इसके पश्चात प्रतियोगिता का फल सुनाया जाता है, फिर पुरस्कार वितरण होता है। पदक और सर्टिफिकेट दिये जाते हैं। इस प्रकार से कवि सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त सी हो जाती है। तत्पश्चात सभापति महोदय श्रोताओं और कवियों को धन्यवाद देकर सम्मेलन की कार्यवाही को समाप्त कर देते हैं।

कवि-सम्मेलनों से मनोरञ्जन तो होता ही है, साथ ही कवियों को पर्याप्त प्रोत्साहन मिलता है। पुरस्कृत कवि पहले की अपेक्षा दूने उत्साह के साथ कविता करने में संलग्न देखे जाते हैं। समस्या पूर्ति करने से कवित्व शक्ति बढ़ती है। जनता के सम्पर्क में आने से कवियों की कीर्ति और सम्मान बढ़ता है। नये कवियों का जन्म होता है। कविता कवि को तो आनन्द देती ही है, साथ ही सुनने वालों के आनन्द को भी बढ़ाती है। प्रायः देखने में आया है कि बाज-बाज़ प्रोपेगेण्डाओं में बड़े-बड़े यशस्वी व्याख्याता कामयाब नहीं होते, वहां कवियों के छोटे छोटे वाक्य भयङ्कर प्रलय काण्ड मचाने में पूरे सफल देखने में आये हैं।

में न आने दिया जाय। तुकबन्दी और समस्या पूर्ति का एक दम अन्त हो जाना चाहिये। इससे अधिक कवि-सम्मेलनों के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता।

समाचार-पत्रों की उपयोगिता

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना— समाचार पत्रों का उदय।

(२) समाचार पत्रों का संक्षिप्त इतिहास।

(३) समाचार पत्रों का व्यवसाय और प्रचार।

(४) समाचार पत्रों के लाभ —

समाचार पत्रों द्वारा विज्ञापन। व्यापारिक उन्नति। राष्ट्रीय जागृति।

(५) समाचार पत्र और वैज्ञानिक दृष्टिकोण।

(६) समाचार पत्र और साहित्य निर्माण।

(७) समाचार पत्रों से हानियां —

झूठे समाचार देना। गन्दे विज्ञापन और साम्प्रदायिक मनोमालिन्य उत्पन्न करना।

(८) समाचार पत्रों का महत्व।

(९) उपसंहार— समाचार पत्रों का भविष्य।

यूरोपीय संस्कृति के साथ साथ भारत में भी नये-नये आविष्कारों ने विकास पाया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने जहां भारत की संस्कृति को हानि पहुँचाई है, वहां कहीं-कहीं ऐसे उत्तम कोटि के उपकार भी

किये हैं जिनका भारतवर्ष चिरऋणी रहेगा। भारतवर्ष १९ वर्ष से यूरोपीय सभ्यता के सम्पर्क में आया है। वर्तमान भारत पर पाश्चात्य संस्कृति की बहुत बड़ी छाप है। भारतवर्ष में राष्ट्र-प्रेम का उदय अँगरेजी शासन से प्राप्त हुआ है। अँगरेजी शासन ने बहुत कुछ भारत की परिस्थिति में परिवर्तन किया है। कुछ इस प्रकार के आविष्कार और सुधार भी किये हैं जिनका देश बहुत आभारी रहेगा। ब्रिटिश शासन की उन उत्तम देनों में से एक देन समाचार पत्र भी हैं।

समाचार पत्रों का अभ्युदय ईसा की १६वीं शताब्दि में यूरोप की उर्वरी भूमि पर हुआ। इङ्गलैण्ड में समाचार पत्र १७वीं शताब्दि में पहली बार प्रकाशित हुए। समाचार पत्रों का रूप जो आजकल देखने में आ रहा है ऐसा रूप आरम्भ काल में नहीं था। प्रथम समाचार पत्र के आविष्कारक के हृदय में यह बात स्वप्न में भी न आई होगी कि समाचार पत्र संसार को इतने उपयोगी सिद्ध होंगे।

हमारे देश में अँगरेजों के आने से पहले कोई समाचार पत्र नहीं था। सन् १७८१ ई० में समाचार पत्रों की प्रथा भारतवर्ष में आई। पहला पत्र जो हमारे देश में प्रकाशित हुआ, उसका नाम 'इण्डिया गजट' था। यह सरकारी पत्र था। सरकारी विज्ञापनों के निमित्त इसका जन्म हुआ था। इसके पश्चात् ईसाई मिशनरियों ने अपने प्रचार कार्य के लिये समाचार पत्र को उपयोगी समझा और रामपुर से देशी भाषा का सर्वप्रथम समाचार पत्र 'समाचार-दर्पण' निकाला। इस उपकार का श्रेय मि० कैरी मार्शमैन और वार्ड महाशयों को है। इन महानुभावों का भारत बड़ा आभारी है। इस पत्र के पश्चात् भारतवर्ष में भी समाचार पत्रों का

क्रम-क्रम विकास आरम्भ हुआ। समाचार पत्रों को विकसित करने में दूसरा भारतीय हाथ राजा राममोहन राय का है। राजाजी ने अपने ब्रह्म-समाजी विचारों को प्रकाशित करने के लिये "कौमुदी" नामक समाचार पत्र बँगला भाषा में निकाला। इसके पश्चात प० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने 'प्रभाकर' नामक पत्र को जन्म दिया। सन १८३५ ई० में प्रेस की स्वतन्त्रता की घोषणा की गई जिसके कारण देश में अनेक पत्र और पत्रिकायें निकलीं, जिनसे समाचार पत्रों की प्रगति में बड़ी सहायता मिली। ला० खेमराज जी वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई वाले और ला० तोताराम जी वकील अलीगढ़ वालों ने भी क्रम से वेङ्कटेश्वर' और 'भारत बन्धु' नामक दो हिन्दी साप्ताहिक पत्रों को जन्म दिया। हिन्दी समाचार पत्रों का असली विकास हरिश्चन्द्र बाबू के द्वारा हुआ। उक्त बाबू साहब ने अपनी सारा शक्ति इस कला के विकसित होने में लगाई। उन्होंने कई हिन्दी समाचार पत्रों को जन्म दिया। अब तो अनगिनत पत्र और पत्रिकायें विविध भाषाओं में प्रकाशित होती हैं। भारत के प्रत्येक प्रान्त में अनेक समाचार पत्र प्रकाशित होते हैं। इस इतने उन्नति काल में भी अभी हिन्दी-समाचार पत्र अँगरेजी समाचार पत्रों की अपेक्षा उत्तम कोटि के नहीं निकल रहे, इसका हमें खेद है।

अब से दस वर्ष पहले कुछ इने गिने समाचार पत्र प्रकाशित होते थे और पढ़ने वालों की सख्या भी बहुत कम थी, किन्तु आज मजदूर और किसान तक के हाथ में पत्र दिखलाई देता है। देश में पिछले बीस वर्ष के राजनैतिक आन्दोलन ने समाचार पत्रों की बड़ी आवश्यकता बढ़ादी है। आजकल देश में बड़े-बड़े विशाल छापेखाने हैं, जिनमें बड़ी बड़ी

मशीन काम करती है। अनेक लेखक और रिपोर्टर उसमें सहयोग देते हैं और अपनी आजीविका उपार्जन करते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि समाचार पत्रों की कला भारतवर्ष में भी पूरी विकसित हो चुकी है। इस कला का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।

संसार की प्रगति में व्यापार को जो स्थान प्राप्त हुआ है, उसका सारा श्रेय समाचार पत्रों को है। कुछ काल तक तो समाचार पत्रों का उपयोग केवल लोक-सेवा तक ही सीमित रहा था किन्तु अब तो समाचार पत्र आजीविका उपार्जन में पर्याप्त सहायता पहुँचाते हैं। व्यापारी लोग चाहते हैं कि हमारा माल अधिक मात्रा में बिके, किन्तु यह तब ही सम्भव हो सकता है जब अधिक ग्राहक उसकी दूकान को जानते हों। यह भी बड़ा कठिन है कि एक व्यापारी घर २ और ग्राम २ में कहता फिरे कि अमुक वस्तु मेरे यहाँ सस्ती और बढ़िया मिलती है। इस कार्य को समाचार पत्रों ने बड़ा ही सुगम कर दिया है। समाचार पत्रों द्वारा थोड़े व्यय में अधिक जनता व्यापारी को जान लेती है और व्यापारी के माल बिकने में एक बड़ी भारी सहायता मिल जाती है। इस विज्ञापन-प्रणाली ने व्यापार को बहुत उन्नति प्रदान की है और दिनोंदिन इसका क्षेत्र विशाल होता जाता है। भारतवर्ष ने भी अब इस व्यवस्था को पर्याप्त रूप में विकसित किया है। हमारे देश में कितने ही व्यक्ति और कम्पनियाँ ऐसी हैं जिन्होंने इस कार्य को व्यवसाय की दृष्टि से लिया है और धन और यश दोनों प्राप्त की हैं।

समाचार पत्रों के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं। एक समाचार पत्र इस प्रकार के होते हैं जो साहित्यिक विचार विनिमय में लगे रहते हैं, ऐसे

समाचार पत्र प्राय मासिक या साप्ताहिक होते हैं । दूसरे प्रकार के समाचार पत्र ऐसे होते हैं जो देश की राजनैतिक परिस्थिति से जनता को परिचय कराते हैं । ऐसे पत्रों की गणना प्राय. दैनिक पत्रों में होती है ।

कुछ पत्र पत्रिकायें ऐसी भी होती हैं जो केवल अपनी जाति के समाचार और अपनी जाति की कुप्रथाओं की रोक-थाम के साधन और समस्यायें समझाती हैं । ऐसे समाचार पत्रों को जातीय समाचार पत्र कहते हैं । कुछ पत्र ऐसे हैं जो व्यापार सम्बन्धी समाचारों को छापते हैं और देश के विविध स्थानों के भाव इत्यादि से जनता को परिचित कराते हैं, ऐसे पत्र व्यापारिक पत्र कहलाते हैं । दैनिक पत्रों में वही पत्र सबसे अच्छा समझा जाता है जो सबसे पहले समाचार देता है । इसके अतिरिक्त समाचारों का काम भी उसकी अच्छाई को प्रकट करता है । अच्छे पत्रों की छपाई भी अच्छी होती है । वह ठीक समय पर निकलता है । निर्भय होकर सामयिक राजनीति एवं राजनीतिज्ञों के विचारों की आलोचना करता है । देश विदेश के समाचार जनता में पहुँचाता है । किसी आन्दोलन को उठाकर ऊँचा स्थान दिलाना भी समाचार पत्रों का काम है । अच्छा सम्पादक अपने पत्र द्वारा देश की उन्नति, समाज की दुर्दशा, किसी विशेष देश की उन्नति, सम्बन्धी कारणों का विवरण भले प्रकार देता है ।

समाचार पत्रों की आमदनी उसके मूल्य से और विज्ञापनों से होती है । भारतवर्ष के अनेक पत्र केवल विज्ञापनों की आमदनी पर ही चल रहे हैं । अच्छी कोटि के समाचार पत्र विज्ञापन बिलकुल नहीं देते । गोरखपुर से निकलने वाला कल्याण अखबार बिलकुल विज्ञापन नहीं

देता। समाचार पत्र में विज्ञापन हो अथवा न हो किन्तु समाचारों का ठीक होना अत्यन्त आवश्यक है। समाचार पत्रों में *गल्प, कहानी, नाटक* और चुटकुलों का समावेश कर देने से जनता का अधिक मनोरंजन होता है।

समाचार पत्र राष्ट्रीय जीवन का निर्माण करते हैं। यूरोप की सभ्य जातियाँ समाचार पत्रों के गौरव को भली भाँति समझती हैं। समाचार पत्रों का यह काम तो बड़ा ही सुगम है कि वह जनता की विचार धारा को बात की बात में पलट देते हैं। जनता को शासन के अनुकूल और *प्रतिकूल कर देना समाचार पत्रों के बाँये हाथ का काम है।* जनतन्त्र प्रणाली के अवसरों पर जब चुनाव लड़े जाते हैं तब समाचार पत्रों का उपयोग बहुत बढ़ जाता है। एसेम्बली, कौन्सिल, म्यूनिसिपैलिटी अथवा किसी संस्था के चुनाव के अवसर पर उम्मीदवारों की महत्ता और उनकी निन्दा पर व्याख्यानों का आकर्षण समाचार पत्र जिस चतुराई से करते हैं उतना अन्य कोई साधन नहीं करता। यह देखने में आता है कि कोई अच्छा समाचार पत्र जब किसी उम्मेदवार का समर्थन कर देता है तो वह अवश्य ही अपनी [illegible] में सफल हो जाता है। समाचार पत्रों द्वारा मनुष्य को अपना अनुयायी बना लेना बड़ा ही सुगम है।

लोक-सेवा का काम समाचार पत्र ही करते हैं। समाचार पत्रों का यह लोक-सेवा कार्य इतना गौरवपूर्ण है कि इसकी तुलना में कोई दूसरा कार्य नहीं बैठता। देश के अन्दर राष्ट्र भावना भरने में समाचार पत्र [illegible] काम करते हैं। [illegible] में भी [illegible] समाचार पत्र ही मातृभूमि का काम करते हैं [illegible]

और समाज को प्रेम-सूत्र में बांधना भी समाचार पत्रों का काम है। हमारे देश में जो आजकल क्रांति की लहरें दृष्टिगोचर हो रही हैं, उन सबका श्रेय एकमात्र समाचार पत्रों पर है।

कोई राष्ट्र तब तक समुन्नत नहीं हो सकता, जब तक उस राष्ट्र में अपने देश के प्रति सद्भावनायें उत्पन्न नहीं हो जातीं। राष्ट्र के अन्दर सद्भावनायें भरना, स्वतन्त्रता की आकांक्षायें उत्पन्न करना उस देश के राष्ट्र सेवी नेता और समाचार पत्र ही कर सकते हैं। संसार की चोटी पर विराजने वाली जातियां तब ही सिरमौर कहलाईं, जब उस जाति के समाचार पत्रों ने उस जाति को ऊंचा उठाया।

समाचार पत्र जनता का मनोरञ्जन करते हैं, साहित्य का भण्डार भरते हैं। समाचार पत्रों की आलोचना और प्रति-आलोचनायें नित्य साहित्य का भण्डार भरती रहती हैं।

वर्तमान समय में समाचारों पत्रों का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। भविष्य में इसके महत्त्व की अधिक आशायें हैं। निकट भविष्य में सम्भव है कि समाचार पत्रों की रूपरेखायें बदल जावें, किन्तु राजनैतिक महत्त्व जितना आज समाचार पत्रों का है उतना आगे होना कदापि सम्भव नहीं है। ऐसा हो सकता है कि आवागमन के साधनों में सौलभ्य बढ़ने से संसार भर के समाचार शीघ्र मिलने लगें और उनके शीघ्रातिशीघ्र संस्करण प्रकाशित होने लगें।

समाचार पत्रों से लाभ ही हो, यह कभी सम्भव नहीं है। समाचार पत्र समाज को जहां उत्थान देते हैं, वहां यह समाज को आलसी भी बना

वायुयान

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—विज्ञापन का चमत्कार और वायुयान।

(२) वायुयान का जन्म आकृति और उड़ान।

(३) वायुयान के लाभ —

आवागमन में सुविधा, डाक का सौलभ्य, मनोरञ्जन और सैर-सपाटा।

(४) वायुयान से हानियां —

जन-संहार, बमवर्षा और धन व्यय।

(५) उपसंहार—वायुयान का भविष्य।

पक्षियों को आकाश में उड़ते देख मनुष्य के हृदय में भी उड़ने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। मनुष्य अनेक युग से इस प्रयत्न में लगा है और उसे इसमें आंशिक सफलता भी मिली है, किन्तु इस विज्ञान की उन्नति के काल में अनेक आश्चर्यजनक आविष्कारों को देख ऐसा कौन मनुष्य होगा जो आश्चर्यसागर में निमग्न न हो ! आज के टेलीफोन, बेतार के तार, ग्रामोफोन, सीनेमा, ऐक्सरे, केमरा, टेलीविजन और वायुयान किसके हृदय में आश्चर्य उत्पन्न नहीं करते ! रामचन्द्र जी के पुष्पक विमान की कहानियों को लोग झूठी गप्प समझते थे। क्या कभी मनुष्य के मस्तिष्क में यह बात आई होगी कि कभी हम पक्षियों की भांति आकाश में भी उड़ेंगे ! आज आकाश में घरघराते वायुयानों को देखकर पुरानी गाथायें सत्य सी प्रतीत होती हैं।

आधुनिक वायुयानों का विकास गुब्बारों से हुआ है। अठारहवीं

शताब्दी के उत्तर भाग में गुब्बारों में हाईड्रोजन गैस भरकर आकाश में विहार किया जाता था किन्तु गुब्बारे वायु से हलके होते थे। इस कारण वह हवा के प्रबल झोंकों के कारण हवा के साथ चाहे जिधर को उड़ जाते थे और उसमें बैठने वालों के प्राण सदैव संकट में फँसे रहते थे। शताब्दी में धीरे धीरे गुब्बारों में विकास किया गया और इस प्रकार के वायुयानों का निर्माण हुआ जो मनुष्य की इच्छानुसार उड़ सकते हैं किन्तु इनसे भी मानवी अभिलाषा की तुष्टि न थी। सन् १८९९ ई० में जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जैपलिन ने जैपलिन नामक वायुयान निर्माण किया किन्तु अब 'जैपलिन' की गणना वायुयानों में नहीं करते। सन् १९१४ ई० के महासमर में इस जैपलिन वायुयान का ही उपयोग हुआ था। सन् १९०३ ई० में अमेरिका के प्रसिद्ध कारीगर और विल्बर राइट महानुभावों को इस दिशा में पूरी सफलता प्राप्त हुई। इन्होंने चिड़िया की आकृति के वायुयान निर्माण किये जिनको ऐरोप्लेन के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार के वायुयान हवा का एक साथ दबाव डालने पर ऊपर उठते हैं। कुछ वायुयान तितली की आकृति के होते हैं इन्हें बाई-प्लेन कहते हैं। इन वायुयानों में कई कमरे होते हैं। तेल हो जाने की दशा में भी इनके पृथ्वी पर गिरने का भय नहीं होता। वायुयान में सबसे बड़ी और आवश्यक वस्तु इंजिन का होना और शक्तिशाली होना है। एक प्रकार के वायुयान और भी तैयार हुए हैं जो समुद्र और पृथ्वी दोनों पर उतर सकते हैं उन्हें समुद्री वायुयान कहते हैं। यह वायुयान समुद्र पर नौका का, पृथ्वी-तल पर मोटर का और आकाश में वायुयान का काम देते हैं।

वायुयान तार और लकड़ी के बनाये जाते हैं। वायुयान के मिलते

हो अङ्ग होते हैं, किन्तु उनमें इञ्जिन ही प्रधान अङ्ग होता है। इञ्जिन ४०० हार्स-पावर तक के तैयार हो गये हैं। मोटर इञ्जिन की भांति इसके इञ्जिन पर भी पूरा-पूरा नियन्त्रण रहता है, वह चाहे जिधर घुमाया जा सकता है। वायुयान की आकृति चील पक्षी की सी होती है। वह हवा के दबाव से ऊपर उठता है। वायुयान में प्रोपेलर होता है जो इसे आगे पीछे बढ़ा हटा सकता है। दो पहिये भी होते हैं जो इस प्रकार रक्खे जाते हैं जिससे वायुयान का मुख ऊपर को उठा रहे। जहाज़ के दोनों किनारों पर पङ्ख होते हैं। पङ्खों की संख्या २ से ६ तक होती है। जब वायुयान उड़ाना होता है तब उसके पङ्खों को ठीकठाक करके लगाते हैं, फिर इञ्जिन को चलाते हैं। इससे प्रोपेलर बड़ी तेजी से घूमने लगता है और वायुयान पहियों के ऊपर पृथ्वी पर दौड़ने लगता है। पङ्खों पर हवा का दबाव पड़ने पर यह पृथ्वी से उठकर ऊपर वायु में उड़ने लगता है।

संसार में जिस द्रुतगति से वायुयान चल सकता है, उस गति से संसार में जल अथवा थल की कोई सवारी नहीं चल सकती। साधारण वायुयान १ घण्टे में २०० मील जा सकता है। वायुयान द्वारा महीनों का मार्ग दिनों में समाप्त हो जाता है। इङ्गलैण्ड और भारतवर्ष के बीच की यात्रा केवल ३-४ दिन में पूरी हो जाती है। वायुयान चलाने के लिये न सड़क बनवाने की आवश्यकता है और न पुल बनवाने की ज़रूरत। आवागमन के साधनों में वायुयान ने एक प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न करदी है। वायुयान के मार्ग में न पहाड़ बाधा पहुँचाते हैं और न जङ्गलों को कटवाने की आवश्यकता पड़ती है। वायुयानों ने संसार को छान मारा है, संसार की कोई दूरी ऐसी नहीं जहां वायुयान न पहुँच सकते हों। संसार

की डाक के आवागमन में वायुयानों का उपयोग दिन प्रति-दिन बढ़ता चला जा रहा है। संसार के सर्व-संहारकारी युद्धों में वायुयानों की बड़ी आवश्यकता बढ़ गई है। आज संसार में वही जाति शक्तिशाली समझी जाती है, जिसके पास अधिक शक्तिशाली और बम वर्षक वायुयान हैं। देश की रक्षा के लिये भी इनकी उपयोगिता कम नहीं है। यूरोपीय महासमर में वायुयानों की धूम सी मच रही है। शत्रुओं की सेना का निरीक्षण परिस्थिति की देख-भाल विषैली गैसों का फैलाना बम-वर्षा रसद आदि के लिये इनका उपयोग बहुत ही होता है। वायुयानों से संसार में छिपने को कोई स्थान नहीं रहा। अज्ञात स्थान ज्ञात हो गये हैं और वहां पर सब साधारण की पहुँच हो गई है। वायुयान के आगमन ने दुर्गम से दुर्गम स्थानों को सुगम कर दिया है।

अभी वायुयानों में उपरोक्त गुणों के अतिरिक्त अवगुण भी हैं। वायुयान की यात्रा अभी ऐसी निर्भय नहीं जैसी रेल की यात्रा है। वायुयान की यात्रा सदैव भयपूर्ण है। अनेक वायुयान आपस में टकरा जाते हैं कुछ पहाड़ों और ऊँचे मीनारों से टकराकर चकनाचूर हो जाते हैं। कभी एञ्जिन खराब हो जाता है कभी आग लग जाती है। प्रत्येक स्थिति में जन धन का नाश होता है। वर्तमान यूरोपीय महासमर में वायुयानों ने प्रलयकाण्ड मचा रक्खा है जिससे सारा यूरोप कांप उठा है और वायुयान के घातक आविष्कार से त्राहि! त्राहि! कर उठा है। इसके अतिरिक्त वायुयान का प्रयोग बड़ा मूल्यवान है। केवल धनी लोग ही इसके उपयोग से लाभ उठा सकते हैं सर्वसाधारण पुरुष इससे कोई लाभ नहीं उठा सकते।

वायुयानों ने मनुष्य की उड़ने की अभिलाषा को तो पूरा कर दिया है, किन्तु अभी वायुयानों से अनेक सम्भावनायें हैं, जो भविष्य के गर्भ में छिपी पड़ी हैं। वह दिन दूर नहीं कि आकाश में प्रदर्शिनी और मेले लगा करें, अभिनय और सिनेमा हुआ करें, केवल आविष्कार में स्थिरता लाने की ही तो आवश्यकता है। विज्ञान की बदौलत न मालूम अभी संसार क्या २ कौतुक देखेगा ?

वायुयानों का प्रचार भारतवर्ष में भी बढ़ता चला जारहा है। दिल्ली, कलकत्ता, कराची, बमरौली में वायुयानों के बड़े २ अड्डे बन गये हैं। अभी तक केवल ५० यात्रियों को लेजाने वाले वायुयान निर्माण हुए हैं। प्रयत्न किया जा रहा है कि इसकी यात्रा मोटर और रेलों की भांति सुगम और सुलभ करदी जाय, जिससे सर्वसाधारण लाभ उठा सकें। संसार में ऐसी आशा कुछ कठिन नहीं। हमें पूर्ण आशा है कि वायुयान कार और लारियों की भाति घर घर की वस्तु हो जावेंगे।

भारतवर्ष में वेकारी और उसे दूर करने के उपाय

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—हमारी आर्थिक रहन-सहन और आर्थिक दशा में परिवर्तन।

(२) वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में व्यावहारिकता का अभाव।

(३) बेकारी के कारण:—

छोटे घरेलू उद्योग-धन्धे बिलकुल नष्ट कर दिये हैं। चर्खा चलाना, खिलौने बनाना, तेल निकालना, कागज बनाना, चित्रकारी करना, गुड़ और खाँड़ बनाने आदि के व्यवसाय जिनसे घर बैठे पैसे प्राप्त किये जा सकते थे, वे लगभग नहीं के बराबर हो गये हैं। अतः बेकारी का प्रथम कारण हमारे घरेलू उद्योग-धन्धों का नष्ट हो जाना है।

संसार में अशान्ति मशीनों के प्रचार ने की है। मशीनें मानवी जीवन में शैतान का काम करती हैं। एक मनुष्य जिस काम को १ वर्ष में करता है, मशीन उसको १ घण्टे में बना देती है। जिस काम पर सहस्रों आदमी काम करते हैं वहा मशीन पर एक आदमी थोड़े समय में सारा काम कर लेता है। अतः संसार में मशीनों ने मनुष्य समाज की जीविका अपहरण की और असंख्य मनुष्यों को बेकार बना दिया। बेकारी की तपस्या जटिल मशीनों ने बनाई है। मशीनों ने भारतीय घरेलू उद्योग-धन्धों को तो बिलकुल चौपट कर दिया है। यदि मशीनों का निर्माण भारत में ही होता तो सम्भवतः बेकारी कम व्यापती।

बेकारी की सबसे बड़ी समस्या हमारी वर्तमान शिक्षा-प्रणाली है, जिसमें व्यावहारिकता को कोई स्थान नहीं है। शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को जीवन संग्राम के लिये तैयार करना है। वर्तमान शिक्षा में मानसिक विकास की तो व्यवस्था है किन्तु वह शिक्षा व्यावहारिक जीवन में कुछ सहायता नहीं देती। आजकल स्कूलों और कालेजों में ऐसी शिक्षा दी जाती है- जो नवयुवकों की रोटी की समस्या को हल नहीं करती। औद्योगिक शिक्षा को तो उसमें कोई स्थान ही नहीं। अतः ऊँची शिक्षा पाकर भी हमारे नवयुवक दूसरों का मुँह ताकते फिरते हैं और कहीं रोटी का सहारा

नहीं पाते। मैंने स्वयं शिक्षितों को वर्तमान शिक्षा-प्रणाली को कोसते सुना है।

४ बेकारी की चौथी समस्या शिक्षितों की नौकरी की मनोवृत्ति है। यह मनोवृत्ति आये दिन बेकारों की संख्या बढ़ा रही है। वर्तमान शिक्षा नवयुवकों को आरामतलब और विलासी बनाती है। वे पढ़-लिख कर कुर्सी पर बैठकर काम करने को उच्च समझते हैं। शारीरिक परिश्रम करने में अपनी मान हानि समझते हैं। इस मनोवृत्ति को देखते हुए हमें बेकारी की नीति भारतवर्ष में पूरी तरह हुई दिखलाई पड़ती है।

५ पाँचवी बेकारी की समस्या भारतवर्ष में साहसिकता का अभाव है। भारतीय धन-कुबेरों में व्यक्तिगत स्वार्थों की तरफ अधिक झुकाव है। इस अनुचित ढंग से कोई काम नहीं करते। यही कारण है कि भारतवर्ष में कम्पनी-सिस्टम सफल नहीं हो पाया। हम अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करना नहीं जानते। हम मिल जुल कर उद्योग धन्धे नहीं चलाते जिससे नवयुवकों को काम मिल सके।

बेकारी की समस्या का एक सबसे बड़ा कारण हमारे देश में विदेशी गवर्नमेंट का होना है। वह हमारे हित में कोई दिलचस्पी नहीं लेती और हमारे घरेलू उद्योग धन्धों और स्वतन्त्र व्यवसायों में अनुचित बाधा लगाती है। यदि राष्ट्रीय गवर्नमेंट होती तो वह प्रजा हितों का अधिक विचार रखती।

अब प्रश्न यह है कि क्या यह समस्यायें हल नहीं हो सकतीं? हाँ अवश्य हल हो सकती हैं किन्तु इसमें गवर्नमेंट का पूरा हाथ होना चाहिये। गवर्नमेंट के सहयोग के बिना कोई समस्या हल नहीं हो सकती।

गवर्नमेण्ट को चाहिये कि वह हमारे उन उद्योग धन्धों को पुनर्जीवित कराये और विदेशी होड़ से उसका रक्षा करे तब ही हमारा हित है अन्यथा नहीं।

हमारे देश में स्वतन्त्र व्यवसायों का भी अभाव है। सरकार को चाहिये कि वह उसमे पूरा प्रोत्साहन दे। बहुत से ऐसे काम हैं, जिनके लिये देश दूसरे देशों का मुहताज है, जिनको हम क़ानूनी रुकावटों के कारण अपने यहा रिवाज नहीं दे सकते। गवनमेण्ट क़ानूनों को बदल कर उन कामों को देश म जारी करा सकती है।

वर्तमान शिक्षा का जीर्णोद्धार अवश्य होना चाहिये। या तो देश वर्धा शिक्षा-योजना को अपना ले अथवा कोई सरल सुगम शैली जो भारतवर्ष के वातावरण के अनुकूल हो, अपना ली जाय, जिसमें व्यावहारिक शिक्षा को ही अधिक प्रधानता दी गई हो। जब स्कूल और कालेजों में व्यावहारिक शिक्षा दी जाने लगेगी तो कोई ऐसी बात नहीं रहती जिससे हमारे नवयुवक रोटी की तलाश में इधर-उधर मारे-मारे भटकें। व्यावहारिक शिक्षा उन्हें स्वावलम्बी बनायेगी और वे स्वतन्त्रतापूर्वक अपना कोई व्यवसाय तलाश कर लेंगे, जो उनकी रुचि के अनुकूल होगा।

भारतवर्ष की जन सख्या नित्य सुरसा के बदन की भांति बढ़ती हा जाती है। प्रत्येक दस वर्ष में लाख आदमी बढ़ते हैं। यही क्रम जारी रहा ता देश में रहने को स्थान मिलना कठिन हो जायगा। वर्तमान यूरोपीय युद्ध के भय से भी कुछ ब्रिटिश जाति भारत में बसने लगी है। कुछ जर्मन और इटली के क़ैदियों को यहां गवर्नमेण्ट भेज रही है, जिससे,

जन-संख्या का प्रश्न भयङ्कर होता जा रहा है। इसका निवारण यही हो सकता है कि जहाँ तक सम्भव हो सके, नवयुवकों को देश में न बसने दिया जाय और सन्तान-निग्रह पर विशेष ज़ोर दिया जाय। स्त्री-पुरुष निग्रह से रहें। सन्तान-निरोध का ज्ञान पर्याप्त संख्या में किया जाय तो जन संख्या सीमित हो सकती है।

शिक्षितों की बेकारी दूर करने के लिये आवश्यक है कि हमारी गवर्नमेण्ट सरकारी नौकरियाँ विदेशियों को देना बन्द करदे। यद्यपि भारतवर्ष में योग्य से योग्य व्यक्ति मौजूद हैं किन्तु हमारी सरकार नौकरियाँ इङ्गलैण्ड वालों को दे रही है। इसे हम भारतीय दृष्टिकोण से सरकार की संकुचित मनोवृत्ति ही समझते हैं। इधर भारतीय शिक्षित समाज भूखा मर रहा है, उधर भारत के कोष से विदेशियों की जेबें भरी जा रही हैं। यह अवस्था हमारी राष्ट्रीय गवर्नमेण्ट न होने के कारण है। यदि आज यह नियम बना दिया जाय कि भारत का प्रत्येक पद भारतवासियों को ही दिया जायगा तो इससे लाखों भारतीय बेकारों को रोटी मिल जायगी। लगभग ५ लाख गोरी सेना भारत की रक्षा के लिये रखा जाता है यदि यह पद भारतीयों का दे दिया जाय तो कई लाख बेकार भारतीयों को काम दिया मिल सकता है। यह नियम बना दिया जाय कि किसी सरकारी पदाधिकारी को ५५ वर्ष से अधिक नौकरी का अवकाश न दिया जाय। इससे नवयुवकों को आगे बढ़ने का अवसर मिल जायगा और बेकारी की समस्या भी हल हो जायगी।

व्यावसायिक क्षेत्र को विस्तृत बनाने के लिये धन की बड़ी आवश्यकता है किन्तु देश में धन का अभाव है। पूँजीपति शिक्षित व्यापारियों की उपेक्षा

ग्रामीणों को बड़ी महँगी पड़ती है। ग्रामीण लोग शिक्षा पर अन्धाधुन्ध व्यय करके बेकारी के अधिक शिकार होकर पड़ते हैं। इस प्रणाली को रोकने की चेष्टा करनी चाहिये।

भारतवर्ष में बैङ्क प्रथा नहीं है, लोग अपनी सम्पत्ति को जेवर बनाने अथवा ज़मीन के अन्दर गाड़ कर रखने ही में गौरव समझते हैं। देश में बैङ्कों का प्रसार करने से व्यापार और व्यवसायों को बहुत कुछ प्रोत्साहन मिल सकता है। बैङ्कों को चाहिये कि वह कम सूद पर रुपया देकर उद्योग धन्धों और स्वतन्त्र व्यवसायों को विकसित करने में सहायता पहुँचायें। लोगों की इस प्रवृति को जनता से दूर करने का भरसक प्रयत्न करें कि धन को जेवर अथवा भूमि में गड़े रहने की अपेक्षा उसे राष्ट्रोन्नति के काम में लगाना अधिक हितकर है।

भारतवर्ष कृषी प्रधान देश है। इस कला का विकसित करने के लिये इस व्यवसाय में काफ़ी क्षेत्र है। पढ़े-लिखे नवयुवक अशिक्षितों की अपेक्षा इस व्यवसाय में अधिक उत्साही सिद्ध हो सकते हैं। साथ ही गांव के उद्योग धन्धों को पुनर्जीवित करके कुछ उत्पादन शक्ति बढ़ाई जा सकती है। गवर्नमेण्ट को चाहिये कि वह बेकार पड़ी भूमि को शिक्षित बेकारों को मुफ्त दे दे, जिसमें वह ज्ञान प्राप्ति के साथ ही साथ जीविकोपार्जन भी कर सकें।

विदेशियों के सतत संसर्ग के कारण भारतीय दृष्टिकोण भी कुछ यूरोपीय रङ्ग में रँगता जाता है और समाज का रहन-सहन अपेक्षाकृत बहुत ऊँचा होता जाता है, जिसके कारण सादगी और भारतीयता नष्ट होती जाती है। यह भारत का दुर्भाग्य है, यह समस्या भी बेकारी की

समस्या का अधिक भयंकर रूप धारण कर रही है। इसमें अपना वही पुराना सिद्धान्त व्यवहार में लाना चाहिये 'सादा जीवन और उच्च विचार।'"

प्राचीन व्यक्तियों को अपनी समस्यायें सुलझाने में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। राष्ट्रीय सरकार होने पर वही कठिनाइयाँ सुगमता में परिवर्तित हो जाती हैं। हर्ष का विषय है कि हमारी सरकार का ध्यान बेकारी की समस्या की तरफ आकृष्ट हुआ है। सम्भव है कोई बीच का रास्ता इस समस्या को हल करने को मिल जावे।

देशाटन के लाभ

विचार-तालिकायें —

(१) प्रस्तावना—देशाटन की व्याख्या।

(२) वर्तमान युग में देशाटन के साधनों की सुगमता।

(३) देशाटन के लाभ—

मनोरंजन, ज्ञानवृद्धि, व्यावहारिक ज्ञानोपार्जन और स्वास्थ्य लाभ।

(४) देशाटन प्रिय जातियाँ और उनका उत्थान।

(५) भारत में देशाटन-प्रियता का अभाव।

(६) उपसंहार—हमें देशाटन प्रिय होना चाहिये।

देश-विदेश के भ्रमण को देशाटन कहते हैं। मनुष्य सदैव परिवर्तन चाहता है। बहुत समय तक एक स्थान पर रहते-रहते मनुष्य प्रायः ऊब जाता है। इधर-उधर घूमने की उसकी अभिलाषा बनी रहती है। मनुष्य की जिज्ञासा रहती है कि वह अधिक से अधिक ज्ञान संचित करे, किन्तु

एक स्थान पर रहने की दशा में यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। इसी कारण हम जातियों में देशाटन प्रियता के भाव पाते हैं। संसार के अनेक देश देशाटन प्रियता के कारण उन्नत हुए हैं।

पुराने समय में देशाटन करना बड़ा कठिन कार्य था। मार्ग बड़े दुर्गम थे। मार्ग डाकू और लुटेरों से भरे थे। मार्ग में बड़े-बड़े नद और नदियों को पार करना बड़ा कठिन था, क्योंकि उस युग में पुलों आदि का अभाव था। थोड़ी-थोड़ी दूर की यात्रा में बड़ा समय लगता था। लोग पैदल, घोड़े अथवा बैलगाड़ी पर यात्रा करते थे। मार्ग में बड़ी-बड़ी आपत्तियों का सामना करना पड़ता था, किन्तु आजकल विज्ञान के साधनों के कारण देशाटन करने में बड़ी सुगमता होगई है। आज रेल, जलयान, वायुयान, मोटर आदि के द्वारा मनुष्य कहां से कहीं जा सकता है। वैज्ञानिक साधनों ने संसार को एक छोटा सा घर बना दिया है और दूर देशों के निवासी कुटुम्बी से हो गये हैं। अब यात्रा करना साधारण बात हो गई है। यात्रा में अब कोई भय या खटका नहीं रहा है। अब यह एक लोकप्रिय आमोद हो गया है।

देशाटन ज्ञानवर्धन का सबसे बड़ा साधन है, इसी कारण प्रत्येक मनुष्य को देशाटन प्रिय होना चाहिये। देशाटन का गुण हम पुस्तकों से भी अर्जन कर सकते हैं, किन्तु उसमें प्रत्यक्ष देखने का सा आनन्द नहीं आता।

यद्यपि पुस्तकें स्थानों का बोध कराने का भरसक प्रयत्न करती हैं, किन्तु तत्सम्बन्धी ज्ञान स्थान को प्रत्यक्ष देखे बिना अधूरा ही रहता है। किसी देश विशेष का वृतान्त पुस्तक द्वारा पढ़ने की अपेक्षा वह कहीं

अच्छा है कि हम स्वयं वहां जाकर पहाड़ ताल झील नदियों को देखें। वहां के मनुष्यों से जीवन सम्पर्क बढ़ायें उनके रहन-सहन को देखें उनके महान आदर्शों का अध्ययन करें। अतः देशाटन किये बिना पुस्तकों द्वारा प्राप्त किया हुआ ज्ञान अधूरा ही रहता है। वास्तविक ज्ञान वस्तु और स्थानों को स्वयं देखने से ही प्राप्त होता है।

देशाटन से केवल ज्ञानोपार्जन ही नहीं होता बरन् मनोरंजन भी होता है। कहीं प्रकृति की मनोहर छटा अवलोकन करने को मिलती है कहीं गगनचुम्बी अट्टालिकायें मन को लुभाती हैं कहीं की स्वच्छता मन को आकर्षित करती है कहीं का स्वच्छ वातावरण मन में शान्ति का भाव भरता है भिन्न-भिन्न विविध जातियों का सम्पर्क प्रकृति सौन्दर्य की छटा आवागमन की कठिनाइयां मनुष्य को ऊँचा उठाती हैं। मन को शान्त करती हैं और स्नायुओं में बल प्रदान करती हैं और स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाती हैं क्या यह देशाटन के लाभ किसी उपयोगी साधन से कम है?

स्वास्थ्य और दीर्घायु प्राप्त करने के लिये देशाटन करना बड़ा ही आवश्यक है। दीर्घ जीवन प्राप्त करने वाले प्रसिद्ध पुरुष सब देशाटन करने के अभ्यासी थे। देशाटन करने से उल्लास उत्साह सक्रियता स्फूर्ति, पाचन-शक्ति और शारीरिक बल-वृद्धि होती है। मित्रों का संग मिलता है पारिवारिक चिन्तायें कुछ काल को विस्मरण हो जाती हैं जिससे स्वास्थ्य पर उत्तम प्रभाव पड़ता है।

देशाटन करने से मनुष्य अनेक जातियों और संस्कृतियों के सम्पर्क में आता है। उनकी रहन-सहन और संस्कृति से परिचय प्राप्त करता है देश विशेष की कला-कौशल सामने आती है। विभिन्न अनुभव प्राप्त

होते हैं, जिनसे स्वदेश का भण्डार भर जाता है। विविध देशों की सामाजिक, राजनैतिक और औद्योगिक विशेषतायें अवलोकन कर व्यक्ति अपने देश की स्थिति से उनका समन्वय करता है, उनमें से अच्छे और नये प्रयोग ग्रहण कर स्वदेश में उनको प्रचार देता है।

देश और जातियों को उत्थान देने के लिये देशाटन बड़ा आवश्यक साधन है। हम दूसरे देशों की समाज-व्यवस्था को अवलोकन कर उसका अनुकरण कर सकते हैं। दूसरे देशों की राज व्यवस्था को देख अपने यहां भी उसका रिवाज दे सकते हैं। दूसरे देशों की कला-कौशल को स्वदेश में प्रचार सकते हैं। अन्ध परम्परा और रूढ़िवाद का अन्त कर सकते हैं। देशाटन-प्रिय जातियां ही संसार में सिरमौर होकर रहती हैं। यूरोपीय जातियां देशाटन-प्रिय हैं, इसी कारण संसार का व्यापार उनके हाथ में है। कोई राष्ट्र और जाति जब तक उन्नत नहीं हो सकती, तब तक उसमें देशाटन की प्रवृत्ति जाग्रत नहीं होती।

एक युग था — जब भारतवासियों ने अपने उपनिवेश स्थापित किये थे, समय बदला और समुद्र-यात्रा का निषेध कर दिया गया। इस धार्मिक बाधा ने भारतीय देशाटन प्रवृत्ति को धक्का पहुँचाया। देश क्रमशः पतन की ओर चलने लगा। देशाटन के अभाव से देश में दरिद्रता फैली, कूप-मण्डूकता आई, दृष्टिकोण संकुचित हुए, देश में भीरुता ने जन्म लिया और देश दासता के रङ्ग में रँग गया।

हर्ष का विषय है कि अब परिस्थिति बदल गई है और धार्मिक बाधा अब बिलकुल नहीं रही। शिक्षित समाज में पर्यटन की मात्रा बढ़ रही है। वह दिन अब दूर नहीं कि हमारा देश भी ऐसा देशाटन प्रिय हो और संसार में अपने उपनिवेश स्थापित करे।

से बिगड़ जाती हैं ऐसी ही है जैसे कहना कि अमृत पीने से अमुक व्यक्ति अमर हो गया और अमुक व्यक्ति मर गया। जो शिक्षा पुरुषों की मानसिक शक्तियों को विकसित करती है और उसे जीवन-संग्राम का मुकाबिला करने की क्षमता प्रदान करती है वह स्त्रियों को पथ-भ्रष्ट कर देगी, यह बात हमारी समझ में नहीं आती। हम उनकी इस संकुचित मनोवृत्ति को कटुवाद ही कहेंगे। समाज को यदि सच्चे नागरिकों की आवश्यकता है, वह अपने राष्ट्र को समुन्नत और समृद्धशाली देखना चाहते हैं और गार्हस्थ्य जीवन को स्वर्गीय जीवन और शान्ति का केन्द्र बनाना चाहते हैं तो उन्हें स्त्री शिक्षा की ओर अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिये अन्यथा राष्ट्र को अवनति के गर्त से निकालना असम्भव हो जायगा। स्त्री शिक्षा कैसी हो, उसे रस्किन के शब्दों में हम आपके सामने रखते हैं:—

All such knowledge should be given her as may enable her to understand, and even to aid the work of men, and yet should be given, not as if it were or could be for her an object to know, but only to feel, and to judge

यह निर्विवाद सिद्ध है कि मानवी शक्तियों का विकास बिना शिक्षा के नहीं होता। मनुष्य अपने कर्तव्य और दायित्व को तब तक नहीं समझ सकता, जब तक उसे उचित मात्रा में शिक्षा नहीं दी जाती। स्त्री समाज भी अपने कर्तव्य और दायित्व को तब तक नहीं समझ सकती, जब तक उसकी समुचित शिक्षा न हो।

स्त्री समाज का भय, लज्जा और ग्लानि शिक्षा के बिना दूर नहीं हो

सकती। रूढ़िवाद, कूप-मण्डूकता और, अन्ध विश्वास स्त्री-समाज का पीछा तब तक नहीं छोड़ सकते तब तक कि उन्हें ज्ञान के प्रकाश से पूरा साक्षात्कार नहीं किया जाय। मानवी-जीवन में स्त्री का स्थान बड़े महत्व का है। मनुष्य की प्रत्येक परिस्थिति का साथी स्त्री है। मनुष्य को नित्य ही ऐसी परिस्थितियों में होकर गुजरना पड़ता है जिनमें उसकी अपनी बुद्धि काम नहीं करती और वह उचित परामर्श की खोज में व्याकुल हो जाता है। ऐसी घोर परिस्थिति में शिक्षित स्त्री ही उचित परामर्श दे सकती है। अशिक्षित स्त्री कदापि इस दशा में सहायता नहीं कर सकती। समाज में सहृदयता, पवित्रता, मृदुभाषण, उत्तम शिष्टाचार उत्तम शिक्षा द्वारा ही आ सकते हैं। इन गुणों का विकास समाज में माता द्वारा ही होता है। माता में यह गुण तब तक नहीं आ सकते तब तक उसे समुचित शिक्षा न मिले। अतः स्त्री शिक्षा की अनुपयोगिता बतलाना शिक्षा की उपेक्षा करना है। शिक्षा का दुरुपयोग करना शिक्षा का नहीं अपितु समाज का दोष है।

हमने लिखा है कि मृदुता, सौजन्य, पवित्रता, मृदु भाषण, नम्रता, सदाचार और शिष्टाचार का पाठ बालक माता की पाठशाला में सीखता है। अभिमन्यु, शिवाजी, नेपोलियन आदि आदर्श और तेजस्वी पुरुष योग्य माताओं की ही देख-रेख में विकसित हुए थे। समस्त उत्तम गुणों का विकास बालक में माता ही की पाठशाला में आता है। माता समाज का एक ऐसा सांचा है जो समाज को चाहे जैसे सांचे में ढाल सकती है। माता राष्ट्र का समुत्थान करने के लिये पुरुषों की अपेक्षा अधिक गुणवान सिद्ध हुई है।

शिक्षा स्त्रियों की मानसिक शक्तियों को विकसित करती है। उनके सङ्कीर्ण और सकुचित भावों विशालता और उदारता के भाव जाग्रत करती है। शिक्षा से उनमें स्वावलम्बन और आत्म-विश्वास बढ़ता है। अपने जीवन को क्रियाशील बनाने की क्षमता उनमें आती है।

घर गृहस्थी के कामों में मूर्ख स्त्रियों क अपेक्षा शिक्षित स्त्रियों में अधिक दक्षता देखने में आती है। भोजन बनाना, घर की पवित्रता, बच्चों की देख रेख, नौकरों का प्रबन्ध जैसा शिक्षित स्त्री कर सकती है, वैसा अशिक्षित कदापि नहीं कर सकती।

प्राय देखने में आता है कि जब स्त्रियों के सिर पर समस्त परिवार का बोझ आता है, घर और बाहर के समस्त कामों का दायित्व सहन करना पड़ता है, तब हमने अशिक्षित स्त्रियों को कैसा घबराते और धैर्य खोते देखा है, जिसका वर्णन करना भी कठिन है। किन्तु शिक्षा ने स्त्रियों की इस कमी को भी पूरा कर दिया है। कितनी ही स्त्रियां ऐसी हैं जो अपने कारोबार, जमींदारी और लेन देन के काम को स्वयं देखता-भालती हैं। कचहरी में जाकर स्वयं ही अपने मुकद्दमे की पैरवी करती हैं। यद्यपि अभी उनको प्रत्येक काम करने में झिझक सी अनुभव होती है, किन्तु भविष्य में यह कठिनाई भी दूर हो सकती है।

गाने-बजाने और नृत्य-कला में स्त्रियों का बड़ा हाथ है। चित्रकारी और ललित कलाओं में शिक्षित स्त्रियां ही अधिक सिद्धहस्त देखी जाती हैं। वैज्ञानिक सुविधाओं से शिक्षित स्त्रियां अधिक लाभ उठा सकती हैं। बालकों का पालन पोषण बड़ी सावधानी और सुचारुता से कर सकती

है। सुहृति चित्रकला और मधुर मारम से अपने पति को प्रसन्न कर सकती है।

वर्तमान समय में स्त्रियों की शिक्षा का जो प्रबन्ध है वह भारतवर्ष की भौगोलिक परिस्थिति के बिलकुल विपरीत है। वर्तमान शिक्षा लड़कियों को भी बाबूजी बनाती और घमण्डी बना रही है। लड़कों की भाँति फैशन का भूत लड़कियों पर भी सवार हो गया है। जिसका परिणाम अति भयंकर हो रहा है किन्तु भारतीय जनता अभी उसे उपेक्षा की दृष्टि से देख रही है। स्वामी दयानन्द की मान्यता जो भारत में गार्गी मैत्रेयी उत्पन्न करने की थी, वह आज पेरिस और लन्दन की संस्कृति के रंग में रंग दृष्टिगोचर हो रही है। आज उसकी सम्पूर्णरूप सेंट-पुष्पों, पाउडर और क्रीम-पाउडरों से भरी पड़ी है। स्वाभाविक सौन्दर्य के स्थान पर कृत्रिम सौन्दर्य स्थान पकड़ता जाता है भगवान कुशल ही करें।

सहशिक्षा का भूत भारतीय जनता के सिर पर आकाश तरह मंडरा रहा है। हम सहशिक्षा के विरोध में तो नहीं हैं किन्तु इस बात की अवस्था तक लड़के और लड़कियों के शिक्षा साथ-साथ हो, इससे अधिक अवस्था होने पर लड़के और लड़कियों के प्रबन्ध-प्रथक स्कूल होने चाहिये। ऐसा प्रबन्ध करने से राष्ट्र का अधिक व्यय न करना पड़ेगा। किन्तु बालक बालक और बालिकाओं का साथ साथ पढ़ना वासना के गहरे गड्ढ में डाले बिना नहीं रह सकता। हां, ज्ञान और चरित्र पर कड़ा नियन्त्रण रखने से कोई सुगम साधन निकल आवे किन्तु यह अभी सम्भव नहीं क्योंकि धार्मिक शिक्षा का अभी अभाव है। राष्ट्रीय गवर्नमेंट के बिना विदेशी गवर्नमेंट कोई राष्ट्रव्यापी नियम नहीं बना सकती।

भारतीय स्त्रियों में परिश्रम-प्रियता का गुण होता है, किन्तु वर्तमान शिक्षा के कारण महिला-समाज का यह गुण भी मिटता जाता है। परिश्रम प्रियता के स्थान पर आलस्य और विलास पैर फैलाता जाता है। हमारी शिक्षित बालिकाय घर के काम काजों से घबराती हैं और उन्हें घृणा की दृष्टि से देखती हैं। व्यावहारिक जीवन को यह कल्पनाओं में ही व्यतीत करने में अपना गौरव समझती हैं। इन दूषणों के देखने से यही सिद्ध होता है कि इनकी शिक्षा लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक कर रही है।

अब प्रश्न यह होता है कि शिक्षा कैसी होनी चाहिये ? इसका उत्तर हम यही देंगे कि लड़के और लड़कियों की शिक्षा एक दूसरे से भिन्न होनी चाहिये। लड़कियों की शिक्षा में अक्षर-ज्ञान की अपेक्षा व्यावहारिकता अधिक हो। घरेलू काम धन्धों की व्यावहारिक शिक्षा अधिक दी जाय। ललित कलाओं का ज्ञान भी कराया जाय। प्राचीन आदर्श, नागरिक कर्तव्य और अपनी संस्कृति की शिक्षा का अधिक ध्यान रक्खा जाय। स्त्रियों की शिक्षा भारतीय वातावरण और भौगोलिक स्थिति के अनुकूल होनी चाहिये। पश्चिमी सभ्यता हमारे लिये सुखद परिणाम नहीं ला सकती। हमारी शिक्षा का उद्देश्य कोरी मेम साहिबा बनाना नहीं होना चाहिये।

हमारे राष्ट्र निर्माण कार्य में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक कार्य कर सकती हैं। वह राष्ट्र के लिये योग्य नागरिक उत्पन्न कर सकती हैं। बच्चों के हृदय में राष्ट्रीयता की भावनायें और प्रेम भर सकती हैं, जो भावी भारत के लिये योग्य सैनिक हो सकते हैं।

स्त्री को हम तीन रूपों में पाते हैं। एक माता के रूप में, दूसरे पत्नी के रूप में तीसरे परामर्शदात्री के रूप में। सबसे पहले माता गुरु रूप में बच्चे के संस्कारों का परिमार्जन करती है। उसकी शिक्षा-दीक्षा की देख-रेख करती है। अतः स्त्रियों को बाल-मनोविज्ञान बाल लालन और घरेलू औषधि उपचार की शिक्षा देनी चाहिये। स्त्री मनुष्य की जीवन-संगिनी है। मनोहारी सखा है मित्र है और उचित परामर्शदात्री है। अतः ऐसे गुण वाले मित्र व सुन्दर उत्तम गुणों का होना अति आवश्यक है जो बिना शिक्षा के कभी आ ही नहीं सकता।

हमारे स्त्री-समाज में सब अपने सलोने पर्दा, सौंदर्य, अन्ध विश्वास भूत-प्रेत और आभूषण प्रियता आदि दुर्गुण आ गये हैं जो बिना शिक्षा के नहीं निकल सकते। अतः स्त्री शिक्षा देश के लिये बड़ी उपयोगी है। इसका जितना ही शीघ्र विकास हो उतना ही उत्तम है। भारत के भाग्य से स्त्री-शिक्षा की ओर बड़ी जन-रुचि हो रही है किन्तु उसमें विशुद्ध भारतीयता नहीं है। विशुद्ध भारतीय शिक्षा के बिना देश में मंगल आना सम्भव नहीं।

सफाई

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—स्वच्छता बाह्य शुद्धि की द्वितीय सोपान है। प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में सफाई है। पशु-पक्षी भी स्वच्छता पसन्द करते हैं। कुत्ता अपनी पूँछ फटकार कर बैठता है। अतः मानव-जीवन में स्वच्छता की बड़ी आवश्यकता है।

सफाई के दो प्रधान भेद—बाह्य सफाई जिसका तात्पर्य शरीर, वस्त्र, निवास स्थान, जलवायु और भोजन की स्वच्छता से है। आन्तरिक सफाई से तात्पर्य मन और हृदय की सफाई से है।

मानवी-जीवन का दारोमदार उसकी आन्तरिक स्वच्छता पर है। मनुष्य जितना ही आन्तरिक शुद्धि में बढ़ा चढ़ा है, उतना ही उसका मूल्य अधिक है। संसार उसी व्यक्ति की पूजा करता है, जिसका आचरण शुद्ध होता है। शुद्ध आचरण वाले व्यक्ति समाज में आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखे जाते हैं। समाज उनके आदर्श का अनुकरण करती है। समाज का मस्तक सदैव सदाचारी व्यक्ति के लिये नत रहता है। आज महात्मा गांधी आन्तरिक शुद्धि के कारण ही भारतवर्ष के हृदय-सम्राट बने हुए हैं।

बाह्य सफाई का भी प्रभाव मानव जीवन पर अधिक पड़ता है। बाहरी सफाई हमारे स्वास्थ्य को ऊँचा बनाती है। वह मनुष्य कभी निरोग नहीं रह सकता जो सदैव मैला कुचैला रहता है। मैली कुचैली और दुर्गन्धपूर्ण गलियों में रहने वाला व्यक्ति भी कभी स्वस्थ नहीं रह सकता। अतः स्वास्थ्य रक्षा के विचार से सफाई बड़ी उत्तम वस्तु है।

शारीरिक सफाई का भी जीवन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। अतः हमारे शरीर का प्रत्येक अवयव स्वच्छ रहना चाहिये। हमारे दाँत और नाखून गन्दे न हों। हमारी नाक और आँखें कीचड़ से भरी हुई न हों। हमारे ओढ़ने-बिछाने और पहिनने के कपड़े मैले-कुचैले न हों। हमारा घर कूड़े करकट और दुर्गन्धमय पदार्थों से भरा हुआ न हो। हमारे घरों में शुद्ध जल, शुद्ध वायु और शुद्ध भोजन की सुव्यवस्था हो।

सफाई रखने से हमें केवल आरोग्यता ही नहीं प्राप्त होती वरन् हमारे हृदय को शान्ति और आनन्द भी अनुभव होता है। गन्दी गन्दी गलियों में दुर्गन्धपूर्ण घरों पर मल-मूत्र से आच्छादित निवास स्थानों को देखकर सबको दुःख होता है और घृणा उत्पन्न होती है किन्तु इसके विपरीत स्वच्छ गलियों रास्तों और निवास स्थानों को अवलोकन कर हमारे हृदय में शान्ति का संचार होता है और हृदय में आनन्द उमंगित हो जाता है।

भारतीय संस्कृति में आन्तरिक सफाई पर बड़ा जोर रहा है। बाह्य स्वच्छता पर इसकी दृष्टि सदैव उदासीन रही है। इस बीसवीं शताब्दी के सफाई के युग में भी भारत के छोटे कस्बों और गांवों में सर्वत्र गन्दगी का पूर्ण साम्राज्य देखने में आता है। कहीं मल मूत्र पड़े हैं, कहीं कूड़े कर्कट के ढेर लगे हैं कहीं गन्दी नालियां बह रही हैं जिनकी कीचड़ सड़ रही है। भारत के नगरों में म्युनिसिपैलिटियों की सुव्यवस्था से बहुत कुछ सफाई हो गई है किन्तु अभी इसमें बहुत कुछ उन्नति की आवश्यकता है। पश्चिमी संस्कृति सफाई को अधिक पसन्द करती है इसी कारण पश्चिमी देशों के लोग पूर्वी लोगों की अपेक्षा अधिक दीर्घजीवी होते हैं।

स्वच्छता और शिक्षा का चोली-दामन का साथ है। जहां शिक्षा की अभिवृद्धि होती है वहां सफाई स्वमेव आने लगती है। शिक्षित व्यक्ति अशिक्षितों की अपेक्षा अधिक सफाई पसन्द करते हैं। वास्तविक सफाई स्वाध्याय और सत्संगति से प्राप्त होती है। हमारे नेताओं को चाहिये कि वे जनता में सफाई की भावना भरें। ऐसे प्रचार और आन्दोलन करें जिससे उनकी मनोवृत्ति बदले। ऐसी व्यवस्था होने पर ही भारत की गन्दगी दूर हो सकती है अन्यथा नहीं।

जीवन में अहिंसा का महत्व

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—अहिंसा की व्याख्या।

(२) अहिंसा से लाभ—अहिंसा मनुष्य जीवन को उच्चता प्रदान करती है, मनुष्य समाज का हित साधन करती है, मानव-जीवन को सुख शान्ति देती है, अहिंसा ही शान्ति ला सकती है, हिंसा नहीं। अहिंसा और सत्याग्रह संग्राम।

(३) अहिंसावादी महापुरुषों की जीवन गाथायें।

(४) उपसंहार—अहिंसा का महत्व।

संसार में सर्वत्र हिंसा का साम्राज्य है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के खून का प्यासा हो रहा है। साम्राज्य लोलुप जातियां अन्धाधुन्ध बमवर्षा करके जातियों और राष्ट्रों को मिटा रही हैं। स्वार्थ-परायण राष्ट्र अपनी स्वार्थ क्षुधा को मिटाने के लिये अनेक राष्ट्रों का रक्त शोषण कर रहे हैं। यूरोप के आज रोमाञ्चकारी दृश्य किसके हृदय को नहीं हिलाते? आज स्वार्थ-परायण जातियां स्वतन्त्रता के नाम पर कैसा नर संहारकारी युद्ध लड़ रही हैं? महाजन लोग अलग कर्जदारों की खाल खींच रहे हैं। पूँजीपति मज़दूरों का खून चूसने में मस्त हैं। मांसाहारी अपनी मांस-भक्षण की वासना की तृप्ति के लिये सहस्रों प्राणियों को मार-मार कर खा रहे हैं। जिधर देखिये उधर हिंसा ही का एक मात्र साम्राज्य दृष्टि-गोचर हो रहा है। नित्य नये विषैले और घातक यन्त्रों का आविष्कार हो रहा है। बड़ी-बड़ी ज़हरीली गैसें बनाई जा रही हैं। बड़े बड़े बमवर्षक

होना है। जब तक राष्ट्र और समाज अहिंसा को नहीं अपनाते, उन्हें तब तक संकटों में होकर गुजरना पड़ेगा।

अहिंसा वह अमोघ अस्त्र है, जिस पर संसार की कोई भी शक्ति अपना प्रभाव नहीं डाल सकती। संसार में नित्य व्यवहार में देखने में आता है कि घोर से घोर अत्याचारी का हाथ अहिंसावादी पर नहीं उठता।

आज वह समय आ रहा है कि जो जातियां और राष्ट्र अपने को अहिंसावादी बना लेंगे, वही संसार में जीवित रह सकेंगे। राष्ट्र शारीरिक बल और वैज्ञानिक बल पर अधिक काल तक जीवित न रह सकेंगे, यह आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं और देखेंगे। संसार में हिंसा का हिंसा से दमन करने वाली नीति का अब अन्त होने जा रहा है। आज हिंसा की नीति पर चलने वाली जातियां दम तोड़ रही हैं, उनकी मृत्यु निकट है। वह आज भी अहिंसा के अमोघ सिद्धान्त को अपनाकर करोड़ों मनुष्यों की प्राण-रक्षा कर सकती हैं।

नित्य व्यवहार में भी अहिंसा मनुष्य को उत्थान की ओर प्रवृत्त कराती है। भगवान के बनाये हुए जीवों पर दया करना ही वास्तव में ईश्वर भक्ति है। प्रत्येक प्राणी में उसी प्रभु की सत्ता है। अहिंसावादी के लिये दया से बढ़कर और कोई जप-तप नहीं है। उसे प्रत्येक पदार्थ में भगवान ही के दर्शन होते हैं।

'सियाराम-मय सब जग जानी। करौं प्रणाम जोर जुग पानी।'

अहिंसा प्राणी मात्र के साथ भलाई करना सिखलाती है। अहिंसा समाज में शान्ति स्थापित करने का साधन है। अहिंसा का जहां साम्राज्य होता है, वहां से द्वेष, ईर्ष्या और मारकाट स्वयं विदा हो जाते हैं। समाज

में प्रेम और सहानुभूति की भावनायें भर जाती हैं। जगत में 'बन्धु वात्सल्य' के भाव जाग उठते हैं। विषमता जो समाज का एक भयङ्कर रोग है, सदैव को मिट जाता है। अहिंसावादी व्यक्ति के आगे आततायी की कुछ नहीं चलती। वह समाज धन्य है जिसमें अहिंसा को उच्च स्थान दिया जाता है।

अहिंसा व्रत का पालन करने से जीवन में सुख और शान्ति का अभ्युदय होता है। अहिंसावादी व्यक्ति का कोई शत्रु नहीं होता। अहिंसावादी व्यक्ति किसी से लड़ता झगड़ता नहीं। उसे कोई कष्ट भी देता है तो उसे वह शान्तिपूर्वक सहन कर लेता है। प्रतिहिंसा और बदले का भाव स्वप्न में भी उसके हृदय में नहीं आता।

संसार में अहिंसावाद के प्रचारक बड़े २ महापुरुष हुए हैं जिन्होंने अत्याचार के सामने अहिंसा को खड़ा किया है। अहिंसा के सबसे बड़े उपासक भगवान बुद्धदेव हुए हैं जिन्होंने भारतीय समाज में से हिंसा का उन्मूलन किया। दूसरे भगवान महावीर स्वामी अहिंसा के बड़े प्रेमी थे। उन्होंने मनुष्य मात्र और प्राणी मात्र की हत्या से बढ़कर कीटाणु मात्र की हिंसा से भी अपने अनुयायियों को रोका है। भगवान ईसा को कौन नहीं जानता जो अहिंसा के साक्षात् अवतार थे। वह अहिंसा के गौरव पर बोलते हुए बतलाते हैं—"यदि कोई तुम्हारे बायें गाल पर थप्पड़ मारे तो तुम उसके सामने अपने दायें गाल को भी करदो कि वह उस पर थप्पड़ मारे" इससे बढ़कर अहिंसा और सहनशक्ति का क्या आदर्श हो सकता है। आज संसार में महात्मा गांधी से बढ़कर अहिंसा का कोई पुजारी नहीं। वह संसार में अहिंसा के अमोघ अस्त्र को सबके सामने रख

रहे हैं। उनके इस अहिंसा के हथियार को देखकर संसार की विकराल शक्तियां आश्चर्यान्वित हो रही हैं। उन्होंने अपने अहिंसा के हथियार का जहां भी प्रयोग किया, वहीं वह सफलतायें लाया है। महात्मा जी कहते हैं कि विश्व-शान्ति अहिंसा के बल पर ही आ सकती है। आज उन्होंने सत्याग्रह संग्राम छेड़ दिया है, देखें यह क्या फल लाता है! यह सब भविष्य के गर्भ में है, किन्तु हमें पूर्ण विश्वास है कि जहां सत्य, अहिंसा और ईश्वर-विश्वास है वहां विजय अवश्य होती है।

अहिंसा का महत्त्व महान है। अहिंसावादी व्यक्ति अपना और समाज दोनों का कल्याण कर सकता है। 'विश्व बन्धुत्व' की भावनायें अहिंसा के सिद्धान्त पर ही संसार में फैल सकती हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि समाज में अहिंसा का वातावरण उत्पन्न करें, तब ही हमारा और समाज का कल्याण हो सकता है।

समय का सदुपयोग

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—समय का महत्त्व।

(२) समय का सदुपयोग।

(३) चेतावनियां:—

आलस्य से दूर रहो, समय को व्यर्थ मत बिताओ।

(४) समय की पाबन्दी करना ही उसका सदुपयोग है।

(५) समय के सदुपयोग से लाभ:—

गौरव प्राप्त होता है, चित्त को शान्ति मिलती है

क्षणिक आराम होता है और लोक में यश और आनन्द प्राप्त होता है।

(६) मनोरञ्जन और समय।

(७) उपसंहार—हमारा कर्तव्य।

काल्ह करै सो आज कर आज करै सो अब।
पल में परलै होयगी बहुरि करेगा कब॥ "कबीर"

जो देश और समाज समय का आदर करते हैं वही देश और समाज उन्नति के शिखर पर विराजते हैं। जो राष्ट्र समय को व्यर्थ आलस्य और आनन्द-प्रमोद में व्यतीत करते हैं वह संसार से अपना अस्तित्व मिटा लेते हैं। वही व्यक्ति संसार में अपना गौरव स्थापित कर सकी है, जिन्होंने समय के मूल्य को समझा है। पश्चिमी देशों ने समय के महत्व को समझा है। उन लोगों के पास काम है किन्तु समय नहीं है। हमारे पास समय है मगर काम नहीं। हमारा समय व्यर्थ ताश में अथवा आमोद-प्रमोद में व्यतीत होता है। यही कारण है कि हमारा पतन होता चला जा रहा है। हमें शारीरिक कामों से स्वभावतः घृणा है किन्तु उन्नतिशाली राष्ट्र शारीरिक कामों को करने में अपना गौरव समझते हैं।

उन्नति-प्रिय व्यक्ति समय का मान करती है और अपने समय का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोती। समय का सदुपयोग करने वाली व्यक्ति समुन्नत, सभ्य और सुखी होती है, इसके विपरीत आचरण करने वाली व्यक्ति दुःखी, असभ्य और अपमानित होती है।

समय का बड़ा महत्त्व है। समय का सदुपयोग भिखारी को राजा बना देता है और उसी समय का दुरुपयोग राजा को भिखारी बना देता है।

'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं,' संसार अपने स्थान पर ही खड़ा रहता है, परन्तु समय का पक्षी अपने विशाल पैरों को उठाकर उड़ जाता है।

भारतीय मनोवृत्ति है कि वे अपने समय को व्यर्थ की बातों में व्यतीत किया करते हैं। आज के काम को कल पर उठाकर रखना उनका साधारण काम है। हम पैतृक कामों को छोड़ना पसन्द नहीं करते। दूसरे देशों के मनुष्य अनेक कामों को बड़े प्रेम से सीखते हैं। ललित कलाओं के साथ विज्ञान और चित्रकारी सीखते हैं। शारीरिक बल सञ्चय के लिये विविध प्रकार के खेल भी खेलते हैं। हमें भी उन देशों के निवासियों की नक़ल करनी चाहिये। यदि हम समय का एक मिनट भी न खोवें तो हम संसार का बड़े से बड़ा काम कर सकते हैं। समय बड़ा मूल्यवान पदार्थ है, जो निकल जाता है वह फिर कभी हाथ नहीं आता। इसलिये हमें उचित है कि समय का एक क्षण भी व्यर्थ न जाने दें और सदैव उसका सद्व्यवहार करें। हमें सदैव लोकोपकारी कामों में अपना समय व्यतीत करना चाहिये, जिससे देश और समाज का भला हो।

समय को ठीक ठीक उपयोग करने के लिये आवश्यक है कि हम अपने समय को ठीक-ठीक बांट लें, जिससे शक्ति का ह्रास न हो और वह समय बच जाय जो नित्य कार्य क्रम बनाने में व्यय हो जाता है।

मन को शान्त करने और हृदय को उत्साह देने के लिये हमें थोड़ा बहुत समय भगवत-भजन के लिये देना चाहिये।

मानव-जीवन में आलस्य बड़ा भयङ्कर रोग है। हमें चाहिये कि इस रोग को अपने पास तक न आने दें। मोर्चा लग जाने से जैसे लोहा किसी काम का नहीं रहता, वैसे ही आलस्य मनुष्य-जीवन को किसी काम का

नहीं पनपने देता। आलस्य मनुष्य के स्वास्थ्य को तो बर्बाद करता ही है साथ ही बुद्धि को भी कुण्ठित कर देता है। यदि तुम काम करते-करते थक जाओ तो आलसी बनकर पड़ न जाओ वरन् बाहर निकल जाओ और घूम आओ। जो कुछ काम कर रहे थे उसी पर मनन करो। यदि साथ में कोई साथी मिल जाय तो उसी पर बातचीत करो। यदि यह भी न कर सको तो घर के काम-काज में लग जाओ किन्तु आलस्य को किसी भी परिस्थिति में आदर न दो। यदि तुमने तनिक भी उसे अवसर दिया, तब वह तुम्हें पूरा आलसी बनाकर दम लेगा। आलस्य हमारे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक पतन का मूल कारण है। समय के सदुपयोग में आलस्य ही सबसे बड़ी बाधा है।

जो काम तुम्हें करने हैं उन्हें निर्धारित समय पर ही समाप्त करो। उनमें गड़बड़ या लापरवाही अच्छी नहीं। किसी काम को कल पर उठा न रक्खो। जल्दी या हड़बड़ी में प्रायः काम बिगड़ जाते हैं। अतः अपने निश्चित कार्य को नियत समय पर ही समाप्त करो और कोई काम भविष्य में करने को न छोड़ो। बातचीत करना आमोद-प्रमोद का साधन है किन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि गपशप में बहुत सा समय बिताना समय का दुरुपयोग करना ही है।

मिलने जुलने वाले लोग प्रायः आते-जाते रहते हैं। मिलने-जुलने वालों से बातचीत में बड़ा समय व्यतीत होता है। अतः हमें चाहिये कि हम मिलने-जुलने वालों का समय निश्चित करें। यदि हम ऐसा न करेंगे तो हमें काम करने को समय ही न मिलेगा। ऐसी दशा में मनोरंजन तो सम्भव ही नहीं है। उनसे व्यवहार निष्कपट रक्खो। जो कुछ कहना हो

उसे स्पष्ट कहदो, लहतलाली में मत रक्खो। बातचीत में नपे तुले वाक्य बोलो। बातचीत में निन्दावाद से परहेज़ करो। पीठ पंछे किसी की आलोचना करना उत्तम नहीं है। आलोचना ही करनी है तो विज्ञान पर करो। महापुरुषों के जीवन पर करो, जिससे श्रोता और वक्ता दोनों का लाभ हो। बातचीत सदैव श्रोता की अभिरुचि देखकर ही करनी चाहिये। अप्रासाङ्गिक वार्तों में व्यर्थ का समय बर्बाद होता है।

लोग प्राय गन्दे उपन्यास पढ़ने में समय व्यतीत किया करते हैं। हमें पुस्तकें वही पढ़नी चाहियें, जो हमारे चरित्र को पवित्र बनायें और हमें सन्मार्ग पर ले जायें। जिन पुस्तकों के पढ़ने से हमें कोई सुन्दर उपदेश न मिलता हो, उन्हें जलाकर फेंक देना चाहिये। पुस्तकों से जो कुछ उत्तम उपदेश हमें मिलें, उन पर हमें फौरन आचरण आरम्भ कर देना चाहिये। ऐसा करने से पुस्तक पढ़ने का वास्तविक लाभ होगा और यही समय का सदुपयोग ही कहलायेगा।

जिस प्रकार शारीरिक उन्नति देने के लिये व्यायाम आवश्यक है, उसी प्रकार मन को स्फूर्ति और शक्ति प्रदान करने के लिये मनोरञ्जन की आवश्यकता है। सिनेमा, नाटक, खेल-कूद, सङ्गीत, नृत्य, काव्य, पाठ आदि मनोरञ्जनों के साधनों का थोड़ा बहुत प्रयोग जीवन की गतिविधि को स्वस्थ रखता है। इससे हमारे जीवन में विकास आता है।

जो काम आरम्भ करो, उसे पूरा ही करके दम लो। बीच में काम को आरम्भ करके छोड़ देने वाले मनुष्यों का संसार में सम्मान नहीं होता। आज एक काम आरम्भ किया कल उस काम को छोड़ दिया, ऐसा व्यवहार अच्छा नहीं है। इसमें व्यर्थ समय नष्ट होता है। काम

आरम्भ करने से पहले उसके लाभ हानि पर विचार करलो, तब काम आरम्भ करो। दिन में जो काम करने हों उनका कार्यक्रम पहले ही बना लो। जो काम करते-करते रह जायें उन्हें दूसरे दिन पूरा करलो। ऐसा करने से हमें नियत समय पर नियत काम करने की आदत बन जायगी और हमारा मन नियमित हो जायगा।

नियत समय पर काम करने से काम के प्रति रमणीयता आयेगी। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम काम के लिये समय और समय के लिये काम निर्धारित करलें यही समय का सदुपयोग है। समय का सदुपयोग सुख शान्ति और ऐश्वर्य लाता है।

निष्कर्ष यह है कि समय के सदुपयोग से संसार में गौरव मिलता है। चित्त को सुख और शान्ति मिलती है। शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उत्थान होता है। समाज का कल्याण होता है।

होली

विचार-तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—त्योहारों का महत्व।

(२) बसन्त ऋतु के त्योहार और होली।

(३) होली क्यों मनाते हैं?

नव-धान्यागमन के हर्ष में ऋतु परिवर्तन के कारण और नवीन अन्न द्वारा अग्नि-पूजा के कारण।

(४) होली के सम्बन्ध में प्रचलित दन्त-कथायें प्रहलाद भक्त की कथा और कृष्णावतार में फाग और रास का स्थान।

(५) होली के सम्बन्धित विविध वर्णन —

(६) होली पूजा, परस्पर भेंट और कुछ विशेष बातें।

(७) होली उत्सव के लाभ-हानि।

(८) होली उत्सव मनाने ... आवश्यक सुधार।

प्रत्येक समाज में त्यौहारों का विधान है। प्रत्येक समाज अपने-अपने सिद्धान्त के अनुसार त्यौहारों को मनाता है। त्योहार जाति के गौरव को प्रकट करते हैं। त्यौहार समाज में शक्ति, सङ्गठन, प्रेम और सजीवता उत्पन्न करते हैं। समाज में कुछ त्यौहार तो ऐतिहासिक होते हैं, जिनमें परम्परागत इतिहास का सम्बन्ध होता है। कुछ त्यौहार महापुरुषों के जन्म दिवस की याद में मनाये जाते हैं, कुछ त्यौहार ऋतु परिवर्तन और नवीन अन्न के आगमन की खुशी में सम्पन्न होते हैं। हमारा होली का त्यौहार पिछली प्रकार के त्यौहारों की क़िस्म में से है। यह त्यौहार वसन्त ऋतु के त्यौहारों में सर्वोत्तम स्थान रखता है। यह फागुन शुक्ला पूर्णिमा के दिन सम्पन्न होता है।

होली हिन्दुओं का सबसे महत्वपूर्ण त्यौहार है। इस त्यौहार में सभी वर्णों के लोग भाग लेते हैं। किसी विशेष वर्ण की पाबन्दी नहीं है। होली में रसिकता की मात्रा सब त्यौहारों से बढ़कर होती है, इसी कारण यह त्यौहार अधिक लोकप्रिय है।

होली का लोकप्रिय त्यौहार भारतवर्ष में कब से मनता आया है, इस बात को बताना कठिन है। यदि इसका सम्बन्ध आदि सृष्टि से हो तो कोई आश्चर्य नहीं है। सृष्टि का प्रारम्भ भी लोग वसन्त काल ही से मानते हैं। बस हम होली के सम्बन्ध में इतना ही कहेंगे कि यह त्यौहार बहुत प्राचीन काल से इसी तरह सम्पन्न होता चला आया है, जैसा कि -

यह वर्तमान काल में सम्पन्न होता है। यह त्यौहार वसन्त के आगमन पर मनाया जाता है। नये पके हुए अन्न की बालों द्वारा इसका पूजन होता है। अन्न के पकने पर जनता प्रसन्न होकर अपने देवताओं को प्रसन्न करती नवीन अन्न की बलि देते हैं। हर्षित होकर नाचते, कूदते और आनन्द मनाते हैं।

प्रत्येक त्यौहार का जन्म किसी न किसी आधार पर हुआ है। होली के सम्बन्ध में कई तरह कथा कही जाती है। नृसिंह अवतार की कथा का सम्बन्ध होली से बताया जाता है और फिर कृष्णोपासना के माध्यम से इसका सम्बन्ध कृष्णावतार से कर दिया गया है। इस कृष्णावतार काल में रस-सिक्तता की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है।

सतयुग में हिरण्यकश्यप नामक एक महा बलशाली और नास्तिक राजा था वह अपने को ईश्वर बतलाता था। हिरण्यकश्यप के एक लड़का था जिसका नाम प्रह्लाद था। प्रह्लाद बड़ा ही ईश्वर-भक्त था। उसने अपने बाप को ईश्वर मानने से इन्कार कर दिया पिता उसके इस कृत्य से बड़ा अप्रसन्न हुआ और उसे भांति-भांति की पीड़ायें देने लगा। एक दिन हिरण्यकश्यप ने अपनी बहिन होलिका को बुलाया और उसे आज्ञा दी कि वह प्रह्लाद को लेकर अग्नि में बैठे क्योंकि होलिका को वरदान था कि वह अग्नि में नहीं जल सकती थी। प्रचण्ड अग्नि का आयोजन हुआ। होलिका उस अग्नि में प्रह्लाद को लेकर बैठी किन्तु वह अग्नि में भस्म हो गई और प्रह्लाद का बाल भी बांका नहीं हुआ। अन्त में सत्य की विजय हुई। कुछ धारणायें इसे प्रचण्ड अग्नि परीक्षा की यादगार में यह उत्सव मनाने की कहाई जाती है।

कृष्ण और गोपियों का सम्बन्ध प्रेम की अलौकिकता का उदाहरण है। प्रेमी और प्रेमिकायें वसन्त की चुहलबाज़ी में भाग लेते हैं। कृष्ण गोपियों से होली खेलते हैं। ब्रज की गलियां अबीर और गुलाल से भर जाती हैं। शृङ्गार के अनुपम चित्र हमारे सामने आते हैं। कृष्णावतार में होली का सुन्दर रूप देखने का अवसर मिलता है. किन्तु होली का वर्तमान रूप रसिकता की ओर अधिक झुका हुआ है। इसी कारण उसमें अनेक दोष दिखलाई पड़ते हैं।

होली आई, होली आई की तरंगें लोगों के हृदय में उछालें मारने लगती हैं। मनुष्य प्रकृति के रङ्ग में रँगकर आनन्द से आनन्दित होकर प्रेम और वासना के प्रवाह में अपने को छोड़ देता है। बसन्ती वस्त्रों से पुरुष और स्त्रियां सज जाती हैं। पुरुष गुलाल और रङ्ग की वर्षा करते फिरते हैं। बच्चे लोग होली के ईंधन एकत्र करने में जुट जाते हैं। यहाँ से लकड़ी लाये, वहां से उपले लाये, इस बात की प्रतियोगिता करते हैं कि देखे किसकी होली सबसे ऊँची जलती है। रात को होली जलती है। लोग होली की परिक्रमा देते हैं और नये जौ की बालें भूनते हैं। पण्डित भी हैं, चमार भी हैं, ढोलक बज रही है। "प्रह्लाद भक्त भयो गाढ़ो, वाय धूप लगे ना जाड़ो" की तान छेड़ी हुई है। किसी ने ठर्रा पी रखी है, किसी ने ताड़ी और कोई भांग के नशे में चूर है। सबके सिर नशे से झूम रहे हैं। काला पीला मुँह बनाये लोग होली पूज रहे हैं।

आज धुलेंडी का दिन है, एक अलौकिक आनन्द है, उल्लास है और एक अनुपम हर्ष है। गली-गली में सड़क और चौराहों पर बालक, वृद्ध और तरुण टोली की टोली घूम रहे हैं। कोई गाता है, कोई बजाता है

और कोई नाच रहा है। किसी का चेहरा लाल है किसी का काला, किसी का आसमानी। जिसे देखिये एक विचित्र रूप बना हुआ है। सभी के सभी मस्ती में झूम रहे हैं। छुआछूत कुछ नहीं सब भाई भाई की भांति हिले मिले खेलते कूदते फिरते हैं। यह दिनचर्या दोपहर के ११ बजे तक रहती है। अब इसका रूप बदला। रंग और गुलाल की वर्षा होने लगी पिचकारियां चल रही हैं रंग से कपड़े भीग गये हैं सबके शरीर तरबतर हो रहे हैं सबके चेहरों पर हँसी और मुसकराहट छूट रही है। गलियों में, बाजारों में दरवाजों पर ढोल के ढोल बालक, वृद्ध सभी पुरुष जमा हैं। लड़कियां छिप रही हैं, कभी झेंप रहा है राग अलापे जा रहे हैं। उधर रंग से सराबोर हो रही है। जरा देखो यहाँ अबीर और गुलाल की वर्षा हो रही है। इसने उसका मुँह लाल किया उसने इस पर रंग डाला। जब तक जो आपस में शत्रु थे वह आज गले मिल रहे हैं। होली ने सबको गले मिला दिया। भारतवासियों की इस विचित्र मानसी दशा को देखकर भले ही कोई पागल क्यों न समझे किन्तु विधाता की निराली कृपा का यह अवलोकन करें कि भारतवर्ष को विधाता ने दुनिया से निराला बनाया है। जब प्रकृति के उन्माद से उन्मत्त होना स्वाभाविक है। जब भारतवर्ष के जलवायु में प्रकृति अपने सौन्दर्य से मर्यादा उल्लंघन कर जाती है तब प्रकृति के पुजारी मनुष्य की भावनायें इस प्रकार आन्दोलित हों इसमें आश्चर्य की बात नहीं है।

दोपहर के १ बजे तक यह रंगपाशी और गुलाल अबीर का दृश्य समाप्त हो जाता है। शाम को लोग स्नान करते हैं और नये कपड़े पहन कर अपने इष्ट-मित्रों से मिलने जाते हैं। एक दूसरे से कुशल पूछते हैं।

पान फूल से सब एक दूसरे का सम्मान करते हैं। लोगों की गाने बजाने की चौपई निकलती हैं। धोबी, कुम्हार, चमार, खटीक और कोली अपनी-अपनी मण्डलियां सजा बनाकर निकलते हैं। कहीं गाना, कहीं बजाना और कहीं नाचना जम जाता है। कहीं रास-मण्डली का रास, कहीं नाटक और नौटङ्की की मण्डलियाँ रात भर खेल करती हैं। कहीं महतरानियाँ अपने मधुर गाने से जनता को रिझाती हैं। कहीं बेड़नियों का नाच हो रहा है, जिनके पीछे रसिक लोग "हो, हो, हो" की आवाजें कस रहे हैं। कहीं हिजड़े के नाच पर लोग मस्त हो रहे हैं। कहीं वेश्याओं का नाच हो रहा है और कहीं शराब के प्याले महफ़िल की शोभा बढ़ा रहे हैं।

त्यौहारों की प्रत्येक जाति को आवश्यकता होती है। त्यौहारों की अपनी उपयोगिता है, अपना महत्व है। त्यौहारों से समाज में सरसता और मधुरता आती है। लोगों में परस्पर स्नेह बढ़ता है। वे आपस में मिलते-जुलते हैं, जिससे जनता को परस्पर निकट लाने की शक्ति आती है। साथ ही लोग अपने पुराने द्वेषों को भूलकर फिर नये सिरे से सम्बन्ध स्थापित करते हैं। यदि होली के त्यौहार में पर्याप्त संशोधन और सुधार कर दिये जायें तो निस्सन्देह भारतीय जनता को निकट सम्पर्क में लाने और उनको प्रेम सूत्र में बांधने में इससे बढ़कर कोई त्यौहार नहीं हो सकता। अभी तक होली का रूप बाहरी आडम्बरों और झूठे आचारों से बिगड़ा हुआ है।

रङ्ग खेलो, गुलाल और अबीर की वर्षा करो। गाओ-बजाओ, मगर गालियों पर मत उतर आओ। खेलो कूदो, मगर जुआ मत खेलो। खाओ पीओ, मगर शराब और भाग पीकर नालियों में मत लेटो।

निस्सन्देह त्योहारों को सुन्दर रूप देना ही सच्ची राष्ट्र-सेवा है। हमें यूरोप के आदेश की भाँति इस अवसर के लिये कोई वस्तु तैयार करनी चाहिये, जो हमें प्रेम, सहानुभूति और सहयोग के सूत्र में बाँधकर राष्ट्र को उपयोगी सिद्ध हो।

होली की कमियों को मिटाया जाय। पैशाच और बीभत्स भावों में भर २ कर गाना गाना दूषित कार्य है। गाली-गलौज करना नीचता है। इन त्रुटियों का निराकरण होना आवश्यक है। हमें चाहिये कि इनके दोषों को दूर करें, तब ही हमारा कल्याण होगा।

चित्रपट या सिनेमा

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—वैज्ञानिक विकास की प्रगति।

(२) सिनेमाओं का संक्षिप्त इतिहास।

(३) सिनेमा के लाभ—

मनोरंजन होता है, शिक्षा मिलती है, प्रचार और विज्ञापन में सहायता मिलती है।

(४) चित्रपटों से हानियाँ—

आँखों की ज्योति कम होती है, गन्दे और अश्लील चित्रों का बुरा प्रभाव पड़ता है, सिनेमा के दुर्व्यसन से धन और समय का अपव्यय होता है।

(५) फिल्म और उनका व्यवसाय।

(६) उपसंहार—चित्रपटों का भविष्य।

बीसवीं शताब्दि विज्ञान की उन्नति का स्वर्णकाल है। विज्ञान की उन्नति ने संसार को आश्चर्यान्वित कर रक्खा है। मनुष्य के हृदय में अन्वेषण की अभिलाषा अनादि काल से चली आई है, किन्तु इस युग में अन्वेषण की पराकाष्ठा हो गई है। एक से एक उत्तम और उपयोगी आविष्कार संसार के सामने आ रहे हैं। उन उपयोगी आविष्कारों में चित्रपट भी एक आविष्कार है। इस नये आविष्कार ने मानव जीवन में बड़ी उथल-पुथल मचादी है और अनेक सांस्कृतिक प्रभाव सिनेमा ने जनता के हृदय में अङ्कित कर दिये हैं। संसार में जितने मनोरञ्जन के साधन हैं, उनमें सिनेमाओं का स्थान सबसे ऊँचा है। सिनेमा का मनोरञ्जन सबसे सरस, सुलभ और सस्ता है। इसी कारण से सिनेमा की सर्वप्रियता बढ़ती चली जा रही है।

सिनेमा के सर्व प्रथम विचार सत्रहवीं शताब्दि में किर्चर महोदय के हृदय में उत्पन्न हुए, किन्तु किर्चर महोदय के छाया चित्रों में चलने-फिरने और भाव-व्यञ्जन की शक्ति नहीं थी। सन् १८६० ई० में अमरीका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक एडीसन ने इन छाया-चित्रों में हाव भाव प्रकट करने की शक्ति प्रदान की, जैसा कि वर्तमान काल में हम छाया चित्रों में अवलोकन करते हैं। इसके कुछ दिनों पश्चात न्यूयार्क के प्रसिद्ध वैज्ञानिक फेसलर ने इस कला में पर्याप्त सुधार कर दिये हैं। संसार में सबसे प्रथम १८६६ ई० में लन्दन में सिनेमा दिखाया गया था, जिसका गौरव लुमैर महाशय को प्राप्त हुआ था। भारतवर्ष में इसका प्रवेश करने वाले दादा फाल्के बतलाये जाते हैं, जिन्होंने १९१३ ई० में अपना प्रथम भारतीय फ़िल्म निर्माण किया था।

पिछले दिनों से सिनेमाओं में बड़ा विकास हुआ है। वे दिन पर दिन लोकप्रिय होते चले जा रहे हैं। अच्छे-अच्छे फिल्मों की आवश्यकता दिन ब्ढ़ती चली जा रही है। लाखों नर नारी इस व्यवसाय में लगे हुए हैं। करोड़ों रुपया इस व्यवसाय पर व्यय हो रहा है। सिनेमा के दोषों को समस्त दूर किये जाने के प्रयत्न हो रहे हैं। सन् १९२८ ई० से पहले चित्रपटों में केवल मूक चित्र ही दिखाये जाते थे किन्तु अब तो चित्रों में वाणी का भी प्रयोग हो गया है। यही नहीं अब तो रंगीन चित्र भी बनने लगे हैं। प्रकृति का रंगीन सौन्दर्य भी हमें अब प्रत्यक्ष होने लगा है।

वर्तमान फिल्म-निर्माण में कैमरे का स्थान सबसे महत्व का है। चल चित्रों के लेने का कैमरा एक विशेष ढंग का और बहुमूल्य होता है। इसके द्वारा लिये हुए चित्रों को उसी क्रम से सिनेमा के पर्दे पर घुमाने से उन चीज़ों की छाया उपस्थित हो जाती है जिनके चित्र लिये गये थे। यही चित्र जल्दी जल्दी बदलते हैं और आँखों को ऐसा प्रतीत होता है मानो वह स्थिर है। कार्य में किसी प्रकार का व्याघात उपस्थित नहीं होता।

चित्रपट दिखाने में विद्युत-शक्ति से काम लिया जाता है। फिल्म में विविध मानवी चेष्टा को प्रकट करने के लिये लाखों चित्र अपेक्षित होते हैं। एक साधारण सी घटना दिखाने के लिये सैकड़ों ही चित्र खींचने पड़ते हैं। इसी प्रकार किसी एक कथानक या आख्यायिका को चित्रपट पर दिखाने के लिये करोड़ों ही चित्र लेने पड़ते हैं। इन चित्रों का सामूहिक नाम ही फिल्म है। एक मामूली फिल्म तैयार करने में लाखों रुपया व्यय होता है।

आजकल सिनेमा के प्रधान अङ्ग सङ्गीत, नृत्य, कहानी और अभिनय हैं। सिनेमाओं का प्रदर्शन कैसा होता है, उसके लिये अधिक कहना व्यर्थ है। चित्रपटों को लगभग पाठक देख ही चुके हैं। चित्रपटों को दिखाने के लिये थियेटरनुमा लम्बे और बड़े-बड़े कमरे होते हैं। कमरे के सामने वाली दीवार पर एक सफेद पर्दा लगा रहता है। पीछे की दीवार में एक बड़ा छेद होता है, जिससे एक प्रकाशित लालटेन द्वारा पर्दे पर फ़िल्म के चित्रों का प्रतिबिम्ब फेंका जाता है। दर्शकों को चलते-फिरते और बात-चीत करते हुए प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ते हैं। सिनेमा के अभिनय और नाटक में केवल इतना ही अन्तर रहता है कि नाटक में एक्टर्स साक्षात अभिनय करते हैं, किन्तु सिनेमा में केवल चित्र ही रहते हैं।

अब फ़िल्मों में उत्तमोत्तम चित्र बनने लगे हैं। भारत की समस्त फ़िल्म कम्पनियां कला की ओर अधिक ध्यान दे रही हैं। अब शनै शनै चरित्र चित्रण की ओर भी ध्यान दिया जाता है। अनेक ऐतिहासिक और सामाजिक चित्रपट हमारे सामने आते हैं। छाया-चित्रों ने मनोरञ्जन-क्षेत्र में एक विचित्र उथल पुथल मचा रक्खी है। नाटक-गृहों में तो लगभग ताले ही पड़ गये हैं। जनता के हृदय पर सिनेमाओं का प्रभाव समझा जाता है। चित्र गृहों में आजकल एक से एक आकर्षक दृश्य दिखलाये जाते हैं, जो दर्शक के हृदय पर आचारिक प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहते। भारतीय रहन-सहन में सिनेमाओं के प्रभाव से बहुत कुछ अन्तर आ गया है।

सिनेमा के प्रचार ने समाज को बहुत लाभ पहुँचाये हैं। सिनेमा मनुष्य की मानसिक क्लान्ति को दूर करते हैं। मस्तिष्क में शांति और

स्फूर्ति भरते हैं। जितने मनोरञ्जन के साधन हैं उनमें सर्वोत्तम साधन सिनेमा ही है। जब मनुष्य का मस्तिष्क दिन भर के परिश्रम से थक जाता है और जी घबराने लगता है तब वह आमोद प्रमोद की वस्तु चाहता है जिससे उसे शान्ति मिले और उसकी मानसिक थकान दूर हो। सिनेमा उसके इस उद्देश्य को पूरा करते हैं।

सिनेमाओं से केवल मनोरञ्जन ही नहीं होता वरन् शिक्षा और सुधार के लिये यह बड़े महत्त्व की वस्तु है। हमारे देश में शिक्षा के लिये सिनेमाओं का प्रबन्ध किया जा रहा है। इतिहास भूगोल और विज्ञान की शिक्षा जैसी सिनेमा द्वारा दी जा सकती है, वैसी किसी अन्य साधन द्वारा नहीं दी जा सकती। भूगोल के अनेक प्राकृतिक दृश्य झरने और नदियों का प्रवाह जैसा सिनेमा में देखने में आता है, वैसा उस दृश्य का स्वयं जाकर देखने में भी नहीं आता। ऐतिहासिक घटनायें सिनेमा पर सच्ची भाँति दृष्टिगत कराई जा सकती हैं। विभिन्न स्थानों की रहन-सहन और परिस्थिति का ज्ञान सिनेमाओं द्वारा ही अच्छे प्रकार होता है। अध्यापक सिनेमाओं की अपेक्षा सूत्र से भूगोल का ज्ञान कराने में सर्वथा असमर्थ रहते हैं।

सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक सुधार भी सिनेमा बड़ी उत्तम प्रकार से करते हैं। कुछ चित्र अछूतोद्धार का कार्य करते हैं, कुछ बाल-वृद्ध विवाहों के विरोधात्मक खेल खेलते हैं। कुछ स्त्री-जाति के प्रति अत्याचारों का ही दिग्दर्शन कराते हैं। इस प्रकार के खेल समाज में घृणित कार्यों के प्रति घृणा उत्पन्न करते हैं।

विज्ञापन और सुधार के लिये भी सिनेमाओं का उपयोग बड़ा अच्छा

है। व्यापारी लोग सिनेमा के चित्रपटों पर अपनी वस्तुओं का विज्ञापन देते हैं, ताकि उनकी वस्तुओं की बिक्री बढ़े। प्रचार-कार्य में सिनेमा से उत्तम कोई अन्य साधन नहीं है। चित्रों द्वारा उन वस्तुओं के घृणित चित्र दिखलाये जावें, जिसे हम समाज से दूर करना चाहते हैं। दर्शक लोग घृणित कार्यों से घृणा करेंगे और उनका व्यवहार करना छोड़ देंगे।

सिनेमा जहां उपयोगी वस्तु है, तहां इससे हानि भी बहुत सम्भव हैं। जब से सिनेमाओं का प्रचार हुआ है, तब से दर्शकों की नेत्रों की ज्योति कम हो चली है। जो लोग नित्य सिनेमा देखने के अभ्यासी हैं, वह लगभग अपनी आखे दे बैठे हैं। सिनेमा के अश्लील और गन्दे चित्र भी मानवी जीवन पर बुरा प्रभाव डालते हैं। लालची फ़िल्म कम्पनियां प्रायः ऐसे अरुचिपूर्ण खेलों की फ़िल्म तैयार करती हैं। कुवासनापूर्ण खेल प्राय' नवयुवकों के जीवन को ले बैठते हैं। उनका आचरण किसी भी दशा में सुरक्षित नहीं रह सकता।

सिनेमाओं ने सबसे बड़ी हानि यह की है कि इनमें समय और धन दोनों का अपव्यय होता है। जिन लोगों को सिनेमा देखने की धत लग जाती है वह अपना धन और समय दोनों ही नष्ट करते हैं। यदि दुर्भाग्य से विद्यार्थी के पीछे यह सिनेमा का रोग लग जाता है, तब तो उसका जीवन ही चौपट हो जाता है।

अभी हमारे देश में सिनेमाओं का प्रचार कम है। दूसरे सभ्य राष्ट्रों में सिनेमा का प्रयोग भोजन की भाति किया जाता है। वहां सिनेमा-कम्पनियां चौबीस घण्टे खुली रहती हैं। पश्चिमीय देशों में ९० प्रतिशत जनता सिनेमा देखती है। भारत में अभी सिनेमाओं का प्रसार नगर,

स्कूल और कालेजों तक ही सीमित है। भारतवर्ष की ६२ प्रतिशत जनता सिनेमाओं का नाम तक नहीं जानती।

सिनेमाओं पर गवर्नमेंट का नियन्त्रण पर्याप्त मात्रा में होना चाहिये। गन्दे और अश्लील फिल्मों को कानूनन न खेलने दिया जाय। आजकल के गन्दे और प्रेम-वासना के उत्पादक वाले फिल्मों को खेलने की कदापि आज्ञा न देनी चाहिये। रजतपट पर केवल ऐतिहासिक, धार्मिक और सामाजिक ही चित्र आने चाहियें।

राष्ट्रीय विचार धाराओं से पूर्ण फिल्मों की आजकल आवश्यकता है। निश्चय यह है कि सिनेमा भवन व्यभिचार और कुवासनाओं के पाठ पढ़ाने वाले न हों। प्रेम के विकृत रूप को दिखाकर पैसे भरने वाला भी उतना ही दोषी है जितना वेश्या वृत्ति की वकालत पर उतारू व्यक्ति। ऐसे सिनेमा फिल्म दर्शकों को पतन की ओर ले जाते हैं। जनता को इनका विरोध करना चाहिये।

अन्त में हमें यही कहना है कि यदि गन्दे और कुरुचिपूर्ण फिल्मों का प्रदर्शन बन्द हो जाय तो सिनेमा भवनों का भविष्य बड़ा ही उत्तम है। आशा है कि सिनेमा मानव-समाज का कल्याण करेंगे।

अछूतोद्धार

विचार-तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—अछूतोद्धार की आवश्यकता।

(२) हिन्दू-समाज में अछूत कौन है?

(३) अछूतों के प्रति उच्च वर्णियों के अत्याचार।

(४) अछूतों के अत्याचार का दुष्परिणाम।

(५) अछूतोद्धार के साधन—

अछूतों के प्रति सहानुभूति और समानता का व्यवहार किया जाय, उनकी ग़रीबी दूर की जाय, उन्हें अधिकार दिलाये जायें, उनसे घृणा न की जाय, मन्दिर प्रवेश और शिक्षा आदि की सुविधा दिलाई जाय।

(६) अछूतोद्धार और महात्मा गांधी।

(७) उपसंहार—हरिजन सेवा-सङ्घ और उसका कार्य।

हरिजन सों चाहो भजन, तो हरि-भजन फ़जूल।
जन द्वारा ही करत हैं, राजन मिलन क़बूल॥

एक समय था, भारतवर्ष में सर्वत्र शान्ति थी। सब लोग प्रेम सूत्र में बँधे हुए थे। वर्णों और जातियों में अपार प्रेम था। घृणा और द्वेष के भाव देखने तक को नहीं थे। भारतवर्ष में जब से विदेशी जातियों का सम्मिश्रण हुआ और विदेशी संस्कृतियों का समावेश हुआ, तब से ही हमारी व्यवस्था गड़बड़ हो गई।

विदेशी संस्कृति के स्वार्थवाद ने भारतीय वर्ण व्यवस्था की अटूट प्रणाली को ढीला कर दिया, जिसके कारण आज हिन्दू-समाज की दुर्दशा है, वह छिन्न-भिन्न हो रहा है। अनेक बुराइयां हिन्दू समाज में घुस आई हैं, उनमें से अछूतों को निम्न स्थान देना भी एक भीषण बुराई है। जब तक हिन्दू-समाज अछूतों का उद्धार नहीं करता अथवा जब तक उन्हें नहीं अपनाता, तब तक उनकी उन्नति नहीं हो सकती।

'अछूत' शब्द में विशुद्ध भारतीयता है। मनुष्य जाति के प्रति इतनी

व्यतीत कर रहे हैं अथवा अन्य धर्मों का आश्रय ले रहे हैं। उच्च जाति के हिन्दू इन्हें कुओं पर से जल नहीं भरने देते, उन्हें मन्दिरों में देव-दर्शन नहीं करने देते, उनके बालकों को पाठशाला में प्रविष्ट नहीं होने देते। वे इनसे घृणा करते हैं। इनसे मिलते-जुलते भी नहीं। यहां तक कहें, उनके साथ मनुष्योचित व्यवहार भी नहीं करते।

अस्पृश्यता के कलङ्क को मिटाने के लिये भारतीय महापुरुषों ने अनेक बार चेष्टायें की हैं। चैतन्य, नानक, रामानुज, कबीर आदि अनेक महापुरुषों ने अछूतोद्धार का प्रयत्न किया है, किन्तु उन्होंने केवल तर्कनायें ही की हैं, व्यावहारिक क्षेत्र में काम नहीं किया। स्वामी दयानन्द ने अछूतोद्धार में बहुत अधिक काम किया है। आर्य समाज ने तर्क से आगे बढ़कर व्यवहार-क्षेत्र में भी काम किया है। पञ्जाब में ला० लाजपतराय और महाराष्ट्र देश में शिन्दे की सेवायें अद्वितीय रहीं। राजा राममोहन राय का भी अछूतोद्धार कार्य सराहनीय रहा, किन्तु जो कुछ भी हुआ वह बहुत ही थोड़ा हुआ। उसका क्षेत्र बहुत व्यापक नहीं हुआ। उन्होंने अछूतों के रहन-सहन में परिवर्तन नहीं किया।

इसी बीसवीं शताब्दि में हिन्दुओं को चेत हुआ कि यह छुआछूत की भावनायें राष्ट्रीय जीवन को धक्का पहुँचा रही हैं। इसने हिन्दुओं की शक्ति को कम कर दिया है। सामाजिक उन्नति में बाधा आ रही है। अगणित अछूत कही जाने वाली जाति हिन्दुओं के अत्याचार से तङ्ग आकर विधर्मी बनती जा रही है। जो कुछ अछूत हिन्दू समाज को अपनाये हुए हैं, उनका जीवन बड़ा कष्टमय हो रहा है। निस्सन्देह ऊँच-नीच के भाव समाज में विद्वेष की अग्नि धधकाते हैं। हिन्दू-समाज में छुआछूत कलङ्क है, पाप है और विनाशकारी रोग है।

जिस समाज में वैमनस्य-भावनायें और अस्पृश्यता की प्रवृत्ति होती है वह समाज सङ्गठित नहीं हो सकती। सङ्गठन के बिना बल नहीं आ सकता। जहाँ बल नहीं वहाँ स्वतन्त्रता कैसे आ सकती है? असङ्गठित जातियाँ सदैव दास बनकर रहती हैं। ईसाई धर्म और मुसलिम-धर्म ने भारत में इतना महत्व और व्यापकत्व क्यों पाया? इसका एक मात्र कारण प्रेम सम्मान और बराबरी का अधिकार इन अछूत कही जाने वाली जातियों को देना है। अनन्त काल से हमारी यह पतित जातियाँ विधर्मी समाज में सम्मिलित होती रहीं जिसका अनुभव हमें इस बीसवीं शताब्दि में हुआ। हिन्दू समाज के अत्याचार ने इन करोड़ हिन्दुओं को विधर्मी समाज में मिला दिया है किन्तु इस भयङ्कर ह्रास को भी देखकर हिन्दू समाज की मोह निद्रा नहीं टूटी है।

इन समस्त हिन्दू जाति के अत्याचारों को देखते हुए प्रश्न होता है कि इन अछूत कही जाने वाली जातियों का कैसे उद्धार किया जाय। अब हम अछूतोद्धार के साधनों को ही लिखते हैं जिन पर आचरण करने से हिन्दू जाति अपने महत्व को पा सकती है:—

(क) अछूतों के साथ समान सम्मानता का बर्ताव करें और उनकी आर्थिक स्थिति को यथा शक्य सुधारने की चेष्टा करें।

(ख) अछूतों के प्रति प्रेम और सहानुभूति के भाव रक्खें।

(ग) धनियों को चाहिये कि वह अछूतों को दान दें। उनके बच्चों को पढ़ने के लिये छात्र वृत्तियाँ प्रदान करें। उनकी मिहनत मजदूरी बढ़ाई जाय।

(घ) अछूतों को सरकारी पदों पर नियुक्त कराया जाय। म्यूनिस्पै

लिटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, कौंसिल और असेम्बलियों के मेम्बरों के स्थान पर इनको निर्वाचित किया जाय।

इस मार्ग के अवलम्बन करने से अछूत उन्नति के मार्ग में अग्रसर हो सकते हैं और हिन्दू जाति की शक्ति को बढ़ा सकते हैं।

महात्मा गांधी के व्यक्तित्व ने भारतीय जातीय जीवन में एक रूह फूँकदी है, एक चैतन्यता और स्फूर्ति भरदी है। वे अछूतोद्धार के काम में प्राण-पण से लग गये हैं। महात्मा जी के इस अनवरत परिश्रम ने हिन्दू जनता की आखें खोली हैं। अब स्कूल और कालेज में अछूतों का प्रवेश होने लगा है। अछूतों को देव-दर्शन करने के लिये मन्दिर खुल गये हैं। अब वे स्वतन्त्रतापूर्वक सवर्ण हिन्दुओं के कुओं से पानी भर सकते हैं। महात्मा जी ने अछूतों का नाम बदल कर 'हरिजन' रख दिया है। महात्मा जी ने हरिजन-आन्दोलन को जन्म दिया है। उन्होंने अखिल भारतीय हरिजन-सेवा-सङ्घ की स्थापना की है, जिसका कर्तव्य है कि वह हरिजनों के रहन सहन को ऊँचा बनावे। उनकी इस प्रकार की शिक्षा-दीक्षा हो कि उनमें और उच्च कहे जाने वाली हिन्दू जनता में कुछ भी भेद न रहे। महात्मा जी ने १९३४ ई० में हरिजन आन्दोलन को व्यापक रूप देने के लिये सारे देश में दौरा लगाया। महात्मा जी को इस कार्य में आशातीत सफलता मिली है।

हरिजन आन्दोलन बड़ी शान्ति से चल रहा है। भविष्य में इस आन्दोलन से काफी आशायें की जा रही हैं। हरिजन-आन्दोलन अपने अस्पृश्यता निवारण तथा हरिजनों को समानता का पद दिलाने का भरसक [illegible]

है। अछूतों में सफाई आने लगी है। अछूतों में स्वत्व के भाव उत्पन्न हो गये हैं। अछूत जातियाँ अपने दायित्व को समझने लगी हैं।

पं॰ मदनमोहन मालवीय और पं॰ जवाहरलाल जी अछूतोद्धार के अर्थ में बड़ा उत्साह दिखा रहे हैं। अतः अब आशा है कि हिन्दू जनता में से छुआछूत के भाव सदैव को निर्मूल हो जायेंगे। जब छुआछूत की भावनायें समूल नष्ट हो जायेंगी, तब ही भारत के भाग्य का सूर्य उदय होगा। हमारी मङ्गल-कामना ऐसी ही है।

स्वावलम्बन

विचार-तालिकायें—

(१) प्रस्तावना—स्वावलम्बन की व्याख्या। (२) स्वावलम्बन की आवश्यकता। (३) स्वावलम्बन से लाभ—समाज में सुख शान्ति और आनन्द की वृद्धि होती है। धन-सञ्चार होता है और कीर्ति मिलती है। (४) स्वावलम्बन और सामाजिकोन्नति। (५) परावलम्बी व्यक्तियों से समाज का अहित होता है। (६) स्वावलम्बी व्यक्तियों के चरित्र और आदर्श। (७) उपसंहार—स्वावलम्बन और हमारा कर्तव्य।

मनुष्य के सब काम एक दूसरे की सहायता से सम्पन्न होते हैं, किन्तु कभी-कभी ऐसे अवसर भी सम्मुख आ जाते हैं, जिसमें दूसरों की सहायता कुछ काम नहीं आती। अथवा दूसरों की सहायता पहुँचना सम्भव नहीं होता। ऐसी परिस्थिति में परावलम्बी व्यक्ति किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है और दूसरों की सहायता के लिये बहुत छटपटाता है, किन्तु जो व्यक्ति अपने भरोसे पर काम करते हैं, जिन्हें अपनी शक्ति का पूर्ण विश्वास होता है,

अपने पैरों पर खड़े होकर स्वय अपना काम करते हैं, वास्तव में वही सच्चे स्वावलम्बी हैं। वास्तव में स्वावलम्बन ऐसा गुण है, जिसके सामने मनुष्य का कोई गुण ठहर नहीं सकता। इस गुण के सामने बड़ी-बड़ी कठिनाइयां सुलभ हो जाती हैं। संसार के जितने भी बल हैं, वह स्वावलम्बन के बल के सामने फीके पड़ जाते हैं "स्वावलम्ब की एक झलक पर न्यौछावर कुबेर का कोष"। आज जापान और जर्मनी संसार के सिरताज केवल स्वावलम्बन के बल पर हो रहे हैं।

आज संसार में वही जातियां उन्नति के पथ में चलती हुई दृष्टिगोचर हो रही हैं, जिनमें स्वावलम्बन की मात्रा अधिक है। जो राष्ट्र पर मुख पेखो हैं, प्राय वही अधोगति के जीवन में चले जा रहे हैं। जब हम स्वावलम्बी थे, तब संसार हमारे मुख की ओर ताकता था। आज हम परावलम्बी हैं, हम संसार के मुख की तरफ़ देख रहे हैं। जब कई राष्ट्र अपने कला-कौशल और वाणिज्य व्यवसाय को उन्नत करता है, तब कहा जाता है कि वह अपने पैरों पर खड़ा हो रहा है। भारतवर्ष आज सब कुछ खो चुका है। वह ब्रिटेन की उदारता के आश्रय पर अपना जीवन व्यतीत कर रहा है, यही उसके अधःपतन का चरम सीमा है।

एक लोकोक्ति है 'जो अपनी मदद करता है, परमात्मा उसकी मदद करता है' निस्सन्देह स्वावलम्बन उन्नति की कुञ्जी है। जो मनुष्य अपना काम स्वय करता है, वह अवश्य ऊँचा उठता है। जो मनुष्य केवल भाग्य भरोसे पर अपना जीवन व्यतीत करता है, वह कुछ भी सुधार नहीं कर सकता, प्रत्युत स्वय अधःपतित होता है। स्वावलम्बी के निकट संसार में ऐसा कौन काम है, जिसे वह नहीं कर सकता? संसार में ऐसा कौनसा पदार्थ है, जो स्वावलम्बी को प्राप्त नहीं हो सकता?

स्वावलम्बी व्यक्ति सदैव सुखी रहता है उसे रोटी और कपड़े की समस्या नहीं सताती। जो अपने पैरों पर खड़ा होगा, अपने हाथों से परिश्रम करके रहेगा वह भला क्यों भूखा-नङ्गा रहेगा! दुखी तो वह रहता है जो अपने हाथ पैर नहीं हिलाता और दूसरों का आश्रय तकता है। स्वावलम्बी सदैव प्रसन्न रहता है और सफलतायें उसके सामने हाथ बाँधे खड़ी रहती हैं।

स्वावलम्बी मनुष्य मितचारी और आत्म-निग्रहक होता है। वह अपने जीवन को परिश्रमरूपी अग्नि में तपाकर शोभ्य बनाता है। वह आत्म दमन करता है। दृढ़ता से प्रत्येक काम को आरम्भ करता है। काम की समाप्ति तक धैर्यपूर्वक उसका इन्तजार करता है। अध्यवसाय आदि गुणों के द्वारा वह अपनी आत्मा को विकसित करता है।

स्वावलम्बी मनुष्य मितचारी होने के कारण सादगी को अधिक पसन्द करता है। वह बड़ा मितव्ययी होता है। प्रत्येक कार्य को नियम-बद्धता और क्रमबद्धता के साथ करता है। आलस्य उससे कोसों दूर भागता है। लोभ की दाल स्वावलम्बी के घर नहीं गल पाती। कर्तव्य पालन में वह हिमालय की भाँति अटल रहता है। आत्म-चिन्तन में वह ध्रुव की भाँति अचल रहता है। स्वास्थ्य शान्ति और आनन्द उसके अगल-बगल नाचते रहते हैं। यश और सम्पत्ति दोनों चारों ओर से आकर उसी का आलिङ्गन किया करती हैं। साहस और शौर्य उसके सेवक की भाँति सामने खड़े रहते हैं। कठिनाइयाँ और आपत्तियाँ उसके आगे हाथ जोड़ खड़ी रहती हैं। लक्ष्मी उसके चरणों पर लोटती रहती है।

स्वावलम्बी व्यक्ति का जब आदर होता है तब जगत उसकी प्रशंसा

करता है। संसार उसके साहस के सामने लोहा मानता है। वह अपनी भुजाओं के बल से शक्ति सञ्चय करता है। संसार का प्रत्येक कठिन कार्य उसके हाथ लगते ही हो जाता है। वह अपने उज्ज्वल कामों से स्वयं तो प्रकाशित होता ही है, साथ ही वह अपने माता पिता, परिवार, समाज और देश को भी अपनी यश-कीर्ति से प्रकाशित कर देता है।

स्वावलम्बी व्यक्ति अपना ही हित साधन नहीं करता, वरञ्च वह अपने देश और समाज का भी बहुत कुछ हित करता है। संसार में बड़े-बड़े वैज्ञानिक, सुधारक और विद्वान स्वावलम्बन ही ने उत्पन्न किये हैं।

स्वावलम्बन की शिक्षा व्यक्तियों पर ही अवलम्बित नहीं है, राष्ट्रों को भी स्वावलम्बी बनना चाहिये। जो राष्ट्र अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को स्वयं निर्माण नहीं करते और दूसरे देशों से मँगाकर अपनी अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, वह राष्ट्र स्वावलम्बी की कोटि में नहीं आते और न सभ्य राष्ट्रों में उनकी गणना ही होती है।

संसार के महापुरुषों की जीवन गाथायें इसी एक बात से भरी पड़ी हैं कि वह स्वावलम्बी थे। वे अपने ऊपर पूरा विश्वास रखते थे। कठिन परिश्रम से कभी घबराते न थे। आपत्तियों का सामना बड़े साहस से करते थे। अपने हाथों द्वारा काम करने में अपना गौरव समझते थे। राजा विक्रमादित्य को कौन नहीं जानता? वह क्षिप्रा नदी से स्वयं अपने पीने का पानी भरकर लाते थे। नेपोलियन कैसी निम्न स्थिति से उठकर ऐसा महा यशस्वी पुरुष बना। आज हिटलर अपने स्वावलम्बन के बल पर संसार की शक्तियों के छक्के छुड़ा रहा है। शिवाजी ने अपने पैरों पर खड़े होकर मुगल-सम्राट औरङ्गजेब के नाकों चने चिनवा दिये। महात्मा गांधी

को देखिये उन्होंने अपनी स्वावलम्बन और साहस के बल पर विश्व को हिला दिया है।

भारतवर्ष में स्वावलम्बन की कमी है इसी कारण इसकी दुर्गति हो रही है। जब तक किसी देश में सत्य गौरव और समृद्धि नहीं आ सकती तब तक वह अपने पैरों पर खड़े होने की स्वयं क्षमता प्राप्त नहीं करता। हमें चाहिये कि आलस्य को त्यागकर अपने में साहस, दृढ़ और शक्ति का समावेश करें। अपने कला-कौशल और उद्योग-धन्धों की वृद्धि और अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को स्वयं निर्माण करें।

आलस्य

विचार-तालिकायें —

(१) प्रस्तावना—आलस्य की व्याख्या। (२) आलस्य की हानियाँ—जीवन-शक्ति का ह्रास, पराधीनता का उदय, दूसरों का आश्रय अवलम्बन और स्वास्थ्य हानि। (३) स्वावलम्बन का महत्व। (४) उपसंहार—हमें आलसी न होना चाहिये।

आलस्य एक प्रकार का रोग है जो मनुष्य को शनैः शनैः घुन के कीड़े की भाँति नष्ट करता रहता है। समाज में अज्ञान, अविद्या आदि अवगुण केवल आलस्य के ही कारण प्रवेश करते हैं। आलस्य मानवीय अवयवों को कुण्ठित करता है। शारीरिक शक्ति को नष्ट कर मस्तिष्क को निकम्मा बनाता है। विलासिता अकर्मण्यता और पराधीनता आलस्य के रूपान्तर मात्र हैं। किसी कवि ने आलस्य के सम्बन्ध में क्या ही सुन्दर कहा है?

आलस बैरी बसत तन, सब सुख को हर लेत।
ज्यों ही उद्यम बन्धु सों, मिले परम दुख होत॥

आलसी आदमी भाग्यवाद की आड़ में अपना जीवन नष्ट किया करता है। उसका जीवन व्यर्थ के वाद-विवाद और गपशप में व्यतीत होता है। आलस्य के साथ ही साथ रोग, विनाश और दरिद्रता भी उसके घर में पदार्पण करते हैं और इनको आया हुआ देखकर मलिनता और पराधीनता स्वयं आकर अपना अधिकार जमा लेती हैं। जब आलस्य व्यक्ति पर अपना पूरा अधिकार जमा लेता है, तब उसकी इच्छा शक्तियों को नष्ट करता है। तत्पश्चात उसके ओज और साहस को नष्ट कर देता है। अधीरता और बेचैनी उसको बड़े प्रेम से आलिङ्गन करती हैं। दरिद्रता आलसी को अपना प्यारा सखा बनाती है। पुरुषार्थ और उद्योग एक साथ ही उसको छोड़कर प्रथक हो जाते हैं। जब उद्योग और पुरुषार्थ साथ छोड़ देते हैं, तब आजीविका चलना कठिन हो जाता है और मनुष्य पैसे-पैसे को दूसरे का मुहताज हो जाता है। आलसी व्यक्ति स्वयं तो दुःखी होता ही है, साथ ही अपने दुःख से समाज को भी दुःखी करता है।

मनुष्य जीवन में परिश्रम का बड़ा महत्व है। वह व्यक्ति धन्य है, जो परिश्रमी है। परिश्रम और अध्यवसाय मनुष्य के जीवन को ऊँचा बनाते हैं। मानसिक शक्तियों को विकसित करते और मस्तिष्क को बलिष्ट बनाते हैं। साहस और निर्भयता को जन्म देते हैं। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह परिश्रम से कभी न घबराये और सदैव अनवरत परिश्रम करता रहे। प्रत्येक समय काम का प्रोग्राम सामने रहने से चित्त-वृत्तियाँ

सदैव परिष्कृत रहती है और उसमें विकार उत्पन्न नहीं होता। विपरीत इसके आलस्य मनुष्य को पतन और विनाश की ओर ले जाता है। पुरुषार्थ के अभाव में रोग और विकार मनुष्य को घेर लेते हैं। मन्दाग्नि, दमा आदि रोग उसके गले पड़ जाते हैं। थोड़े ही दिनों में स्वास्थ्य का सत्यानाश हो जाता है। जब मनुष्य का स्वास्थ्य ही चला गया तो फिर शेष ही क्या रह गया! अतः परिश्रम और व्यायाम व्यक्ति और समाज की उत्थान की कुंजियाँ हैं। अतः मनुष्य को परिश्रम से प्रेम और आलस्य से घृणा करनी चाहिये। तब ही व्यक्ति और समाज का हित है, अन्यथा नहीं।

स्वावलम्बी समाज और देश वास्तव में गौरव की वस्तु हैं। वही व्यक्ति और राष्ट्र संसार में सर्वोत्कृष्ट और उन्नत समझे जाते हैं, जो अपने बलबूते पर खड़े रहते हैं और दूसरे व्यक्ति और राष्ट्रों का आश्रय नहीं तकते। संसार में वही पुरुष बड़े हैं वही भाग्यशील हैं जो अपने काम को स्वयं करते हैं। प्रेसीडेन्ट रूज़वेल्ट अपनी मोटर ख़ुद चलाता है लेकिन अपने कपड़े स्वयं धोता है। महात्मा गाँधी अपना प्रत्येक काम अपने आप करते हैं, किन्तु हमारे बालक और बालिकायें छोटे छोटे निजी काम करने से भी हिचकिचाते हैं। प्यारे बच्चो! आशा और आत्मबल को सदा बढ़ाओ, जीवन क्षेत्र में उतरो और सच्चे कर्मवीर बनो। स्वावलम्बन को अपनाओ, आलस्य को आश्रय न दो। यदि तुमने आलस्य पर विजय प्राप्त करली तो अब कोई शक्ति ऐसी नहीं जो तुम्हारे अभ्युत्थान में बाधा उपस्थित करे। उठो और सिंह गर्जना करते हुए भारत को आलस्य निद्रा से जगा दो। इसी आलस्य ने उसकी पराधीनता का अपहरण किया है। आओ, अपनी इस मातृ-भूमि को स्वर्ग और देश को सच्चा कर्मवीर बनावें।

धन का सदुपयोग

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—धन का महत्व। (२) धन का सदुपयोग—दान-पुण्य और परोपकार, परिवार की रक्षा और शिक्षा, राष्ट्रोपयोगी कार्यों में व्यय, अपने जीवन पर धन-व्यय। (३) धन का आय-व्यय और उसका फल। (४) धन के सदुपयोग से लाभ। (५) उपसंहार—धन और हमारा कर्तव्य।

संसार के समस्त सुख धन से प्राप्त होते हैं। मान, प्रतिष्ठा और यश सब मनुष्य धन से प्राप्त करता है, तभी तो विद्वानों ने बतलाया है कि सारे गुणों का आश्रय धन है। संसार धन की देवता के समान इज्जत करता है। सहस्रों मनुष्य पूँजीपतियों की दुम के पीछे लगे फिरते हैं। सैकड़ों मनुष्य उनके इशारे पर काम करने को खड़े रहते हैं। दुनिया के समस्त लोकोपकारी कार्य धन ही से सम्पन्न होते हैं। बड़े-बड़े पद और उपाधियां भी धन ही से प्राप्त होती हैं। कहां तक कहें, संसार का समस्त कार्य धन द्वारा आसानी से सम्पन्न हो जाता है।

जिस प्रकार विद्या का सदुपयोग ज्ञान प्राप्त करने में, शक्ति का सदुपयोग अनाथों की रक्षा करने में, इसी प्रकार धन का सदुपयोग उसको शुभ कार्यों में व्यय करने में है। धन में अपार शक्ति है। जिन कामों के करने में मस्तिष्क विफल हो जाते हैं, प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं, वही काम धन के द्वारा बड़ी सुगमता से हल हो जाते हैं। बड़े बड़े मानी धन के आगे मस्तक टेक जाते हैं। बड़े बड़े प्रणधीर धन के आगे अपनी प्रतिज्ञायें भूल जाते हैं। बड़े-बड़े त्यागी वैरागियों के आसन धन के आगे डिग

करते हैं। यहां तक कहें धन में अपार आकर्षण है महान शक्ति है, किन्तु विद्वान कहते हैं कि धन कमाना इतना कठिन नहीं है जितना उसे तरीके से व्यय करना। परिश्रम से उपार्जित किये हुए धन को यों ही उल्टा सीधा व्यय कर डालना बुद्धिमानी नहीं है। धन का उत्तम कार्यों में व्यय करना ही धन सदुपयोग है।

अब प्रश्न यह उठता है कि धन का सदुपयोग कैसे किया जाय। एक अँगरेजी लोकोक्ति का आशय है कि "दान पहले घर से ही आरम्भ होता है"। अतः प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने उपार्जित धन को सबसे पहले अपने परिवार के भरण-पोषण और शिक्षा में व्यय करे। अपने माता-पिता की सेवा में धन लगावे। बच्चों की शिक्षा पर जो धन व्यय किया जाता है वह कभी निरर्थक नहीं जाता। जो लोग धन को केवल पृथ्वी का बोझ बढ़ाने के लिये उपार्जित करते हैं और सन्तान को शिक्षित बनाने में व्यय नहीं करते वह पशु और समाज के लिये बड़े घातक हैं उनका जन्म पृथ्वी पर व्यर्थ है।

जो धन परिवार के भरण पोषण से बच जाय, उसे ही सार्वजनिक कार्यों में व्यय करना चाहिये। सार्वजनिक कार्य वही उत्तम है, जिससे जनता अधिक से अधिक लाभ उठावे। सार्वजनिक संस्थाओं को दान करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि हमारा धन आलस्य और प्रमाद की वृद्धि तो नहीं कर रहा है। हमारा दान भोग विलास और व्यभिचार के बढ़ाने में तो नहीं उपयोग हो रहा। यदि ऐसा हो रहा है तो हमारे धन का दुरुपयोग हो रहा है। हमारे पूर्वजों ने बतलाया है कि सबसे उत्तम दान भूखे को भोजन देना, नंगे को वस्त्र देना,

दीन हीन की सहायता करना है। और भी बतलाया है कि जो धन न भोग किया गया है न दान दिया गया है, वह स्वतः ही नष्ट हो जाता है। अतः मनुष्य का कर्तव्य है कि वह जो धन उपार्जित करे, उसका कुछ न भाग अवश्य दान करे। दान वही उत्तम है, जो याचक की याचकवृत्ति छुड़ादे। दान पाकर याचक में वह शक्ति आ जाय, जिससे उसे फिर मांगने की आवश्यकता ही न पड़े। इसी कारण विद्या दान को सर्वोत्तम कहा गया है, क्योंकि इससे याचना का सर्वदा मूल नाश हो जाता है। अत: विद्या-संस्थाओं को दान देना धन का सदुपयोग करना है।

मानव जीवन में केवल रोटी कपड़े ही से काम नहीं चलता। मानव-जीवन को मधुर और सरस बनाने के लिये आवश्यक है कि आमोद-प्रमोद के लिये भी कुछ धन व्यय किया जाय अर्थात अपने जीवन में मधुरता लाने के लिये आवश्यक है कि वह मनोरञ्जन और खेल-कूद पर भी कुछ व्यय करे। इसी प्रकार आकस्मिक घटनाओं के अवसरों पर रक्षा के लिये व्यय करना भी धन का सदुपयोग है। ऐसे सङ्कट के समय धन व्यय करने में आगा-पीछा न करना चाहिये। आकस्मिक सङ्कटों, पीड़ाओं और रोगों के लिये अपनी आमदनी में से बचाकर रखना ही बुद्धिमानी है।

देश के उद्योग-धन्धों और कला-कौशल को उन्नति देने के लिये अपनी सम्पति को लगाना धन का सदुपयोग करना है। इस प्रकार धन का उपयोग देश की आर्थिक दशा के सुधारने में सहायता करता है। धन का सच्चा उपयोग वही है, जो देश की उत्पादन शक्ति को बढ़ा दे।

लोकोपकारी कार्यों में धन व्यय करना अथवा लोक-हितकारी संस्थाओं

का दान करना ही धन का सदुपयोग नहीं है वरन अपने ऊपर व्यय करना भी धन का सदुपयोग है। अच्छे हवादार मकान में रहना बच्चे को अच्छी शिक्षा देना अच्छा भोजन करना और अच्छे वस्त्र पहनना अपने आप ही को आनन्द नहीं देता, वरन देखने वालों के हृदय में भी आनन्द का संचार करता है। अपने ऊपर व्यय करना समाज के एक सदस्य पर व्यय करना है किन्तु सदैव यह ध्यान रखना चाहिये कि हमारा धन विलासिता में तो व्यय नहीं हो रहा है। विलासिता पर व्यय किया हुआ धन हमारे ऊपर बड़ा बुरा प्रभाव डालता है परन्तु हमारी अच्छी रहन-सहन से समाज का गौरव बढ़ता है।

धन का अपव्यय कभी न करना चाहिये। व्यर्थ कामों में धन व्यय करने से अन्त में भिक्षा होती है। हम ऐसे अनेक फिजूल खर्च मनुष्यों को जानते हैं जिन्होंने अपनी सम्पत्ति या बापों की सम्पत्ति उड़ाया और अपने अन्तिम जीवन में पैसे-पैसे को मुहताज हो गये और भूख की पीड़ा से व्यथित होकर उन्होंने अपने प्राण त्यागे। व्यभिचारियों, शराबियों और जुआरियों को देखिये उनकी कैसी दुर्गत होती है। वे अपने धन को कुकर्मों में फँसकर कैसे नष्ट कर डालते हैं। धन के लिये सदा तरसते रहते हैं। ऐसी परिस्थिति में वे घोर पतन के गड्ढे में ही गिरे नजर आते हैं। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह फिजूलखर्ची कभी न करे और मितव्ययता के सुन्दर गुण को अपनावे। जो मनुष्य मितव्ययी होते हैं वे सदैव प्रसन्न रहते हैं। उनके प्रत्येक काम बुद्धिमानी और चतुराई से सम्पन्न होते हैं। उन्हें कभी किसी का मोहताज नहीं बनना पड़ता।

जो मनुष्य धन का सदुपयोग करता है वह लोक और परलोक में

सुख और शान्ति प्राप्त करते हैं। सर्वत्र उनकी प्रतिष्ठा होती है। संसार में उनका नाम अमर हो जाता है। जनता उनसे प्रेम करती है। स्वयं उन्हें आध्यात्मिक शान्ति मिलती है। ऐसे पुरुष अपना और समाज दोनों का कल्याण करते हैं।

अत हमारा कर्तव्य है कि हम धन का सदुपयोग करें जिससे हमें सुख, शान्ति और कीर्ति मिले और समय पड़ने पर किसी से मांगना न पड़े।

रेडियो

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना वैज्ञानिक चमत्कार और रेडियो। (२) रेडियो का क्रमश' विकास और इतिहास। (३) रेडियो से लाभ समाचार पाने की सुविधा, मनोरञ्जन का सौलभ्य, व्यापार में रेडियो की सहायता, शिक्षा-प्रचार और सुधार योजना। (४) सशङ्क धारणाओं का निवारण। (५) आक्रमण काल मे रेडियो का उपयोग। (६) रेडियो का दुरुपयोग। (७) उपसंहार—रेडियो द्वारा ग्राम सुधार।

जब मनुष्य शारीरिक और मानसिक परिश्रम से थक जाता है, तब स्वभावत' उसके हृदय में अभिलाषा उठती है कि वह अपनी शारीरिक और मानसिक क्लान्ति किसी प्रकार दूर करे। इस क्लान्ति को दूर करने के लिये वह मनोरञ्जन के साधनों को ढूँढ़ता है। कोई सङ्गीत गृहों में जाकर सङ्गीत का आनन्द लेता है, कोई सिनेमा-हाल में जाकर अपना जी बहलाता है, कोई प्रकृति की मन भावनी छटा को अवलोकन कर आनन्दित होता है, कोई नदियों के किनारे की सुरम्य भुवन-मोहिनी शोभा को

निराश आत्मस्वानुभव करता है, कोई सरस-घटों में जाकर अनेक खेल और मैचों द्वारा अपना मनोरञ्जन करता है कुछ पुस्तकालयों में ही अपनी थकावट दूर करते हैं और कुछ रेडियो द्वारा अपनी मानसिक अशान्ति दूर करते हैं।

मनोरञ्जन के साधनों में रेडियो का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। रेडियो एक यन्त्र है, जिसके द्वारा बिना तार की सहायता से किसी भी दूर की ध्वनि सुनी जा सकती है। रेडियो का उपयोग सन्देश व्याख्यान और संगीत सुनने के लिये किया जाता है। किसी बड़े नगर में रेडियो का स्टेशन होता है वहां से समाचार व्याख्यान और संगीत ब्रौडकास्ट (भेजना) किये जाते हैं।

सन् १८९९ में मारकोनी नामक इटली के एक वैज्ञानिक ने रेडियो का आविष्कार किया। संसार में सबसे प्रथम इङ्गलैण्ड में ब्रौड-कास्टिंग (सन्देश भेजने) स्टेशन स्थापित हुआ, तब से अब तक निरन्तर उन्नति इस शक्ति दर से हो रही है।

ब्रौड कास्ट स्टेशनों पर संसार के समाचार व्याख्याता और गायक उपस्थित रहते हैं। प्रत्येक काम के लिये पहले से ही प्रोग्राम बना लिया जाता है जिसकी सूचना दो एक दिन पहले ही सब साधारण को दे दी जाती है। प्रोग्राम के अनुसार नियत समय पर सन्देश व्याख्यान और संगीत ब्रौडकास्ट किये जाते हैं। जहां जहां पर सन्देश प्राप्त करने वाली मशीन होती हैं वहां उसी समय पर उसी ढंग और ध्वनि में वह सन्देश व्याख्यान और संगीत सुनाई पड़ते हैं। सन्देशों को रिसीव करने वाली मशीनें अभी इतने मूल्य में मिलती हैं कि वह सब-साधारण तक नहीं पहुँच सकतीं। अभी तक उनका उपयोग धनवानों तक ही सीमित है।

संसार में रेडियो द्वारा बड़े उपकार हुए हैं। सुदूर देशों के समाचार, व्याख्यान और सङ्गीत मिनटों में सुन लिये जाते हैं। जहां के समाचार पाने में बहुत समय लगता था, वहां अब रेडियो द्वारा मिनटों और सेकिण्डों में समाचार सुने जा सकते हैं। इङ्गलैण्ड में भारत मन्त्री की स्पीच कुछ ही मिनटों में दिल्ली सुनी जा सकती है।

रेडियो मनोरञ्जन का सर्वश्रेष्ठ साधन है। संसार के प्रसिद्ध से प्रसिद्ध गायक का गाना घर बैठे ही इस पर सुना जा सकता है। यह रेडियो ही का चमत्कार है।

समुद्र यात्रा के समय रेडियो का उपयोग बड़ा लाभकारी सिद्ध हुआ है। जहां जहाज को कोई खतरे का सामना होता है तो फौरन खतरे का सिगनल दे दिया जाता है और उसकी सूचना संसार को मिल जाती है।

शिक्षा पर जहां अरबों रुपया व्यय किया जाता है और प्रयत्न किया जाता है कि जनता शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को समझ ले, किन्तु कुछ प्रभाव नहीं होता। वहां रेडियो द्वारा जनता को थोड़े ही व्यय में शिक्षित बनाया जा सकता है। ब्राडकास्ट स्टेशनों पर चन्द सुधारकों के व्याख्यान करा दिये जायें और उनको स्थान-स्थान पर भेज दिया जाय। इसी तरह रेडियो से समाज-सुधार की योजना भी सफल बनाई जा सकती है। सिर्फ किसी बुरी बात या कुप्रथा के विरुद्ध प्रभावशाली भाषण करा दिये जायें और दूर-दूर तक देश-विदेशों में उसे लोगों को सुनाया जाय।

कृषी, व्यापार और कला-कौशल की उन्नति के लिये रेडियो बड़े उपयोगी साधन हैं। रेडियो पर उन्नत देशों की कृषी, व्यापार और कला-कौशल की बातें सुनाई जा सकती हैं, जिससे सर्व-साधारण अधिक लाभ उठा सकते हैं।

प्रचार कार्य में तो रेडियो से असाधारण लाभ पहुँचाया है। थोड़े व्यय से आप सुगमता से किसी भी प्रकार का प्रचार करा सकते हैं और जनता में उसका प्रचार कर सकते हैं।

ग्राम सुधार का कार्य जैसा उत्तम रेडियो द्वारा हो सकता है उतना किसी दूसरे साधन द्वारा नहीं हो सकता। रेडियो द्वारा ग्राम वालों को व्यापार कृषि और पशु-पालन सम्बन्धी अनेक बातें बताई जा सकती हैं। हर्ष है कि अब भारतवर्ष में भी इसका प्रचार हो रहा है और जनता इससे लाभ उठा रही है।

रेडियो द्वारा मवेशियों की बीमारियों के सम्बन्ध में ग्राम वालों को बहुत कुछ समझाया जा सकता है। उनके सस्ते नुस्खे उन्हें बताये जा सकते हैं। खेती के कीड़ों के निवारण के उपाय भी बहुत कुछ सुगमता से बताये जा सकते हैं। प्रायः देखने में आता है कि स्वच्छता के अभाव में गांव वाले अनेक रोगों के शिकार हो जाते हैं। उन्हें स्वच्छता के लाभों से परिचित कराकर अनेक रोगों से बचाया जा सकता है। संक्रामक रोगों से बचने के लिये उन्हें अनेक चेतावनी और सावधानी दी जा सकती है। उन्हें मामूली औषधि उपचार भी बताया जा सकता है।

रेडियो द्वारा जनता की सम्प्रान्त धारणायें भी निर्मूल की जा सकती हैं। जनता में अनेक झूठी अफवाहें ऐसी फैला दी जाती हैं जिनसे जनता और गवर्नमेण्ट में पर्याप्त कटुता फैल जाती है किन्तु रेडियो द्वारा उनका निवारण बड़ी आसानी से किया जा सकता है और उनकी धारणाओं को मिटाया जा सकता है।

सरकारी हुक्म अहकाम के विस्तार देने में रेडियो बड़ा उपयोगी

काम करते हैं। जब गवर्नमेण्ट जनता को कोई छूट अथवा कानूनी रियायत देती है तो बेचारे वे पढ़े-लिखे गांव वाले इस सूचना से अनभिज्ञ रह जाते हैं। धनी, शिक्षित और अधिकारी लोग ही इस निर्बलता से लाभ उठाते हैं, किन्तु रेडियो द्वारा ये सारी बातें फौरन ही जनता तक पहुँचा दी जाती हैं।

शत्रुओं के आक्रमण और कोई अचानक आने वाली आकस्मिक घटना का समाचार रेडियो द्वारा तत्क्षण जनता में पहुँचा दिया जाता है, जिससे जनता पूर्ण सावधान हो जाती है और खतरे से अपनी रक्षा कर लेती है।

रेडियो के प्रचार ने व्यापारियों की ठगई बन्द करदी है। इसके प्रचार से पहले व्यापारी जनता को खूब मनमाना ठगते थे, किन्तु अब नित्य रेडियो पर प्रत्येक वस्तु के भाव बता दिये जाते हैं, जिससे जनता धोखा नहीं खा सकती और अपनी खून की कमाई को मुफ्त में व्यापारियों को नहीं दे सकती।

गांव वालों की आर्थिक दशा सुधारने के लिये अनेक घरेलू उद्योग-धन्धे रेडियो पर समझाये जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर बेंत की चीजें बनाना, अचार और मुरब्बे तैयार करना, शहद की मक्खियां पालना, कातना, भांति भांति की दस्तकारियां करना और चमड़े आदि का काम बनाना आदि-आदि। रेडियो द्वारा यह बताना कि अमुक वस्तु के लिये अमुक स्थान पर भेजने से अधिक लाभ होगा और अमुक स्थान की अमुक वस्तु यहां मँगाने पर सस्ती पड़ेगी बड़ा लाभ होता है। निस्सन्देह रेडियो का आविष्कार मनुष्य को बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। इससे

शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सब ही प्रकार का लाभ उठाया जा सकता है।

हाँ, रेडियो का दुरुपयोग भी समाचार पत्रों की तरह हानिकारक सिद्ध हुआ है, जब कि रेडियो से झूठी खबरें सुनाई जायें। इस युद्ध-काल में प्रायः प्रत्येक राष्ट्र अपने प्रचार के लिये झूठ-मूठे समाचार भेज रहे हैं, जिससे जनता का विश्वास रेडियो पर से उठता जाता है। रेडियो का ऐसा दुरुपयोग राष्ट्र का बड़ा अहितकारी सिद्ध हो सकता है सरकार को चाहिये कि ब्रॉडकास्ट स्टेशनों पर पर्याप्त नियन्त्रण रक्खे ताकि कोई झूठा सन्देश जनता के सामने न आ सके, तब ही कल्याण हो सकता है अन्यथा नहीं।

अन्त में हम यही कहेंगे कि रेडियो का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। भारतवर्ष जैसे पिछड़े देश को उठाने के लिये इसका उपयोग बड़ा ही आवश्यक है।

आज्ञा-पालन

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—आज्ञा-पालन की व्याख्या। (२) बड़ों की आज्ञा पालन। (३) आज्ञा पालन में उचित अनुचित का विचार। (४) आज्ञा-पालन के लाभ सुख-शान्ति की वृद्धि होती है, विचारों पर नियन्त्रण रहता है, प्रेम और सहानुभूति बढ़ती है, नियमित जीवन बनता है मानसिक शक्तियों का विकास होता है। (५) आज्ञा पालन के उदाहरण। (६) आज्ञा-पालन का गौरव। (७) उपसंहार—आज्ञा-पालन और हमारा कर्त्तव्य।

मनुष्य जीवन में आज्ञा पालन का गुण भी बड़ा महत्व रखता है। जिन व्यक्तियों और समाजों में व्यवस्थाओं के पालन करने की क्षमता है, उतने ही वह व्यक्ति और समाज ऊँचे हैं। प्रत्येक मनुष्य की अभिलाषा रहती है कि जो कुछ मैं कहूँ अथवा करूँ, जन समाज माने और उसका अनुकरण करे। यदि जन साधारण उसके कथन के अनुसार कार्य करने लगता है तो उस मनुष्य के आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। यदि समाज उसकी आयोजना का विरोध करता है तो उसको निस्सन्देह आन्तरिक पीड़ा होती है। यदि तुम्हारी अभिलाषा है कि लोग मेरे कहने को मानें, तो तुम्हें भी दूसरों की आज्ञा पालने का अनुवर्ता बनना चाहिये। यदि तुम अपने गुरुजनों और समाज की व्यवस्थाओं का ठीक २ पालन करते हो तो तुम्हें भी दूसरों से अपनी आज्ञा का पालन कराने का श्रेय प्राप्त हो सकता है। यदि आप इसके विरुद्ध आचरण करते हैं तो समाज आपकी बातें सुनने को तैयार नहीं है।

जिन व्यक्तियों ने अपने माता-पिता एव समाज के आदरणीय महा-पुरुषों के आदेशों की अवहेलना की है, वह व्यक्ति समाज में अथवा परिवार में सम्मान पाने के अधिकारी हैं? कदापि नहीं। समाज ऐसे पुरुषों को घृणा की दृष्टि से देखता है और उसके कार्यों की पग पग पर अवहेलना और विरोध करता है। समाज बिलकुल कुए की आवाज़ के तुल्य है, जैसा कहो वैसा सुनो। समाज में माता-पिता, भाई बहिन पति, स्वामी, सेना-नायक, सभापति और अध्यापक आदि बड़ों में गिने जाते हैं जो जिस समय जिसके अधिकार में हो, उसका कहना मानना चाहिये।

आज्ञा पालन में औचित्यौनौचित्य का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये।

आज्ञायें सदैव उचित ही होनी चाहियें किन्तु अनुशासन के निभाने के अवसर पर उचित अनुचित के झमेले में न पड़कर आज्ञा-पालन करने ही में कल्याण है। आज्ञा-पालन ही उचित है। उचित आज्ञाओं के अवसर पर तो कोई आपत्ति है ही नहीं। हां, अनुचित आज्ञाओं के अवसर पर कठिन समस्यायें आ सकती हैं। ऐसा समय आने पर मनुष्य अपनी वृत्तियों पर पूरा काबू रक्खे और अपने स्वामी को आज्ञा-पालन के अनौचित्य का बोध कराकर अपनी असमर्थता प्रकट करदे और आज्ञा-पालन न करने की क्षमा याचना करले। ऐसी समस्यायें वहीं उपस्थित होती हैं जहां स्वामी अन्यायी पति और पदाधिकारी कठोर और दुराचारी होते हैं। दुष्ट स्वामी और दुराचारी अध्यापकों की आज्ञा पालन करने में बड़ी कठिन समस्यायें आती हैं। ऐसे अवसरों पर मरने जीने का प्रश्न उपस्थित हो जाता है। ऐसी कठिन परिस्थिति में मनुष्य को चाहिये कि वह अपने धैर्य को न खोवे और न अपनी भावना को उत्तेजित करे। वास्तविक सुख की प्राप्ति तो आज्ञा-पालन करने ही में होती है। विश्वासघात से तो संकट ही संकट सामने आने लगते हैं।

आज्ञा-पालन में आत्म-संयम की बड़ी आवश्यकता है। आज्ञा-पालन का गुण समाज में सुख-शान्ति की वृद्धि करता है।

आज्ञा-पालन करने से मानसी चेष्टायें नियमित होती हैं और मानसी विचारों पर पूरा नियन्त्रण रहता है। आज्ञा-पालन समाज में प्रेम और सहानुभूति उत्पन्न करता है। संगठन-शक्ति को बढ़ाता है। अनियन्त्रित जातियां असभ्य और उच्छृंखल बन जाती हैं। जो परिवार अपने स्वामी की आज्ञा की अवहेलना करता है जो सेना अपने सेनापति की आज्ञा

का उल्लङ्घन करती है, जिस समाज की कोई व्यवस्था नहीं है, वह आज नहीं तो कल अवश्य ही नष्ट हो सकती है। जिस समाज के बहुत नेता होते हैं और 'हमी चुनीं दीगरे नेस्त' के सिद्धान्त वाले होते हैं, वह समाजें प्राय नष्ट हो जाती हैं।

सभ्य राष्ट्र एक ही नेता के आदेश पर चलने मे अपना कल्याण समझते हैं। अपनी व्यवस्था को ठीक रखते हैं। सब अनुशासन के नियमों को पालते हैं, वह राष्ट्र अग्रगामी होते हैं और उन्हीं का संसार मान करता है। व्यवस्थित परिवार जो अपने स्वामी की आज्ञा का अक्षरश पालन करते हैं, प्राय वही परिवार सुखी देखने में आते हैं। आज्ञा-पालन में हठ और दुराग्रह कभी न आना चाहिये। हट और दुराग्रह ऐसे अवगुण हैं, जो मनुष्य को उठने ही नहीं देते। हमें चाहिये कि हम समाज की व्यवस्था और नियमों का पालन कर अपने को आज्ञा पालन करने का अभ्यासी बनावें। हठ और दुराग्रह प्राय जङ्गली जातियों ही में अधिक देखने को मिलता है। सभ्य जातियों में यह अवगुण प्रवेश ही नहीं कर पाता। आज्ञा-पालन के गुण से मानव जीवन में दिव्य गुण विकसित होने लगते हैं। प्राय अनुभव करने में आया है कि मनुष्य में उत्तम गुणों का विकास तब ही हुआ है, जब वह आज्ञा-पालन के सूत्र में व्यवस्थित रहा है। आज्ञा-पालक सिपाही ही चतुर सेना नायक बनते देखा गया है। आज्ञा-पालक आरुणी, कणाद और पतञ्जलि की समानता केवल आज्ञा पालन करने के कारण ही कर सका था।

आज्ञा-पालक वाशिङ्गटन ही सिपाही से राष्ट्रपति हो सका था। कहाँ तक कहें मानवी हृदयों में सद्गुणों के विकास के लिये आज्ञा पालन का

गुण सर्वोपरि है। जो व्यक्ति आज्ञा पालन की कसौटी पर खरा उतर जाता है वह संसार में फिर कहीं खोटा नहीं उतर सकता।

'परशुराम पितु आज्ञा राखी। मारी मातु लोक सब साखी'॥

आज्ञा पालन का उदाहरण संसार में परशुराम से बढ़कर कहीं नहीं है। आज मर्यादा पुरुषोत्तम राम केवल आज्ञा-पालन के गुण ही के कारण कहलाते हैं। आज भीष्म पितामह का इतना गौरव मिला सो आज्ञा-पालन के ही कारण हुआ है। भारतीय जाति ऐसे ही अनन्य आज्ञा पालन के गुणों के कारण अब तक अपना गौरव रख सकी है। निस्सन्देह हिन्दू जाति में आज्ञा-पालन के उदाहरण ऐसे ऊँचे हैं जिनके समक्ष संसार की कोई अन्य जाति नहीं बैठ सकती।

जहां तक आज्ञा-पालन का सम्बन्ध है वहां उचित अनुचित का प्रश्न ही नहीं रहता। योग्य स्वामी पति और पदाधिकारियों से अनुचित आज्ञा की आशा ही न रखनी चाहिये। यदि कदाचित् ऐसा कोई अवसर भी आ जाय तो केवल आज्ञा-पालन ही में भलाई है। हां धर्म और सदाचार के प्रस्तावों को कदापि नहीं मानना चाहिये। यदि हम ऐसे प्रस्तावों को मानने को तैयार हो जायेंगे तो हम संसार में पाप और अनाचार की वृद्धि करेंगे। अतः हमें चाहिये कि हम अनुशासन के अन्दर रहते हुए समाज की व्यवस्थाओं और आज्ञाओं का भली भांति मानें तब ही हम और हमारी समाज उन्नत होगी।

———

फुटबाल का खेल

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना फुटबाल का खेल रोचक और कम खर्चीला है। (२) खेल की रचना। (३) खेल की व्यवस्था—मैदान-विभाजन, खिलाड़ियों की भिन्न भिन्न ड्यूटियां, खेल के साधारण नियम रेफ़री गोल-कीपर और निर्णायक। (४) फुटबाल के खेल की उपयोगिता—मांस पेशियों की सुदृढ़ता, रक्त-शोधन, मनोरञ्जन, सतर्कता और कर्तव्य-परायणता, नैतिक बलप्राप्ति और प्रेम और सहानुभूति की अभिवृद्धि। (५) फुटबाल की अन्य खेलों से तुलना। ६। उपसंहार—खेल का महत्व।

फुटबाल का खेल हमारे देश में अँगरेजी संस्कृति के साथ साथ आया है। अन्य अँगरेज़ी खेलों की अपेक्षा यह खेल सुलभ सस्ता और अधिक उपयोगी है। इस खेल में न तो अधिक झंझट ही है और न अधिक सामान जुटाने की आवश्यकता। मैदानी खेलों में यह खेल सबसे अधिक मनोरञ्जक और स्वास्थ्यवर्द्धक है।

यह खेल समतल चौरस भूमि में खेला जाता है। इसके लिये १०० गज़ लम्बी और ६० गज चौड़ी भूमि की आवश्यक्ता पड़ती है।

खेल की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है—मैदान के आमने-सामने दो दो पोल गाड़ दिये जाते हैं, यही स्थान गोल के सूचक चिन्ह होते हैं। इसके अतिरिक्त इस खेल में किसी सामान की आवश्यकता नहीं आती। बस एक गेंद मय ब्लैडर के होनी चाहिये और ब्लैडर में हवा भरने को को एक पम्प। बस इससे अधिक सामान इस खेल में नहीं जुटाना पड़ता। देशी खेलों की भांति यह खेल सबसे सस्ता खेल है।

खेल के मध्य में एक मध्य रेखा "Centre" रेखा होती है जिससे मैदान दो भागों में विभाजित हो जाता है। इसके अतिरिक्त दो रेखायें और खींची जाती हैं जिन्हें क्रमशः गोल लाइन "Goal Line" और स्पर्श रेखा "Touch-Line" कहते हैं। ये समस्त लाइनें सफेद चूने से चिन्हित की जाती हैं।

इस खेल में हाकी के खेल की भांति ग्यारह-ग्यारह खिलाड़ियों की दो टोलियां सम्मिलित होती हैं। ये खिलाड़ी ४ भागों में बंट जाते हैं। आगे खेलने वाले "फॉरवर्ड" बीच के "हाफ बैक" इनके पीछे "फुल बैक" और गोल रक्षक कहलाते हैं। आगे वाले खिलाड़ियों की संख्या ५ होती है। इनका कर्तव्य है कि वह "बाल" को विरोधी खिलाड़ियों के गोल में बढ़ा दें। बीच वाले तीन खिलाड़ियों का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण होता है। ये गोल की भी रक्षा करते हैं और आगे बढ़कर आक्रमणकारियों के पीछे दूसरी टोली पर आक्रमण भी करते हैं। ये साधारणतया "बाल" को मारने वालों की ओर बढ़ाते रहते हैं। पीछे खेलने वाले होते हैं। वह गेंद को आगे खेलने वालों के आगे बढ़ा देते हैं और अपनी ओर के गोल में विरोधी पार्टी द्वारा भेजी गेंद को रोकने की चेष्टा करते हैं। 'गोल-कीपर' अच्छा खिलाड़ी होना चाहिये।

खेल के आरम्भ में दोनों पार्टियां "Toss" सिक्का द्वारा यह निर्णय करती हैं कि पहले गेंद को लेकर कौन पार्टी आगे बढ़ेगी। जिस टोली की जीत हो जाती है वह बाल को मध्य रेखा पर रखती है और प्रहार द्वारा बाल को आगे बढ़ाती है। जब गोल हो जाता है तब फिर बाल को इसी स्थान पर लाया जाता है। साधारणतया यह खेल ४५ मिनट में खेला जाता है। बीच में १ मिनट का अवकाश भी दिया जाता है।

गेंद को कोई खिलाड़ी हाथ से नहीं छूता। यदि किसी कारण से खिलाड़ी गेंद को हाथ से छू ले तो गेंद फिर मध्य-रेखा से विपक्षी दल दोषी पार्टी की ओर बढ़ाता है। इसे "Foul" या दोष कहते हैं। इसी प्रकार यदि किसी टोली का खिलाड़ी दूसरी टोली के खिलाड़ी को धक्का दे, पकड़े या बाधा पहुँचाये तो ऐसी दशा में भी दोष (Foul) माना जाता है।

खेल के नियमों की पाबन्दी बड़ी सावधानी से की जाती है। खेल को सुव्यवस्थित ढङ्ग से चलाने के लिये एक व्यक्ति चुना जाता है, जो खेल को बड़े ध्यान से देखता है और कोई काम नियम विरुद्ध नहीं होने देता, उसे 'रैफ़री" कहते हैं। प्रत्येक पार्टी का पृथक-पृथक रैफ़री होता है। रैफरी के निर्णय को प्रत्येक खिलाड़ी मानता है। रैफ़रियों की सहायता के लिये दो लाइनमैन और होते हैं, जो सिर्फ यह देखते हैं कि बाल स्पर्श-रेखा (Touch-line) के भीतर होकर गई है अथवा नहीं। या गोल के अन्दर होकर गई अथवा नहीं।

इस खेल की हार-जीत गोल बनाने पर होती है। जो पार्टी अधिक संख्या में गोल बनाती है, वह विजयी पार्टी समझी जाती है। जब कोई पार्टी गोल बना पाती अथवा दोनों पार्टियां समान गोल बनाती हैं तो दोनों पार्टियां समान समझी जाती हैं।

जितने खेल हैं, वह मनोरञ्जन और स्वास्थ्य सुधार के विचार से खेले जाते हैं। फुटबाल के खेल में मनोरञ्जन तो होता ही है, साथ ही खिलाड़ियों की मांस पेशियां सबल होती हैं, श्वासोच्छ्वास की क्रिया शीघ्र होने के कारण रक्त भी शीघ्र शुद्ध होता है, स्फूर्ति आती है, सतर्क और

शरीर को स्पर्श किया है। यह सब कुछ अवलोकन किया और अनुभव किया, किन्तु हूँ तो आखिर नाचीज ही। भला मेरी आत्म कथा ही क्या ? मगर मैं इस बात को बड़े अभिमान से कहता हूँ कि मनुष्य के लिये मैंने अपना सर्वस्व अर्पण कर रक्खा है। यह मेरे आत्म सन्तोष और सेवा-भाव की चर्म सीमा है।

अब आप मेरी जीवन-गाथा सुनिये। एक दिन वह था, जब मैं लहलहाते हरे खेत में हवा के झूले पर मस्ती से झूमता था। मेरा प्यारा किसान मुझे झूलते देख फूला न समाता था। मैं भी पीले फूलों से हँस-हँसकर किसान को हँसाया करता था। पाँच छः महीने के बाद मेरी यह अठखेलिया समाप्त हो गईं। मुझे भी अपने को सङ्घर्षों के हवाले करना पड़ा। बिना सङ्घर्ष में पड़े जीवन कुछ बनता नहीं। सूर्य मेरे अभिमान को न सह सका। उसने मेरे ऊपर ऐसी प्रखर रश्मियों के बाण-प्रहार किये कि मैं वेदनाओं से सञ्ज्ञा-शून्य हो गया। सहसा मेरा हृदय फट गया। मैं बोंडी से निकल कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। किसान ने समस्त बौंडियों को एकत्र कर जिनिङ्ग फैक्टरी वालों के हाथ बेच दिया। संसार बड़ा स्वार्थमय है, कभी किसी को दया नहीं आती।

जिनिङ्ग वालों ने मेरे साथ बड़ा अत्याचार किया। उन्होंने मेरी मुश्कें बाँधी और मुझे एक बेलन वाली मशीन के पास ला पटका। मैं थर्रा गया और मेरी रोमावली खड़ी हो गई। मगर करता क्या, वहीं डर के मारे पड़ा रहा ?

घरर-घरर के शब्द ने मेरी मोह-निद्रा तोड़ी, मैं समझा कि शायद अब कुछ चैन मिलेगा। उन बेलनों के अन्दर डालकर मेरी वह गति

सुन्दर कुमारी ने खरीदा। मैं पुलकित हुआ और मेरे मुख मण्डल पर एक आनन्द भरी मुस्कराहट छा गई।

अब मेरा वृतान्त बड़ा दुःखपूर्ण है। उस कुमारी ने मुझे प्रेम-लोक के दर्शन कराये। मैंने प्रेमाधिक्य से उसके उमड़े आसुओं के पोंछने में सहायता की। रमणी ने अब मुझे कुर्ते की आकृति में बदल कर अपने गले लगाया। मैं आनन्द से विभोर हो गया। नित्य आनन्द और उल्लास से जीवन व्यतीत करने लगा। कुछ दिनों के प्रयोग के बाद मेरी दशा बदलने लगी। मैं जीर्ण हो गया। एक दिन उस युवती ने मुझे एक भिखारी के सुपुर्द कर दिया। बस यहीं से मेरा पतन आरम्भ हो गया। अब मैं उस दीन दुखिया की सेवा में डूब गया। न मालूम मैं कितने लोगों के दरवाजे पर भीख मांगने के लिये फैलाया गया। हां, मुझे अन्न तो शायद मुट्ठी भर से अधिक नहीं मिला, किन्तु गालियां भर पेट मिलती रहीं। न घर था, न खाने को नाज।

गोदावरी के किनारे भूख और प्यास से तड़प तड़प कर उस भिखारी ने अपने प्राण दे दिये और मैं उसके सिरहाने ही धरा रह गया। लोगों ने भिखारी को तो गोदावरी में प्रवाहित कर दिया, किन्तु मुझे किसी ने छुआ तक भी नहीं। अब मैं इधर से उधर आंधियों के साथ उड़ता फिरता हूँ, किन्तु संसार में किसको मेरी कहानी सुनने की फुरसत है! "कौन सुनता है यहां पर मुफलिसो नाचार की"।

रुपये की आत्म-कहानी

मुझे सभी जानते और पहिचानते हैं। मैं छुआछूत नहीं मानता।

आज प्रत्येक धर्म, समाज, जाति और सम्प्रदाय में मेरा आना-जाना है। सर्वत्र मेरा आदर होता है। मुझे पाते ही व्यक्ति की आनन्द से बाछें खिल जाती हैं। आनन्द तरंग मारने लगता है। कहिये फिर मुझसे बढ़कर संसार में कौन हो सकता है? लोग भगवान के बड़े गीत गाते हैं, उनकी आराधना करते हैं क्यों? केवल मुझे पाने के लिये, किन्तु मैं भगवान के भक्तों से तो लगभग दूर ही रहता हूँ।

आपने मेरा जैसा बिका-मिला शायद ही देखा हो। मेरा व्यक्तित्व ऐसा महान है कि बड़े बड़े प्रतापी पण्डित मेरे चरण चूमते हैं। जिस घर में मेरी पहुँच नहीं उस घर को कोई फूटी आँख से भी नहीं देखता। संसार का कौनसा रहस्य है, जो मेरे द्वारा न सुलझाया जाता हो? संसार का ऐसा कौनसा काम है, जो मेरे द्वारा सम्भव नहीं होता? संसार में ऐसा पद और उपाधि कौनसी है जो मेरे द्वारा प्राप्त न की जाती हो?

मानव मनोवृत्तियों पर मेरा पूरा अधिकार है। आत्म-सम्मान और कर्म-श्लाघा के भाव मानव हृदय में मैं ही भरता हूँ।

बड़े-बड़े धर्म मूर्खों को धर्मावतार और दयासागर की पदवियों में ही दिलाता हूँ। सर, नाइट और रायबहादुर आदि की पदवियाँ मेरे ही प्रभाव से प्राप्त की जाती हैं। फिर आप बताइये संसार में ऐसा कौनसा गुण अपरिचित है जो मेरे में निवास नहीं करता?

आप मेरे द्वारा मेरी महत्ता सुनकर किंचित आश्चर्य में हुए होंगे किन्तु आश्चर्यान्वित होने की कोई बात नहीं है। आइये तनिक मैं आपको अपना जीवन वृत्तान्त सुनाऊँ।

मैं पश्चिमी आस्ट्रेलिया की एक खान से अभी कम में उत्पन्न हुआ। मेरी

अग्नि-परीक्षा की गई और मेरे साथियों को मुझसे प्रथक कर दिया गया। भट्टी की यातनाओं का कष्ट अनिर्वचनीय है। मैं भय से पानी पानी हो गया और अपनी मृत्यु निकट आई जान थर-थर कापने लगा, किन्तु प्रत्येक आपत्ति के पश्चात शान्ति का आ जाना स्वभाविक है। कारीगरों ने मुझे लम्बे-लम्बे पतलानों में डालकर ठण्डा कर दिया। अब मैं छड़ों की आकृति में बदल गया और मेरा नाम चादी रख दिया गया।

भारत गवर्नमेण्ट ने उन छड़ों को खरीद लिया और बम्बई टकसाल में भेज दिया। वहा फिर दुबारा मेरी अग्नि परीक्षा की गई, जिसमें मुझे पुन: अग्नि का ताप सहना पड़ा। मेरे गोल-गोल टुकड़े काटकर मुझे एक मशीन के अन्दर दबाया गया, जिसके एक तरफ छटवें जोर्ज की मूर्ति का टप्पा था और दूसरी तरफ मेरे निर्माण की तिथि का टप्पा था। बस मेरी स्त्री-सज्ञा छूट गई और मैं रुपया नाम से पुकारा जाने लगा। इस समय मेरी चमक-दमक और मधुर ध्वनि बड़ी ही अनूठी है।

मेरी स्त्री-सज्ञा छूटते ही मुझे सैर सपाटे की सूझी। मैं अपने सहस्रों साथियों के साथ इधर से उधर भारतवर्ष की सैर करता फिरा। कभी दिल्ली गया, कभी लाहौर और कभी शिमला गया, कभी मद्रास।

तात्पर्य यह है कि भारत के कोने-कोने में घूमा। देशाटन का खूब आनन्द लिया। प्रकृति के बडे-बडे मनोहर दृश्य देखे। कभी महलों में रहा तो कभी फकीर की गुदड़ी में। कभी अपने स्वामी के साथ सिनेमा देखने गया तो कभी कुतुब की लाट देखने। कभी गवर्नमेण्ट ट्रेजरी में रहा तो कभी वकील साहब के बटुए में। कभी महाजन की थैली में रहा तो कभी बाबू साहब की जेब में।

प्रतिष्ठा कराता हूँ। मैं मनुष्यों का सर्वस्व हूँ। मैं उनका प्राण हूँ और मैं उनको जीवन दान करता हूँ। सब मेरी कृपा-कोर को सदैव लालायित रहते हैं।

इतने सब गुणों का भण्डार होते हुए एक चञ्चलता के कारण मैं बड़ा दुःखी हूँ, अब इधर-उधर नहीं जाता। इसलिये अब यही इच्छा होती है कि कहीं किसी पतिव्रता स्त्री के सिंदूर की सुन्दर डिबिया में सदैव के लिये विश्राम करूँ। शायद वह मुझे अपनाये और मेरी दर दर भटकने की आदत को छुड़ा दे।

प्रदर्शिनी

आजकल इस प्रकार के मेले जिनमें कला-कौशल की वस्तुओं के नमूने दिखलाये जाते हैं, प्रदर्शिनी के नाम से पुकारे जाते हैं। प्रदर्शिनियों में प्रायः नये-नये आविष्कार प्रकाश में आते हैं। आश्चर्यजनक और असाधारण वस्तुएँ ऐसे ढङ्ग से प्रदर्शित की जाती हैं, जिनसे जनता को बड़ा आश्चर्य और कौतूहल होता है। हमारे समस्त छोटे-बड़े मेले प्रदर्शिनियों के ही रूपान्तर मात्र हैं। हमारे यहां प्रदर्शिनियों का बड़ा चलन था, जिनमें बड़ी बड़ी प्रतियोगितायें होती थीं। आविष्कारकों को ऊँची पदवियां और पुरस्कार दिये जाते थे, किन्तु विदेशी जातियों के अनवरत आगमन ने तथा जातियों के सम्मिश्रण ने इन प्रदर्शिनियों का रूप रङ्ग बदल दिया। राष्ट्रीय गवर्नमेण्ट के अभाव में इन प्रदर्शिनियों में कोई आकर्षण न रहा, न विदेशी सरकारों ने इसकी चिन्ता ही की। अतः हमारी प्रदर्शिनी मेलों के रूप में आज तक जीवित रह रही हैं, जिनका

रूप हम नित्य देखते हैं। उनमें केवल धार्मिकता ही प्रधानित रह गई है। वर्तमान काल की प्रदर्शिनियों का जन्म यूरोप की तरह अनुभव में हुआ है। अतः इनमें पाश्चात्य तत्त्व और तड़क-भड़क को अधिक स्थान दिया गया है। संसार का सब प्रथम प्रदर्शिनी इंग्लैण्ड में सन् १८५१ ई० में हुई थी। संसार में अब मुमायशों का प्रचार बढ़ता ही जाता है। भारतवर्ष में भी प्रत्येक वर्ष सहस्रों प्रमुख स्थानों में प्रदर्शिनी होती है। सन् १९११ ई० में इलाहाबाद में समस्त संसार की प्रदर्शिनी हुई थी जिसमें संसार भर के कला-कौशल का प्रदर्शन हुआ था।

प्रदर्शिनियों से कला-कौशल की उन्नति होती है। कारीगरों को नये-नये डिजाइन और नमूने देखने को मिलते हैं। वे वैसे ही डिजाइन और नमूने बनाने का प्रयत्न करते हैं। सर्वोत्तम कला पर पुरस्कार का विधान होता है, अतः प्रतियोगिता में जीतने वाले आविष्कारक का उत्साह खूब बढ़ता है। इन परस्पर की प्रतियोगिताओं से व्यापार और कला-कौशल में उन्नति होती है।

प्रदर्शिनियों में सब वस्तुएँ बड़े आकर्षक ढङ्ग से सजाई जाती हैं। उनके रखने और प्रदर्शित करने में बड़ी बुद्धिमत्ता और चतुराई से काम लिया जाता है। बड़े २ कलाकारों को सम्मिलित किया जाता है। प्रत्येक पारितोषिक दिये जाते हैं। व्यवसायियों और दुकानदारों को पर्याप्त सहायता में दीक्षान्त दिया जाता है जिससे उनका माल अधिक से अधिक परिमाण में बिके। आविष्कारकों को उत्साहित करने में पूरा पूरा ही अवसर दिया जाता है। वर्तमान सरकार का स्वदेशी नियमों के कारण प्रदर्शिनियों की मान्यता कई गुनी बढ़ गई है। जो सरकारें प्रदर्शिनियों को प्रोत्साहन देती हैं, वास्तव में वही राष्ट्र की कला कौशल को उन्नति देती हैं।

भारतवर्ष में प्रदर्शिनियों का बड़ी अभाव है। वर्तमान गवर्नमेण्ट हमारी प्रदर्शिनियों को जितनी चाहिये, उतनी सहायता नहीं देती। राष्ट्रीय सरकारें अपनी कला-कौशल की अधिक चिन्ता करती हैं। विदेशी सरकारों का दृष्टिकोण अपनी जेब भरना और विजित जाति को गुलाम बनाये रखना ही है। विदेशी गवर्नमेण्ट होने के कारण हमारा कला-कौशल और उद्योग-धन्धे सब नष्ट हो गये हैं, उनको पुनरुत्थान देने और जीवित करने के लिये सरकार का सहयोग आवश्यक है। सरकार का सहयोग तब तक सम्भव नहीं, जब तक कला-कौशल सम्बन्धी कोई कानून पास न हो जाये। विगत सन १९३७ ई० जब राष्ट्रीय सरकारों की भारत में स्थापना हुई थी, तब राष्ट्रीय सरकारों ने कला कौशल को उन्नति देने के लिये पर्याप्त धन व्यय किया था, किन्तु उनकी समस्त योजनायें केवल कल्पना की वस्तु रह गई।

भारत का भाग्योदय हो और भारतीय नवयुवकों में कला-कौशल और उद्योग-धन्धों की रुचि पैदा हो, देश में राष्ट्रीय सरकार बनें, राष्ट्रीय सरकारें अपनी अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कला कौशल को उन्नति देने के लिये प्रदर्शिनियों का आयोजन करें, तब ही देश का भला है।

आदर्श-जीवन

मानवी शक्तियों को विकसित कर, समाज में समता का व्यवहार रख शारीरिक, मानसिक और नैतिक उन्नति करना आदर्श जीवन है। अपने धर्माचार्यों के बनाये हुए आर्य-ग्रन्थों के नियमों के अनुसार आचरण को रखना और महापुरुषों के आचरण के अनुकूल अपने आचरण को

कमाना आदर्श जीवन की गणना में आता है। आदर्श-जीवन में आज्ञा-पालन, नम्र व्यवहार, सहनशीलता, वृद्धों के प्रति सम्मान के भाव रखना मुख्य बात है। इन गुणों से परिपूर्ण जीवन ही एक अनुकरणीय जीवन है। इसलिये सदाचार के बिना जीवन में कोई आकर्षण नहीं रहता। आदर्श-जीवन में स्त्री को वासना-तृप्ति का साधन नहीं माना जाता वरन् स्त्री को आध्यात्मिक उन्नति में सहायता पहुँचाने का साधन माना जाता है।

श्रेष्ठ पुरुषों का कर्तव्य है कि वह आरोग्य रहते हुए अपना अपने परिवार का और अपनी समाज का पालन यथाशक्य करें। जीवन को आहार-विहार के उचित नियन्त्रण में रक्खें। भोजन को जीवित रखने का साधन समझें, भोजन ही के लिये जीवित न रहें। प्रत्येक कार्य के लिये समय निर्धारित करें और समय के लिये कार्य निर्धारित करें। समय का एक क्षण भी व्यर्थ खोना महान् पतन समझें। शान्त, चरित्र और नेक कार्यों से उपार्जित धन से ही अपना जीवन यापन करें। क्योंकि पाप कर्म से उपार्जित किया हुआ धन पुण्य संचित धन को भी ले डूबता है। बेईमान और झूठ मनुष्य इस संसार में सिर ऊँचा उठा कर नहीं चल सकते। सच्चा धर्म मानव-जाति से प्रेम और सहानुभूति की शिक्षा देता है। आदर्श जीवन का प्रधान उद्देश्य सेवा ही होना चाहिये।

सत् मनुष्यों का अधिक समय ईश्वर-आराधना और लोक सेवाओं में व्यतीत होता है। यह दोनों क्रियाशील वृत्तियां उनके हृदय को अपार शान्ति देती हैं। सेवा-भाव के कारण नित्य नवीन स्फूर्तियों का जन्म होता है जो जीवन को ऊँचे आदर्शों की ओर अग्रसर करता रहता है।

पारिवारिक जीवन में स्वार्थवाद ही प्रधान रहता है, किन्तु परिवार का स्वार्थ त्यागकर जगत को भाई बनाने की प्रधानता आदर्श-जीवन का लक्ष्य है। भद्र व्यक्ति मन, वचन, कर्म से कभी किसी को दुःख नहीं देता, वरञ्च वह परार्थ भावना से प्रेरित होकर अपने को स्वय सङ्कट में डालने को प्रस्तुत रहता है। सिद्धान्त है कि परिवार को प्रसन्न किये बिना कोई प्रसन्न नहीं रहता। यह सारा जगत हमारा परिवार है। परिवार का प्रत्येक व्यक्ति हमारा बन्धु और सखा है। अतः विश्व के किसी भी व्यक्ति को निराश करना और दुःख देना सच्ची अहिंसा नहीं है। समाज की सच्ची सेवा करना ही ईश्वर की सच्ची सेवा करना है।

ऐ आदर्श जीवन के अभिलाषियो! समाज तुम्हारा आदर्श नहीं है, वरञ्च तुम समाज के आदर्श हो। मानवी जीवन में सादगी, सहिष्णुता, स्वावलम्बन और उच्च विचार ऐसे गुण हैं, जो मनुष्य को ऊँचा उठाते हैं। समाज तुम्हारे चरित्र से अलंकृत हो, समाज तुम्हें पाकर अपने को धन्य समझे, समाज तुम्हारे आचरण को अपना आदर्श बनाये, तुम्हारे निकट ऊँच-नीच की भावनायें न जड़ जमा सकें। समाज का प्रत्येक व्यक्ति समान है और समान अधिकार रखता है, यही भावना सदैव तुम्हारे हृदय में जागरूक रहे। समाज तुम्हें प्राणों के समान प्रिय हो और तुम समाज के प्राण-प्रिय हो। आदर्श-जीवन के लिये ऐसे ही विशेष गुण अपेक्षित हैं, जिनका ऊपर वर्णन किया गया है। संसार के महा-पुरुष इन्हीं सिद्धान्तों पर चलने के कारण आज तक पूजे जाते हैं। वर्तमान युग में महात्मा गांधी का जीवन आदर्श-जीवन कहा जा सकता है।

अपनी करनी पार उतरनी

प्रत्येक कार्य की सिद्धि अपने उद्योग से होती है, दूसरों का आसरा तकने से नहीं होती।

प्रत्येक मनुष्य अपने काम की अधिक चिन्ता रखता है अपेक्षाकृत दूसरे के काम के।

बचपन की घड़ियों से ही मनुष्य को स्वावलम्बन की ओर अग्रसर रहना चाहिये। कठिन परिश्रम और घोर विपत्तियों का सामना करने के लिये सदैव प्रस्तुत रहना चाहिये। यदि तुमने समय खेल-कूद में गँवाया न किया नहीं, न उद्यम सीखा और न दुनिया के रंग-ढंग देखे तो यह बोझ अचानक तुम्हारे सर पर तोड़ देगा। किन्तु यदि तुम्हारा आचरण दृढ़ है तो तुम भारी से भारी बोझ को भी सुगमता से उठा सकते हो।

संसार में स्वार्थपरता का बोलबाला है। शक्तिशाली अपने से निर्बलों को अपना शिकार बनाते हैं। इस आचरण ने समाज में अशान्ति उत्पन्न करदी है। मनुष्य का परम कर्तव्य है कि वह इस प्रकार के आचरण से घृणा करे और समाज में समता के भावों का प्रचार करे। संसार एक समुद्र के समान है उसको बिना शक्ति या अवलम्बन के पार नहीं कर सकते। पराश्रय-सेवी व्यक्ति इधर उधर मुँह ताकते हैं और बीच धार में अपमानित और तिरस्कृत हुआ करते हैं।

मनुष्य को अपने निर्वाह के लिये दृढ़ता के साथ प्रयत्न करना चाहिये। पाठशाला का थोड़ा परिश्रम सुव्यवस्था का आत्म-ज्ञान विपत्ति का थोड़ा धैर्य और चरित्र की शुद्धि यह सब मनुष्य को उस महासागर के पार करने में अवलम्बन का काम देते हैं।

सत्संग

(१) प्रस्तावना जिन लोगों के साथ रहने से लोक परलोक सुधरे, उनके साथ रहना सत्सङ्ग कहलाता है। (२) सद्साहित्य और सज्जनों का सम्पर्क ये दो प्रकार का सत्सङ्ग है। (३) सत्सङ्गति हमें निम्न-लिखित वस्तु देती है —

सुख, शान्ति, आत्म सुधार, ज्ञान वृद्धि तथा अनुकरण करने की भावना जागृत होती है।

(४) उपसंहार—सत्सङ्ग से ही मनुष्य का जन्म सार्थक है। सत्सङ्ग ही उन्नति का द्वार है। पुस्तकों का सत्सङ्ग समय और स्थान की बाधा उपस्थित नहीं करता।

सकल स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिये तुला एक अङ्ग।
तुले न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्सङ्ग॥
तुलसी सङ्गति साधु की, हरै और की व्याधि।
ओछी सङ्गति क्रूर की, आठों पहर उपाधि॥

भारतीय किसान

सूर्य अग्नि वर्षा रहा है। पृथ्वी तवे के समान जल रही है। चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। पशु पक्षी गर्मी के ताप से आकुल हो ठण्डे स्थानों में जा छुपे हैं। छाया भी गर्मी की भीषणता को न सह सकी, वह सिमट कर वृक्ष के नीचे हो गई। इस गर्मी की भीषणता में जगत के समस्त प्राणी विश्राम कर रहे हैं, किन्तु अभागा किसान अब भी काम

में जुट हुआ है। गर्मी ने उसके शरीर को झुलस कर कोयला बना दिया है। आंखें बैठ गई हैं, मुख म्लान है, नंगे पैर और नंगे सिर हैं। तन पर कपड़े का नाम न था; केवल कमर में एक लँगोटी मात्र है। सारा शरीर पसीने से भीग रहा है किन्तु वह अपनी तपस्या को नहीं छोड़ता।

मध्याह्न का समय है। कृषक-बाला रोटियां लेकर खेत पर आ रही है। उसके बच्चे भी साथ-साथ आ रहे हैं। किसान अपनी अनवरत परिश्रम में संलग्न है। सुबह चार बजे का आया है किन्तु अब १२ बजे भी विश्राम लेने का नाम नहीं लेता। अपनी स्त्री को आया हुआ देखकर उसने हल थामा। रूखी रोटियां खाने लगा। वह नहीं जानता कि शहर में अनेक प्रकार की चटनी और तरकारियां खाते हैं। बेचारी कृषक-पत्नी भी अपने पतिदेव के हाथ बटाने में जुट गई। सूर्यास्त तक दोनों काम में ऐसे मस्त हो गये कि उन्हें अपने तन-बदन की सुध न रही।

किसान का जीवन बड़ा कष्टमय है। न खाना है न कपड़ा है। न बचपन की सुव्यवस्था है। उसकी पैदावार सिकुड़ती जाती है। कर्ज के बोझ से दबा जा रहा है। न उसके पास वहाँ गायें हैं बच्चों को मक्खन है। न मनोरञ्जन का कोई साधन है। रात-दिन महाजन और जमींदार की लाल-लाल त्योरियां उसे बेहाल करे रहती हैं। कारिन्दे की बेगार, पटवारी की रिश्वत, पुलिस वालों की गालियों की बौछार उसके नाकों दम किये हुए रहती है।

कभी जमींदार का तगादा, कभी महाजन की कुर्की, कभी कारिन्दे की धमकी, सच देखो तो बेचारा किसान सदा परेशानियों का शिकार रहता है। हाँ, जब वह अपनी लहलहाती खेती को देखता है तो उसके

आनन्द का पारापार नहीं रहता। उसकी चिन्तायें थोड़ी देर को दूर हो जाती हैं। उसके आनन्द की पुनरावृति एक बार तब होती है, जब उसका खेत पककर तैयार हो जाता है। सहस्रों याचक उसे चारो ओर से घेर लेते हैं उस समय याचकों को देते-देते उसकी उदारता की तृप्ति नहीं होती। धन्य उदारता की साक्षात मूर्ति किसान धन्य।

भारत का किसान ससार के किसानों से अधिक दुःखी है। इसका कारण उसका आलस्य, निरुद्यमता और खेती का वैज्ञानिक रीति से न करना है। हमारा किसान खाद का प्रयोग बिलकुल नहीं जानता। गोबर जिससे उत्तम खाद बनता है, ईंधन की भाति जला दिया जाता है। हड्डी का खाद जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है, बिलकुल व्यवहार में नहीं आता। वैज्ञानिक औजारों का प्रयोग हमारे किसान जानते ही नहीं। सिंचाई के वही पुराने बाबा आदम के जमाने के साधन काम में लाये जा रहे हैं, जिनसे कुछ भी लाभ नहीं होता। किसान आसमान की ओर वर्षा का आसरा ताकता रहता है। प्राय आये वष वर्षा का अभाव रहता है, बड़े-बड़े सङ्कटों का सामना बेचारे किसान को करना पड़ता है। जहां ससार के किसान अपना ऐश्वय और विलासमय जीवन व्यतीत करते हैं, वहा भारत का किसान तन ढँकने को वस्त्र और पेट की क्षुधा निवारण करने के लिये अन्न तक नहीं पाता।

हमारे किसान का जीवन इस कारण भी सङ्कटमय रहता है कि उसका अधिक समय बेकारी में व्यतीत होता है। साल में कई महीने वह बेकार रहता है। यदि उसकी बेकारी के समय को लगाने के लिये कुछ

उद्योग-धन्धों का प्रबन्ध हो जाय तो बहुत कुछ उनकी दशा सुधर सकती है। इस प्रकार उद्योग-धन्धों को पुनः जीवित कर देने से किसान समस्त संख्या में अपने को आगे बढ़ा सकता है।

अविद्या, कूप-मण्डूकता और निरक्षरता हमारे किसान को पनपने नहीं देते। अशिक्षा उसकी मानसिक शक्तियों को विकसित नहीं होने देती। वह संसार की परिस्थितियों से बिलकुल अपरिचित होता है। कारिन्दा, पटवारी, चौकीदार, सिपाही, जमींदार और मुखिया उसकी अज्ञानता से लाभ उठाते हैं। उसे मनमाना लूटते-खसोटते हैं। हिसाब किताब न जानने के कारण महाजन लोग उसे खूब उल्लू बनाते हैं। महाजन उसे महँगा देता है और उससे सस्ता लेता है।

ग्राम के लोग ईर्ष्या के शत्रु हैं जिनके वशीभूत होकर किसानों में लड़ाई झगड़े बहुत होते हैं। मुकदमेबाजी बेहद बढ़ गई है जिन पर किसानों का अपरिमित व्यय होता है। अशिक्षा के कारण किसान बड़ा अदूरदर्शी रहता है। वह मरनी, करनी और विवाह आदि अवसरों पर अनाप-शनाप व्यय करता है जिसके कारण वह ऋण-ग्रस्त हो जाता है और आजीवन दुःखी रहता है।

किसान का भविष्य बड़ा अन्धकारमय है। इसकी दयनीय दशा पर नेताओं को विचार करना चाहिये।

———

संतोषी सदा सुखी

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—सतोष की व्याख्या। (२) सतोष की महिमा। (३) कायरता सतोष का रूप नहीं हो सकती। (४) आलस्य और उसकी हानिया। (५) अभिलाषायें और ज्ञान शक्तिया। (६) सेवा लोकोपकार और विद्योपार्जन में असतोष हितकर है। (७) उपसहार—हमारा कर्तव्य है कि सतोष को हाथ से न जाने द।

सन्तोष और हम

अपने परिश्रम और प्रयत्नों से जो प्राप्त हो उसी पर प्रसन्न रहना सतोष है, सतोष में अनाधिकार चेष्टायें, व्यर्थ अभिलाषायें कभी नहीं होतीं। किसी से मांगना अथवा किसी काम की सफलता की धारणा पहले से बना लेना सतोष की गणना में नहीं आता। सतोष में व्यर्थ के वादविवाद, अनर्गल प्रलाप को कोई स्थान नहीं है, ईर्षा और कपट तो सतोषी के यहाँ पैर ही नहीं जमा सकते, हाँ निर्भयता और निश्चिन्तता सतोषियों के हृदय में निवास करती है, कुबेर का कोष भी सतोषी को विचलित नहीं कर सकता। झूँठी खुशामद से सतोषी दूर भागता है। सुरम्य भवन, आकर्षक वस्त्राभूषण नाना प्रकार के स्वादिष्ट मिष्ठान्न सतोषी के हृदय में परिवर्तन नहीं कर सकते, ऊँचे विचार और सादे जीवन के सिद्धान्त ही उसके सम्मुख रहते हैं। उसकी अभिलाषायें परिमित होती हैं। आलस्य उसके इधर उधर नहीं फटक सकता स्वार्थ भावना कभी उसके निकट नहीं आ सकती।

अपने ध्येय से विमुख रहने का नाम संतोष नहीं है, यह तो भीरुता और कायरता है। भाग्य के भरोसे बैठना संतोष की सीमा में नहीं आता। दैव दैव आलसी पुकारा, कायर मन का एक अधारा।

मनुष्य जीवन में निरुद्यम और आलस्य बड़े रोग हैं, जो मनुष्य इनके शिकार हो जाते हैं उनका संसार में कोई ठिकाना नहीं रहता। आलस्य ने बड़े बड़े विशाल साम्राज्यों को बात की बात में हाथ से खो दिया है, आलसी जीवन सदा नीरस होता है। उसके जीवन में कोई आकर्षण नहीं होता। उसे किसी काम में दिलचस्पी नहीं होती, वह जीवित मृतकवत् होता। किन्तु संतोषी के अन्दर इससे विपरीत गुण होते हैं। संतोषी का जीवन सुखद और शान्ति मय होता है। उसका जीवन सरस होता है, संसार के प्रत्येक पदार्थ उसके लिये आकर्षक होते हैं। वह सारा जगत उसकी क्रीड़ा भूमि है। सदैव मस्त रहता है, निष्काम भावना से प्रवृत्त होके सारे काम करता है। कुत्सित भावनायें उसके निकट नहीं आ सकतीं। लोभों से दूर भागता रहता है। लोभ कभी उस पर अपना अधिकार नहीं जमा सकता। संतोषी चक्रवर्तियों की अपने सामने चिन्ता नहीं करता। विश्वविजेता सिकन्दर ने डायोजिनीज से कहा कि तू मुझ से कुछ मांग। डायोजिनीज ने उत्तर दिया। "मुझे कुछ नहीं चाहिये।" सिकन्दर ने फिर उसे मांगने को कहा। किन्तु संतोषी डायोजिनीज ने गम्भीरतापूर्वक कहा "अब आप मेरे सामने से हट जाइये जिससे मेरी धूप आने में कोई बाधा न आये।" डायोजिनीज के इन वाक्यों ने सिकन्दर का नशा उतार दिया। और आश्चर्य करने लगा कि मैं विश्व विजय करके भी सन्तुष्ट नहीं हो पाया हूँ किन्तु

झोंपड़ी में निवास करने वाला यह डायोजिनीज़ मुझसे लाख गुना सन्तुष्ट और सुखी है। कितना अच्छा होता यदि मैं सम्राट के बजाय ऐसा सतोषी साधू होता ?

अत सतोष में स्वार्थ और वासना को कोई स्थान नहीं है, वास्तव में वासनाओं पर विजय ही जीवन पर विजय पाना है। जब वासनायें अन्तरमुखी हो जाती हैं तब इन पर विजय पाना बड़ा कठिन हो जाता है, अत इच्छा और वासनाओं पर सदैव नियन्त्रण रखना आवश्यक है। जिस व्यक्ति ने अपनी इन प्रबल वासनाओं पर अधिकार जमा लिया बस समझो उसने समस्त ससार के वैभव पर अधिकार जमा लिया।

मनुष्य अपनी इच्छाओं का दास है, जब इसकी इच्छायें तृष्णामयी हो जाती हैं तब इनका नियन्त्रण कठिन हो जाता है, उसके धैर्य और सतोष पहले से ही छूट जाते हैं। ससार की क्षण भगुरता जब तक हृदय में नहीं बैठती तब तक मनुष्य कस्तूरी के हरिण की भाँति वासनाओं के वशीभूत होकर इधर उधर भटकता रहता है। और उसको विनाशी (नाशवान वस्तुओं में ही आनन्द दिखलाई पड़ता है। अत आवश्यक है कि लौकिक पदार्थों में विराग उत्पन्न किया जाय। उनमें विशेष अनुराग न बढ़ाया जाय। मन की प्रगतियों पर नियन्त्रण रक्खा जाय। जहाँ जहाँ यह अधिक दौड़े वहाँ से इन्हें रोका जाय तो वासनाओं पर विजय पाना सभव हो जायगा, अन्यथा नहीं।

सांसारिक दु खों का कारण मन है। यदि मन को सतोष के पथ पर डाल दिया जाय तो बहुत कुछ शान्ति सम्भव है, मन को नियन्त्रित किये बिना शान्ति सम्भव नहीं है, संसार में जितने सयम, नियम,

व्रत, उपवास आदि मुख्य हैं। वह सब मन को नियन्त्रित करने के साधन हैं। अतः आवश्यक है कि अपने जीवन को संयम नियम आदि के नियमों से बांध दें और उन्हीं के तदनुकूल आचरण करने से बहुत कुछ सफलता प्राप्त हो सकती है,

सन्तोष की भी एक सीमा होती है। देश जाति और समाज का जहाँ तक प्रश्न है वहाँ तक मनुष्य संतोष को धारण करे। किन्तु ज्ञान परोपकार और विनोदवर्धन के सम्बन्ध में असंतोष की मात्रा ही अधिक हितकर है यही दशा 'स्वतन्त्रता प्राप्ति की अभिलाषा है वहाँ भी सन्तोष की सीमाओं को उल्लंघने में ही अधिक श्रेय है।

मनुष्य जब आपत्तियों से घिर जाता है, विषम परिस्थिति उसे विवश करती है तब वह घबराकर अथवा कातर बना बैठता है तब उसे कायरता के नाम से पुकारा जाता है। सन्तोष तो जीवन का बड़ा ऊँचा आदर्श है। जो बड़े तप और त्याग के पश्चात प्राप्त होता है अतः प्रत्येक मनुष्य मात्र का कर्तव्य है कि वह जग में निर्वाह करता हुआ अपने जीवन को संयमी बनावे। चित्तवृत्तियों पर पूरा नियन्त्रण रखता हुआ परिश्रम शील रहे और सन्तोष को अपने हाथ से न जाने दे। तब ही मनुष्य जीवन सार्थक हो सकता है। अन्यथा नहीं किसी ने सच कहा है:—

> 'गोधन गज धन बाजि धन और रतन धन खान।
> जो आवे संतोष धन सब धन धूरि समान॥

बालचर या बॉय-स्काउट संस्था

विचार-तालिकायें:—

(१) प्रस्तावना—बालचर संस्था का जन्म और क्रमशः विकास। (२) बालचर संस्थाओं की सर्व प्रियता। (३) बालचर और उनका यूनीफोर्म। (४) बालचर शिक्षा-शिविर। (५) बालचरों के आवश्यकीय कर्तव्य। (६) बालचरों की सेवायें और देश की प्रगति में उनका स्थान। (७) उपसंहार—बालचर संस्थाओं का भविष्य।

हमारे देश में बालचर संस्था एक बिलकुल नई चीज है। बीसवीं शताब्दि से पहले दुनियां में कहीं इसका नामोनिशान तक न था। बालचर संस्था का जन्म दक्षिणी अफ्रीका में बोअर युद्ध के समय हुआ। इसके जन्म दाता सर रोबर्ट ब्रैडन पावल से पहले किसी के मस्तिष्क में यह बात नहीं आई थी कि देश के छोटे छोटे बच्चे भी कोई सेवा का ऊँचा काम कर सकते हैं। सर रौबैड बेडुन पावल के हृदय में यह विचार सन् १९०० ई० में उस समय उत्पन्न हुआ जब बोअर युद्ध में सेवकों की कमी पड़ रही थी। सहसा उनका ध्यान अङ्गरेज़ नवयुवक बालकों पर गया उन्होंने बालकों को संगठित किया और उनसे सेवा का काम लिया। पहले पहल जब बालचर संस्था संगठित हुई इससे गुप्तचर और स्वयं सेवक का काम लिया गया। जब बोअर युद्ध समाप्त होगया और बेडन पावल के पास कोई काम करने को न रह गया तब उन्हें यह बात सूझी कि यह बालचर संस्थायें शान्ति काल में भी अपनी सेवा का काम कर सकती हैं। सर बेडन पावल ने

बड़ी दूर दर्शिता से काम लिया। उन्होंने लोगों मेलों इत्यादि के अवसरों पर अथवा महामारी (प्लेग) आदि रोगों के फैलने पर बालचर संस्थायें अच्छा काम कर सकती हैं। अतः उन्होंने बालचर संस्था का प्रचार करना आरम्भ किया इस काम में उन्हें बड़ी सफलता मिली। थोड़े दिनों में संसार के सभी राष्ट्रों ने बालचर संस्थाओं को अपना लिया।

हमारे देश में बालचर संस्थाओं का जन्म विगत यूरोपियन महा समर के समय हुआ। श्रीमती एनी बेसेन्ट को भारतीय बालचर संस्थाओं को जन्म देने का श्रेय प्राप्त हुआ। इसका सब प्रथम कार्य भारतवर्ष में कुम्भ के मेले पर हुआ। अब तो देश का कोई स्कूल कोई कालेज और कोई संस्था ऐसी नहीं जहां पर बालचर संस्था न हो, भारत के सब ग्रा मों में बालचर संस्थाओं का प्रचार होगया।

बालचर संस्थाओं का संगठन ढङ्ग सैनिक पर होता है। इस संस्था में १ वर्ष से कम के बच्चे शामिल नहीं हो सकते। बालचरों के दस नियम हैं। जो बड़ी कठिनता से बालकों से पालन कराये जाते हैं। बालचर राजा ईश्वर और देश के प्रति स्वमिभक्त रहने की शपथ लेते हैं। दूसरों की सेवा करना बालचर संस्था का प्रधान उद्देश्य होता है। जब बालक ईश्वर, राजा और देश के प्रति स्वामिभक्त रहने की शपथ ले चुकता है और सेवा को अपने जीवन का प्रधान उद्देश्य बना लेता है तब उसको किसी पैट्रोल (Potrol) में भरती कर लिया जाता है। पैट्रोल आठ आठ बालचरों का होता है जो एक नायक (Potrol-leader) के अनुशासन में होता है। चार से अधिक पैट्रोल का एक ट्रूप (Troop) होता है। ट्रूप का

नेता ट्रूप लीडर कहलाता है। प्रत्येक ट्रूप के ऊपर एक स्काउट मास्टर होता है। स्काउट-मास्टर "डिस्ट्रक्ट-स्काउट कमिश्नर" के अनुशासन में कार्य करते हैं।

बालचरों को कुछ काल तक शिक्षा दी जाती है। जिसमें उन्हें बालचरों के नियम और सिद्धान्त बताये जाते हैं। साथ ही रचनात्मक कार्य की भी शिक्षा दी जाती है जैसे गाटें लगाना, पट्टी बाधना, इथगा बनाना, और सिगनल आदि देना। बालचरों की कोमल पद, भुवपद आदि परीक्षायें भी होती हैं जिनको क्रमश बालचरों का पास कर लेना बड़ा ज़रूरी है। अपनी चतुराई और बुद्धिमत्ता से कोई भी बालचर एक दिन चीफ स्काउट की पदवी तक पहुँच सकता है। इसके पश्चात बालचरों को कठिन कामों की शिक्षा दी जाती है। साथ ही अनेक प्रकार के खेल भी सिखाये जाते हैं। जो मनरञ्जन के लिये आवश्यक हैं।

बालचरों को यूनीफोर्म में अनिवार्यत रहना पड़ता है। सब की पोशाक एक सी रहती है, टोपी या साफा बाधना आवश्यक है। एक लाठी, एक सीटी और झण्डी सबके पास होती है। कभी कभी बालचर आवश्यक औषधिया भी अपने साथ रखते हैं।

सेवा-करना बालचरों का उद्देश्य है। वह निर्बल, दुखी, अनाथ, और अबलाओं की सेवा करती हैं। दूसरों की जीवन रक्षा में अपने प्राण तक दे देने में बालचर अपना गौरव समझता है। बालचर सदैव अपने कर्तव्य पालन में मगन रहता है वह कभी किसी की पर्वाह नहीं करता। बालचर सदैव अपने हृदय को पवित्र और दयालु रखता है।

भ्रातृ भाव की ही मनोवृत्ति रखता है। निस्सन्देह बालचर संस्थायें देश के जीवन को परिवर्तन करने में पूरी सफल हो सकती हैं।

बालचरों के कर्त्तव्य और सेवायें मेले माघ और मेलों के अवसरों पर ही देखे जाते हैं। कहीं बालचर पानी बाँट रहे हैं कहीं खोये हुये बच्चों को उनके माँ बाप के पास पहुँचा रहे हैं। कहीं आग बुझा रहे कहीं डूबते हुओं को निकाल रहे हैं। कहीं लड़ाई के बीच शान्ति स्थापित कर रहे हैं। अभिप्राय यह है कि बालचर किसी न किसी रूप में मानव जाति की सेवा करने को उद्यत रहते हैं। यही कारण है कि बालचर संस्थायें इतनी शीघ्र सर्व प्रिय बन गई हैं। बालचर संस्थायें मानव-जाति की सेवा तो करती ही हैं साथ ही बालकों का आचरण और सेवा धर्म बहुत ऊँचे दरजे को पहुँच जाता है जिससे उन्हें उत्तम नागरिक बनने में सहायता मिलती है।

स्वतन्त्र राष्ट्रों को ऐसी संस्थाओं की बड़ी आवश्यकता है। ये संस्थायें राष्ट्र-निर्माण कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाती हैं। इन संस्थाओं से व्यक्ति और समाज दोनों का कल्याण होता है। बालचर संस्थाओं का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। हमारी वर्तमान गवर्नमेन्ट भी बालचर संस्थाओं को पर्याप्त सहायता दे रही है।

हम भारत के प्रत्येक नर नारी से विनती करते हैं कि वे अवश्य अपने बच्चों को बालचर संस्थाओं में प्रविष्ट करावें।

किसी मेले का वर्णन-गढ़मुक्तेश्वर का मेला

विचार-तालिकायें :—

(१) मेले का उद्देश्य और आशय। (२) गढ़मुक्तेश्वर के मेले की तैयारी और स्थिति (३) मेले का मराय, रेलों का प्रबन्ध। (४) घाट पर ठहरने का प्रबन्ध। (५) अनेक संस्थायें और उनका प्रचार। (६) मेले का मनोहारी दृश्य। (७) मेले के आमोद प्रमोद। (८) आपत्तियां और घर वापिसी (९) उपसंहार—मेलों की उपयोगिता।

भारतवर्ष में मेलों का बहुत प्रचार है। मेलों से अभिप्राय बहुत से आदमियों का किसी विशेष स्थान पर एकत्र होना है। मनुष्य किसी न किसी उद्देश्य से इकट्ठे होते हैं। वे या तो किसी देवी देवता की पूजा, गंगास्नान अथवा व्यापार के लिये एकत्र होते हैं, किसी किसी स्थान पर किसी महापुरुष की स्मृति कायम रखने के लिये भी एकत्र होते हैं। मेले प्राय निश्चित तिथि और नियत स्थान पर होते हैं, कुछ मेले एक महीने बाद होते हैं, कुछ ६ महीने बाद और कुछ एक एक वर्ष बाद होते हैं, और कुछ ६ वर्ष बाद होते हैं जिन्हें अर्धकुम्भी कहते हैं और कुछ मेले १२ वर्ष बाद होते हैं। जिन्हें पूर्ण कुम्भ के नाम से पुकारते हैं।

गढ़मुक्तेश्वर का मेला गंगास्नान का एक धार्मिक मेला है, यह प्रतिवर्ष कार्तिकी के अवसर पर लगता है, उत्तर भारत में गंगा के किनारे के मेलों में यह मेला बहुत बड़ा और सुन्दर होता है। इस अवसर पर और भी मेले होते हैं किन्तु दूसरे मेलों में वह बात नहीं जो गढ़मुक्तेश्वर के मेले में है।

गढ़मुक्तेश्वर ई० आई० रेलवे स्टेशन पर दिल्ली से ६० मील के फासले पर है। यहां राजा नृग का कुआं है। इसी कुएं के कारण इस स्थान का इतना मान है। राजा नृग ब्राह्मणों के शाप से गिरगिट बन गया था द्वापर में श्रीकृष्ण द्वारा उसका उद्धार हुआ। इसी की पुण्य स्मृति में यहां कार्तिक शुक्ला एकादशी से कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा तक मेला लगता है।

मेले के दिनों में गढ़मुक्तेश्वर की छवि देखते ही बनती है। चारों ओर से दुनिया उमड़ पड़ती है लाखों यात्रियां लाखों इक्के तांगे और इस से ज्यादा और आदमियों का ऐसा ठेलम ठेल लग जाता है कि तख्तों पर तिल रखने को ठौर नहीं मिलती। यह मेला लगभग ६-७ मील चौड़ा ५-६ मील की लम्बाई में गंगा के किनारे किनारे लगता है। बाजार बाकायदा सड़कें निर्माण की जाती हैं। सड़क के दोनों पक्षों पर दूकानें सजती हैं और स्थानों में जनता ठहरती है। तमाम मेला हल्कों में विभाजित कर दिया जाता है जिससे इन्तज़ाम करने और जनता आमद में कोई बाधा न आवे। लाखों तम्बू लाखों ढेरे की झोंपड़ियां बनी हुई दर्शकों का मन मोहती हैं। हल्कों के कोनों पर आमोद प्रमोद का प्रबन्ध रहता है। कहीं सिनेमा, कहीं नाटक और कहीं सरकस जनता के मनोरंजन करते हैं। पुलिस और सेवा-समितियों की तत्परता और संगठन आश्चर्य में डालती है।

यात्रियों के सुभीते के लिये मेले के अवसर पर यद्यपि स्पेशल गाड़ियों का प्रबन्ध रहता है। मगर तब भी यात्रियों में बड़ी भीड़ होती है। यात्रियों के समूह के समूह यात्रियों के डिब्बों पर टूटते हैं, सारी गाड़ी

मेले के यात्रियों से पट जाती है और कहीं एक इञ्च जगह नहीं रहती। यही दशा सड़कों और मोटर अड्डों पर होती है। कुछ लोग पैदल ही जाते हैं, मार्ग में स्त्रियां और पुरुष गंगाजी के गीत गाते जाते हैं। कुछ टोलियां 'गंगामाई की जय', कोई 'महादेव बाबा की जय' आदि के नारों से पृथ्वी को कँपा रही है। कोई टोली चुपचाप ही जा रही है। लाखों आदमियों की भीड़ बैलगाड़ियों में जा रही है। कुछ लारियों और तांगों पर सवार जा रहे हैं। जिधर देखो उधर अपार जन समूह टिड्डीदल की भांति उमड़ा चला जाता है।

गढ़मुक्तेश्वर में यह अपार जन समूह बर्साती नदियों की भांति भर जाता है। स्टेशन से उतरते ही गढ़मुक्तेश्वर के अनूठे दृश्य दिखलाई पड़ने लगते हैं। चौड़ी चौड़ी झाऊ का निर्मित सड़कें दर्शकों का मन मोहती हैं। हमरा यात्रा सदर मजार के सदर दरवाजे पर समाप्त हुई। अब झाऊ की सड़क न थी। अब तो सुविस्तृत मेले की सड़कें थीं, जिनके दोनों तरफ बड़ी आकर्षक सिरकी और टेन्टों की दुकानें बनी हुई थीं। सड़कों पर अपार स्वच्छता थी। गैस की रोशनी का प्रबन्ध था। स्थान स्थान पर पुलिस और सेवा समितियों का प्रबन्ध था। यात्रियों के ठहरने के लाखों ही टेन्ट थे। सैकड़ों ब्राह्मणों की झोंपड़ियां थीं। कुछ लोग मैदान ही में अपना आसन जमाये हुये थे।

मेले में ठहरने के पश्चात हमारी टोली का प्रथम कार्य-यह हुआ कि पतित पावनी श्री गंगाजी में स्नान किया, गंगा अपने उज्ज्वल जल से कल कल-शब्द करती हुई बह रही थी। अपार जन समूह स्नान कर रहा था। हमारे साथियों में से दो एक तैरना भी जानते थे जबह

दूसरे लोगों को तैरते देख नदी में कूद पड़े। गंगा का दृश्य बड़ा मनोरम था। यात्री कुछ गोते लगा रहे थे। कुछ कपड़े बदल रहे थे। कुछ तैर रहे थे। कुछ किनारे पर बैठे सन्ध्या कर रहे थे, कुछ मछलियों को आटा खिला रहे थे। कुछ कीर्तन कर रहे थे कुछ ब्राह्मणों को भोजन करा रहे थे। कुछ गंगाजी को पुष्पांजलि दे रहे थे।

कुछ दीपक जला रहे थे कुछ तिलक लगा रहे थे। कुछ जय जयकार की ध्वनि लगा रहे थे कहीं गंगा की आरती उतारी जा रही थी, कहीं बच्चे चढ़ाने के उत्सव मनाये जा रहे थे। कहीं आर्य समाज के धर्मोपदेश हो रहे थे कहीं सनातन धर्म का प्रचार हो रहा था। कहीं धर्मोपदेश हो रहे थे। कहीं संकीर्तन द्वारा स्वर्ग को पृथ्वी पर लाया जा रहा था। जिधर निगाह जाती थी। उधर कोई न कोई पर्व ही से नजर नजर आ रहा था।

दिन का १ बज चुका था। भूख से पेट में चूहे कूद रहे थे। एक वैष्णवी भाषे में जाकर हम लोगों ने भोजन किया। भोजन से निश्चिन्त होकर हमारी टोली मेला देखने चल पड़ी। सड़कों में लगी हुई दुकानें बड़ी मनोहर लग रही थीं जिन के सजाने में दुकानदारों ने कमाल किया था। कहीं रेडियो बज रहा था, कहीं ग्रामोफोन का मधुर ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। कहीं भारतीय चित्र टंगे हुये थे कहीं मिठाइयों की भरमार थी। कहीं पुस्तकें बिक रही था। कहीं कपड़े बिक रहे थे। कहीं कंठी माला और पूजा की ही सामग्री बिक रही थी। हलवाई और खोंचे वालों की दुकान पर बड़ी भीड़ थी। दोपहर होने के कारण सब लोग कुछ न कुछ खाने को आतुर रहे थे। कहीं बाजीगर अपने हस्तलाघव

से दर्शकों को मोहित कर रहा था। वहां अपार भीड़ लग रही थी। एक जगह कुछ पादरी गीत गा रहे थे और अपने धर्म की पुस्तकें मुफ्त बांट रहे थे। आगे देखा कि आर्यसमाज का कैम्प लगा है, वहां पर भी व्याख्यान हो रहे हैं। एक स्थान पर एक प० जी रामायण की कथा सुना रहे थे।

सड़कों के चौराहों पर अनेक प्रकार के चर्खे मेरी गो राउण्ड, सर्कस आदि दिखाये जा रहे थे। कहीं पक्षियों के खेल थे। कहीं बाघ चीते दिखाये जा रहे थे। कहीं सिनेमा और नाटकों का आयोजन हो रहा था, कहीं सङ्गीत और नौटङ्की सुनाई जा रही थी। कहीं बाजों की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। कहीं कवि सम्मेलन हो रहा था और लोग कविता सुन सुन कर आनन्द में मस्त हो रहे थे। एक जगह कुश्तियों का दङ्गल हो रहा था। एक स्थान पर व्रजवासी लोग रास ही कर रहे थे।

मेले में सफाई, रोशनी जल और दवाइयों का काफी प्रबन्ध था। इसका सारा श्रेय डिस्ट्रिक्ट बोर्ड मेरठ को है। अब शाम के ७ बज चुके थे और हम थक भी काफी चुके थे। मैंने प्रस्ताव किया कि चलो डेरे में चलें किन्तु मेरा प्रस्ताव ठुकरा दिया गया और मित्र टोली एक सिनेमा घर में चली गई। वहां अछूत-कन्या नामी खेल हो रहा था। खूब ही आनन्द लिया। अब रात के ६॥ बज गये थे डेरे में आकर सो गये।

निस्सन्देह उत्तरी भारत में गढ़मुक्तेश्वर का मेला एक दर्शनीय वस्तु है। आप लोग भी एक बार अवलोकन कर अपनी अभिलाषा को पूरा कीजियेगा।

मानवी जीवन में मेलों का बड़ा महत्व है। मेलों के आयोजन से बड़े अनेक अनुभव प्राप्त होते हैं तथा श्रम की भी अभिव्यक्ति होती है। मनुष्य की जानकारी बढ़ती है और मनोरंजन होता है। इसी कारण से सब राष्ट्रों में मेलों का इतना मान है।

हिन्दी और उर्दू

हिन्दी और उर्दू दोनों एक ही भाषा हैं। केवल नाम और रूप का अन्तर है। जो लोग हिन्दी को भली भांति समझ लेते हैं उनको उर्दू समझने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। किन्तु समाज के सामने कठिनाई यह है कि हिन्दू लोग और विशेषकर पढ़ेलिखे लोग संस्कृत मय भाषा बोलते हैं अर्थात् साधारण भाषा में संस्कृत भाषा के कठिन शब्दों का प्रयोग करते हैं। ठीक यही दशा मुसलमान महानुभावों की है कि वे उर्दू में जान बूझकर अरबी फारसी के कठिन शब्दों का प्रयोग करते हैं। इसी विचार धारा से हिन्दी उर्दू की समस्या उत्पन्न होती है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पिछले १ वर्षों से हिन्दी का क्षेत्र बहुत बड़ा होगया है। भारत में १८ करोड़ जनता हिन्दी समझ और बोल लेती है। इतना प्रचार भारत में किसी प्रान्तीय भाषा का नहीं है। यदि राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयास किया जा सकता है तो हिन्दी को ही दिया जा सकता है।

हम अभी कह चुके हैं कि हिन्दी उर्दू दो भिन्न भाषायें नहीं हैं। दोनों का एक ही रूप है। दोनों का व्याकरण भी एक है। उर्दू का जन्म यद्यपि अरबी और ईरानी संस्कृति से हुआ है। ईरानी और

अरबी संस्कृति में उसने परवरिश पाई है किन्तु फिर भी उसमें विशुद्ध भारतीयता है। हमारी उर्दू को अधिक काल तक मुसलमान बादशाहों का संसर्ग करना पड़ा है। जिसके कारण उसमें एक विशेष नाजुकता (कोमलता) आगई है, ब्रिटिश काल में उर्दू कोर्ट लेंगवेज होने के कारण हिन्दू और मुसलमान दोनों द्वारा समान अपनाई गई। अत उर्दू बोल चाल की महत्वपूर्ण भाषा बन गई। फ़ारसी के बाद उर्दू को ही सर्व श्रेष्ठ भाषा होने का गौरव प्राप्त हुआ है।

उर्दू के साथ ही साथ ब्रजभाषा, अवधी और मैथिल का भी विकास हुआ। इन भाषाओं में भी एक से एक सुन्दर साहित्य का निर्माण हुआ। हिन्दी का वास्तविक विकास जब आरम्भ हुआ जब से वह धार्मिकता के भावों से छूटी। रसखान और जायसी जैसे महाकवियों ने बिना किसी धार्मिक भेद भाव राष्ट्रीय भावनाओं से उत्प्रेरित होकर जब अपने अपने महाकाव्य लिखे तब हिन्दी का वास्तविक विकास आरम्भ हुआ। जब तक देश में मुसलमानी शासनकाल रहा तबतक उर्दू को विदेशी भाषा समझा जाता रहा। किन्तु मुसलिम साम्रज्य के समाप्त होते ही यह भ वना दूर हो गई। १६ शताब्दी में खड़ी बोली साहित्यक रूप में आई।

अब उर्दू की स्थिति में बहुत बड़ा अन्तर आगया है। मुसलिम शासनकाल में उर्दू शासकों की भाषा थी। उसकी बराबरी में हिन्दी या कोई प्रान्तिक भाषा आही कैसे सकती थी। किन्तु उर्दू को यह गौरव केवल भाषा की दृष्टि से था साहित्य की दृष्टि से नहीं था। किन्तु उर्दू को अब सरकारी सहायता प्राप्त नहीं है। उर्दू के हिमायती बड़े बड़े शहरों में

अभी मौजूद हैं। इनमें मुसलमान अधिक तो हैं ही किन्तु कुछ कायस्थ और कश्मीरी लोग भी हैं। किन्तु इनकी संख्या और शक्ति दिन प्रति दिन घट रही है। यू. पी. प्रान्त में हिन्दी राजभाषा स्वीकृत हो चुकी है किन्तु व्यवहार क्षेत्र में अधिकतर उर्दू ही बरती जाती है। इस कारण कचहरियों में काम करने से हिन्दुओं को विवशतः उर्दू लिपि अपनानी पड़ती है।

हिन्दी और उर्दू में भाषा की दृष्टि से तो कुछ गम्भीर भेद नहीं है। किन्तु लिपि और संस्कृति का अत्यन्त बड़ा अन्तर है। हिन्दी देवनागरी लिपि के साथ भारतीय संस्कृति की परिचायक, उर्दू फारसी लिपि के साथ विदेशी संस्कृति को प्रमुख देती है। अतः हिन्दी और उर्दू की समस्या शब्द और लिपि द्वारा ही नहीं सुलझाई जा सकती वरन् संस्कृति के विभेद को सुलझाना बड़ा कठिन है। अब यह समस्या यहीं आकर रुक जाती है कि भारतीय जनता हिन्दी को अपनाये जो इसकी संस्कृति की परिचायक है अथवा उस भाषा को अपनाये जिसकी लिपि और संस्कृति इससे विरोधी है। ठीक तर्क तो यही है कि जनता को वही भाषा अपनानी चाहिये जिसमें राष्ट्रीय लिपि और राष्ट्रीय संस्कृति हो। हिन्दी को अपनाने से भारतीय जनता अपनी पुरानी साहित्यिक लिपि तथा संस्कृति के सम्पर्क में आ जाती है तथा दूसरी ओर भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओं के सम्पर्क में आती है जो नागरी लिपि में लिखी जाती हैं और उनमें विशुद्ध भारतीय संस्कृति विद्यमान है। फलतः उर्दू भाषा और लिपि को अपनाने से हिन्दू जनता अपनी संस्कृति से ही दूर न होगी वरन् आधुनिक भारत से भी।

आलस्य

विस्तृत-विचार-तालिकायें :—

आलस्य मानवी शक्तियों को कुण्ठित करता है। मनुष्य के शरीर के विविध अङ्ग काम न लेने की दशा में बेकार हो जाते हैं और आगे बढ़कर प्रयत्न करने पर भी उनमें क्रिया शीलता उत्पन्न नहीं होती। समाज मे मूर्खता, अल्पज्ञता, अविद्या और अकर्मण्यता केवल आलस्य के कारण प्रवेश करते हैं। समाज में विलासिता का जन्म और पराधीनता का अभ्युदय भी आलस्य ही के कारण हुआ है। मानव जीवन की रचना क्रिया-शील रहने के लिये हुई है। किन्तु पतित राष्ट्रों में इसके विपरीत आचरण ही में गौरव समझा जाता है। भारतवर्ष में तो यह लोकोक्ति पूर्णरूप से चरितार्थ होती है कि "जो काम न करे सोई अमीर" इस भावना ने ही देश को यह रूप दिखाये हैं जो आज देखने में आ रहे हैं।

"कादर मन का एक अधारा—दैव दैव आलसी पुकारा।" निस्सन्देह आलसी व्यक्ति भाग्य-वाद के भरोसे पर ही अपना समस्त जीवन नष्ट करता है। आलसी को जब कभी देखो वह अपने अमूल्य जीवन को व्यर्थ वाद-विवाद अथवा वितन्डा वाद ही में व्यतीत करता मिलेगा। यह नियम है कि जिन जातियों में रोग, विनाश, दरिद्रता और मलिनता आ जाती है। रोग, विनाश, दरिद्रता और मलीनता कुछ ऐसे सगो साथी हैं जो कभी अकेले साथ नहीं छोड़ते। ये किसी व्यक्ति या समाज के घर पदार्पण करेंगे तो साथ साथ और यदि प्रयाण करेंगे तो साथ

सब काम अपने हाथ से करते हैं, महात्मा गांधी अपने कपड़े अपने हाथ धोते हैं। किन्तु पाश्चात्य शिक्षा के रङ्ग में रंगे हुये हमारे ग्रेज्युयेट सुराही से गिलास में उडेलकर पानी पीने में अपनी मान हानि समझते हैं। तुलसीदास ने ठीक कहा है—"जाको प्रभु दारुण दुःख देहीं—ताकी मति पहले हर लेहीं।" ए भारत के भावी कर्णधारो, आलस्य को त्यागो और कर्मवीर बनो। स्वावलम्बन और सहिष्णुता को अपनाओ। रोग, शोक, दरिद्रता और आलस्य को अपने पास न फटकने दो। तब ही तुम सच्चे कर्मवीर कहला सकते हो। राष्ट्र तुम्हारी तरफ आँख फाड़ फाड़ कर देख रहा है। आओ आलस्य को ललकार बता बतादो। और कर्तव्य क्षेत्र में उतर कर अपना और समाज का कल्याण करो। भगवान तुम्हें क्षमता प्रदान करे।

कहानी-कैसे लिखनी चाहिये

सब से सुन्दर कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनो विज्ञान के सत्य पर हो। साधु पिता का अपने कुव्यसनी पुत्र की दशा से दुखित होना मनोवैज्ञानिक सत्य है। इस आवेश में पिता के मनोवेगों को चित्रित करना और तदनुकूल उसके व्यहारों को प्रदर्शित करना, कहानी को आकर्षक बना सकता है। बुरा आदमी भी बिलकुल बुरा नहीं होता। उसमें कहीं न कहीं अवश्य देवत्व छिपा रहता है, यह मनोवैज्ञानिक सत्य है। उस देवत्व को खोलकर दिखा देना सफल आख्यायिका लेखक का काम है। विपति पर विपति पड़ने से मनुष्य कैसा दिलेर हो जाता है, यहा तक कि बड़े से बड़े सङ्कट का सामना करने

के लिये ताल ठोंक कर तैयार हो जाता है उसकी सारी दुर्भावना भाग जाती है उसके हृदय के किसी गुप्त स्थान में छिपे हुये जौहर निकल आते हैं और हमें चकित कर देते हैं —यह मन वैज्ञानिक सत्य है। एक ही घटना या दुर्घटना भिन्न भिन्न प्रकृति के मनुष्यों के भिन्न भिन्न रूप से प्रभावित करती है,—इस कहानी में इसका सफलता के साथ चित्र खींचे तो कहानी अवश्य आकर्षक होगी। किसी समस्या का समावेश कहानी को आकर्षक बनाने का सबसे उत्तम ढंग है। जीवन में ऐसी समस्यायें नित्य ही उपस्थित होती हैं और उनसे पैदा होने वाला द्वन्द्व आख्यायिका को चमका देता है। न्यायकारी पिता को मालूम होता है कि उसके पुत्र ने हत्या की है। वह उसे न्याय की वेदी पर बलि कर दे या अपने जीवन सिद्धान्तों की हत्या कर डाले? कितना भीषण द्वन्द्व है। पश्चाताप ऐसे द्वन्द्वों का अक्षय स्रोत है। एक भाई ने दूसरे भाई की सम्पत्ति छल कपट से अपहरण करली है उसे भिक्षा माँगते देख कर क्या छली भाई को जरा भी पश्चाताप न होगा? अगर ऐसा न हो तो वह मनुष्य नहीं है।

उपन्यासों की भाँति कहानियाँ भी कुछ घटना प्रधान होती हैं कुछ चरित्र प्रधान। चरित्र प्रधान कहानी का पद ऊँचा समझा जाता है, मगर, कहानी में बहुत विस्तृत विश्लेषण की गुंजायश नहीं होती। यहाँ हमारा उद्देश्य सम्पूर्ण मनुष्य को चित्रित करना नहीं वरन् उसके चरित्र का एक अंग दिखाना है। यह आवश्यक है कि हमारी कहानी से जो परिणाम या तत्व निकले वह सर्वमान्य हो और उसमें कुछ बारीकी हो। यह एक साधारण नियम है कि हमें उसी बात से आनन्द आता है

जिससे हमारा कुछ सम्बन्ध हो। जुआ खेलने वालों को जो उल्लास और उन्माद होता है वह दर्शकों को कदापि नहीं हो सकता। जब हमारे चरित्र इतने सजीव और आकर्षक होते हैं कि पाठक अपने को उनके स्थान पर समझ लेता है, तभी उस कहानी में आनन्द आने लगता है। अगर लेखक ने अपने पात्रों के प्रति पाठक में यह सहानुभूति नहीं उत्पन्न करदी है, तो वह अपने उद्देश्य में असफल है।

युद्ध से लाभ हानि

विस्तृत प्रचार तालिकायें :—

(१) प्रस्तावना—मानवी स्वभाव में स्वार्थपरता को अधिक प्रधानत्व दिया गया है। संसार में स्वार्थ भावना के वशीभूत होकर युद्ध लड़े जाते हैं। युद्ध दो कारणों से लड़े जाते हैं एक तो धर्म-विस्तार के लिये दूसरे राज्य विस्तार के लिये। धार्मिक युद्धों का अब युग चला गया, अब तो सिर्फ राज्य विस्तार के लिये युद्ध लड़े जाते हैं।

(२) युद्ध से हानियाँ—(क) युद्ध में अगणित नर संहार होता है।

(ख) विजित राष्ट्र की स्वतन्त्रता अपहरण करली जाती है और उसको दासता की शृङ्खला में जकड़ दिया जाता है। विजित जाति के भाव भाषा और संस्कृति बिलकुल कुचल दी जाती है। उसके साहित्य और उद्योग-धन्धों का विकास बिलकुल बन्द हो जाता है। देश में बेकारी और दरिद्रता का सर्वत्र साम्राज्य स्थापित हो जाता है। देश में सर्वत्र अशान्ति और मलीनता छा जाती है।

(ग) युद्ध में भाग लेने वाले दोनों ही राष्ट्रों की आर्थिक दशा गिर जाती है और दोनों ही को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

(३) युद्ध से लाभ—(क) विजयी राष्ट्र का हर्ष और उत्साह बढ़ जाता है। (ख) नये नये देशों की प्राप्ति होती है। (ग) विजेता का राज्य विस्तार होता है। (घ) विजेता जाति की संस्कृति विस्तार पाती है। (ङ) मनुष्यों के युद्ध में मारे जाने से देश में जनसंख्या कम हो जाती है इसलिये बेकारी की कठिन समस्या स्वयमेव हल होजाती है। (च) युद्ध के बाद कुछ काल के लिये देश में शान्ति आजाती है। देश में षड्यंत्र और साजिशें कुछ काल के लिये बन्द हो जाती हैं। (छ) विजेता को विजित राष्ट्र की अपरिमित सम्पत्ति प्राप्त होती है।

(४) युद्ध से हानि अधिक और लाभ कम होते हैं। तनिक तनिक से सुखों के लिये मनुष्य मनुष्य का रक्त बहावे। यह बड़े लज्जा की बात है। क्या सभ्यता यही चाहती है? ऐसी मनोवृत्ति मनुष्य में नहीं मिलनी चाहिये। ऐसे युद्धों का अन्त होना चाहिये। तब ही विश्व शान्ति स्थापित होगी।

हिन्दुस्तानी-खेल

विचार-तालिकायें—

प्रस्तावना—शारीरिक और मानसिक थकावट को दूर करके पुनः स्फूर्ति और शक्ति संचय करने के लिये खेल आवश्यक हैं।

(२) मैदानी खेल—(क) कबड्डी हिन्दुस्तानी खेलों में सर्वोत्तम है। (ख) गुल्ली डण्डा और चील झपट्टा। (ग) आँख मिचौनी (घ) चौगान या गेंद। (ट) किल-किल कोटिया (च) लपक डण्डा।

(३) घर के भीतर के खेल—(क) ताश (ख) चौसर (ग) शतरञ्ज (घ) पचगुट्टे (ट) टेसू और झेंजी (च) जुआ।

शारीरिक और मानसिक परिश्रम करने से हमारे रक्त में एक प्रकार की शिथिलता आजाती है। उसकी गति कुछ मन्द पड़ जाती है। मस्तिष्क में भारीपन प्रतीत होता है। काम करने को जब जी नहीं चाहता तब हम कहते हैं कि हम थक गये हैं। यह थकान तब तक दूर नहीं होती जब तक हम सो नहीं लें अथवा खुली हवा में टहल नहीं लें एव किसी प्रकार का शारीरिक व्यायाम नहीं कर लें। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये खेलना बड़ा ही आवश्यक है। खेल शरीर में स्फूर्ति स्पन्दन करते हैं। मस्तिष्क को तरोताज़ा करते हैं। इसी कारण संसार में किसी न किसी रूप में खेल खेले जाते हैं। भारतवर्ष में भी अनेक देशी खेल खेले जाते हैं किन्तु अङ्गरेज़ी खेलों के देश में प्रचलन पाने के कारण उनका अस्तित्व मिटता सा जा रहा है। हमारे देशी खेलों में अङ्गरेज़ी खेलों की अपेक्षा यह विशेषता है कि उनमें व्यय नाम मात्र को नहीं होता। हमारे देशी खेलों की रचना प्राकृतिक ढङ्ग पर हुई है और ये प्रकृति के अधिक निकट हैं। हमारे खेलों में न कोई झंझट है और न किसी प्रकार की जटिलता है और न किसी प्रकार का खतरा है। हमारे देशी खेलों में जितना शारीरिक परिश्रम लिया जाता है उतना अङ्गरेज़ी खेलों से कभी सम्भव नहीं है। हमारे देशी खेल भारतीय वातावरण और

(ग) युद्ध में भाग लेने वाले दोनों ही राष्ट्रों की आर्थिक दशा गिर जाती है और दोनों ही को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

(३) युद्ध से लाभ—(क) विजयी राष्ट्र का हर्ष और उत्साह बढ़ जाता है। (ख) नये नये देशों की प्राप्ति होती है। (ग) विजेता का राज्य विस्तार होता है। (घ) विजेता जाति की संस्कृति विस्तार पाती है। (ङ) मनुष्यों के युद्ध में मारे जाने से देश में जनसंख्या कम हो जाती है इसलिये बेकारी की जटिल समस्या स्वमेव हल होजाती है। (च) युद्ध के बाद कुछ काल के लिये देश में शान्ति आजाती है। देश में षड्यंत्र और आन्तरिक युद्ध कुछ काल के लिये बन्द हो जाते हैं। (छ) विजेता को विजित राष्ट्र की अपरिमित सम्पत्ति प्राप्त होती है।

(४) युद्ध से हानि अधिक और लाभ कम होते हैं। क्षणिक लाभ के मूल्य के लिये मनुष्य मनुष्य का रक्त बहावे। यह बड़े लज्जा की बात है। क्या समस्या नहीं सुलझती है। ऐसी मनोवृत्ति मनुष्य में नहीं मिटनी चाहिये। ऐसे युद्धों का अन्त होना चाहिये। तब ही विश्व शान्ति स्थापित होगी।

हिन्दुस्तानी-खेल

विचार-तालिकायें:—

प्रस्तावना—शारीरिक और मानसिक थकावटों को दूर करके पुनः स्फूर्ति और शक्ति संचय करने के लिये खेल आवश्यक है।

(२) मैदानी खेल—(क) कबड्डी हिन्दुस्तानी खेलों में सर्वोत्तम है। (ख) गुल्ली डण्डा और चील झपट्टा। (ग) आँख मिचौनी (घ) चौगान या गद। (ङ) किल-किल कोटिया (च) लपक डण्डा।

(३) घर के भीतर के खेल—(क) ताश (ख) चौसर (ग) शतरञ्ज (घ) पचगुट्टे (ङ) टेसू और झँझी (च) जुआ।

शारीरिक और मानसिक परिश्रम करने से हमारे रक्त में एक प्रकार की शिथिलता आजाती है। उसकी गति कुछ मन्द पड़ जाती है। मस्तिष्क में भारीपन प्रतीत होता है। काम करने को मन जी नहीं चाहता तब हम कहते हैं कि हम थक गये हैं। यह थकान तब तक दूर नहीं होती जब तक हम सो नहीं लें अथवा खुली हवा में टहल नहीं लें एव किसी प्रकार का शारीरिक व्यायाम नहीं कर लें। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये खेलना बड़ा ही आवश्यक है। खेल शरीर में स्फूर्ति स्पन्दन करते हैं। मस्तिष्क को तरोताज़ा करते हैं। इसी कारण संसार में किसी न किसी रूप में खेल खेले जाते हैं। भारतवर्ष में भी अनेक देशी खेल खेले जाते हैं किन्तु अङ्गरेज़ी खेलों के देश में प्रचलन पाने के कारण उनका अस्तित्व मिटता सा जा रहा है। हमारे देशी खेलों में अङ्गरेज़ी खेलों की अपेक्षा यह विशेषता है कि उनमें व्यय नाम मात्र को नहीं होता। हमारे देशी खेलों की रचना प्राकृतिक ढङ्ग पर हुई है और ये प्रकृति के अधिक निकट हैं। हमारे खेलों में न कोई झंझट है और न किसी प्रकार की जटिलता है और न किसी प्रकार का खतरा है। हमारे देशी खेलों में जितना शारीरिक परिश्रम लिया जाता है उतना अङ्गरेज़ी खेलों से कभी सम्भव नहीं है। हमारे देशी खेल भारतीय वातावरण और

भौगोलिक परिस्थिति के अनुकूल हैं किन्तु अंग्रेजी खेलों में यह अनुकूलता देखने को भी नहीं मिलती।

हमारे देशी खेलों में सब प्रिय खेल कबड्डी है। भारतवर्ष में यह खेल सबसे अधिक खेला जाता है और सब इसे बड़ा पसन्द करते हैं। अब कॉलिज और स्कूलों में भी यह खेल खेला जाता है। कबड्डी की प्रतियोगितायें होती हैं। यू. पी. गवर्नमेंट ने इस खेल के लिये प्रबन्ध सहायता देना निश्चय किया है। गाँवों में यह प्रायः वर्षा और शरद ऋतु की चाँदनी रातों में खेला जाता है। दो पार्टियाँ बनाई जाती हैं। दोनों दल आमने सामने पंक्ति-बद्ध खड़े होते हैं उनके दलों के बीच में एक विभाजक रेखा बनाई जाती है जिसे पाला (पारो) कहते हैं। जब खेल शुरू होता है तब एक पक्ष का आदमी कबड्डी कबड्डी, कबड्डी ... कहता हुआ दूसरे दल में प्रवेश करता है, और उस दल के आदमियों को छूने का प्रयत्न करता है। दूसरे पक्ष वाले पैंतरे बदल कर उसकी छुआई से बचते हैं और उसको पकड़ने का प्रयत्न करते हैं। उसने जिसे छू लिया तो वह मरा यदि वह उनमें पकड़ा गया तो वह स्वयं मरा। यदि किसी प्रकार वह छूट छाट कर अपने पाले में आ गया तो वह भी बचा। नहीं तो मर तो गया ही। अब यह खेल तब तक खेला नहीं समाप्त जब तक उसके साथी खिलाड़ी को मारकर हटा नहीं उठा देते। खेल में बड़ी धूम मची रहती है। जब एक पक्ष के समस्त खिलाड़ी मर जाते हैं तब वह पक्ष हारा हुआ और विपक्षी विजयी समझा जाता है।

गुल्ली डण्डे का खेल भी देहातों में बड़े चाव से खेला जाता है। इसे बालक बड़ी रुचि से खेलते हैं। इसमें कम से कम दो व्यक्ति और

अधिक से अधिक कितने ही आदमी इसमें खेल सकते हैं। खुले मैदान में एक गहरा, लम्बा और नुकीला गड्ढा खोद लेते हैं। इसे गुच्ची कहते हैं। इसी में वह लकड़ी जो लगभग ८ अंगुल के होती है जिसे गुल्ली के नाम से पुकारते हैं रख देते हैं। फिर एक हाथ के डण्डे से इस गुल्ली को पदाते हैं। यदि गुल्ली पदाने वाले खिलाड़ी ने पकड़ ली पदाने वाला खिलाड़ी हारा हुआ मान लिया जाता है। अब गुल्ली को पकड़ने वाला खिलाड़ी उसकी जगह आता है। खेल में यही क्रम जारी रहता है। खेल में बड़ा आनन्द आता है।

गुल्ली डण्डे से मिलता जुलता दूसरा खेल चील झपट्टा है। इसे भी लड़के एक घृताकार पंक्ति में खड़े होकर खेलते हैं। एक केन्द्र पर खड़ा होता है और एक दायरे के बाहर, भीतर का खिलाड़ी बाहर वाले खिलाड़ी को छूने का प्रयत्न करता है। दायरे की परिधि पर खड़े खिलाड़ी उसे छूने में बाधा डालते हैं। वह इधर उधर चील की भांति झपटता है। जग अवसर मिला कि वह दायरे से बाहर हो बाहर वाले खिलाड़ी को छू लेता है। बस अब भीतर का स्थान बाहरवाले को लेना पड़ता है।

बच्चों के प्रसिद्ध खेलों में आँख मिचौनी का भी खेल है, इस खेल को भी बच्चे टोलियों में खेलते हैं। इस खेल में एक बच्चा अपनी आखें बन्द कर लेता है और दूसरे बालक जाकर छिपते हैं। जब सब छिप जाते हैं तब वह एक बालक चिल्लाकर कहता है 'हमें ढूंढ लो" बस आंख मींचने वाला खिलाड़ी इधर उधर चक्कर काट कर अन्य खिलाड़ियों को ढूंढ़ता है। जिसे वह ढूंढ के छू लेता है उसी को उसका स्थान लेना पड़ता है।

गेंद का खेल भी ऐसी खेलों में सर्व प्रिय है। यह कई तरह खेला जाता है। सब से प्रसिद्ध घेरे का खेल है जिसमें तमाम खेलने वाले खिलाड़ी चारों तरफ एक गोल दायरे में खड़े हो जाते हैं। बीच में चोर खड़ा रहता है। गेंद घेरे के एक लड़के से दूसरे लड़के तक उछलती रहती है। जिस खिलाड़ी से गेंद गिर जाती है वही चोर बनता है। यह यही क्रम जारी रहता है और तमाम लड़के खेल में तत्पर रहते हैं जिस खेल में तमाम लड़के तत्पर रहते हैं वह खेल उत्तम समझा जाता है।

छिप छिप लकीरिया का खेल भी दो पार्टियों में खेला जाता है। इस खेल में दो दल रहते हैं। प्रत्येक दल अपनी सीमा निर्धारित कर लेता है। प्रत्येक पार्टी के खिलाड़ी अपनी अपनी सीमाओं में गुप्त रूप से पर गुप्त रीति से लकीरें खींचता है। जब लकीरें खिंच चुकते हैं तब पार्टियों का मुकाबिला होता है प्रत्येक दल अपने विरोधी की छुपी लकीरों को खोजता है। जिस टोली की खींची हुई लकीरें कम कटती हैं और उनकी लकीरों की संख्या अधिक होती है वही टोली जीती हुई समझी जाती है।

लपड़ा टोपी (लपक लपका) यह पैरों पर खेला जाने वाला खेल है। इससे बच्चों को दोनों पैर पर चढ़ने का अभ्यास होता है। इस खेल में एक लकड़ी जो लगभग एक हाथ लम्बी होती है भूमि पर गाड़ दी जाती है। एक लड़का मैंगी बनता है जो उस लकड़ी की रक्षा करता है। यह रक्षक साथ साथ पर खिलाड़ियों को छूने का प्रयत्न करता है। दूसरे खिलाड़ी लकड़ी को लाकर अपनी टांग के बीच

होकर फेंक जाते हैं। रक्षक डण्डी लेने दौड़ता है। फेंकने वाला खिलाड़ी वृक्ष पर चढ़ जाता है। किसी विधि यह रक्षक खिलाड़ी दूसरे बालक को छू पाता है। तो छुये हुये खिलाड़ी को रक्षक की ड्यूटी देनी पड़ती है। बस इस खेल में यही क्रम जारी रहता है। इस खेल में वही लड़के फिसड्डी समझे जाते हैं जो अधिक देर तक रक्षक का काम करते हैं।

इन खेलों के अतिरिक्त कुन कुन मूँगा, पद्दा पद्दी, कोड़ा जम्हाल शाही, कोड़ामार, फँय्यमार आदि देशी खेल हैं जो गाव के ग्वालों में बहुतायत से खेले जाते हैं।

घर के अन्दर खेले जाने वालों खेलों में सबसे बढ़िया शतरञ्ज का खेल है। इसेदो आदमी खेलते हैं। दुतर्फा मुहरे होते हैं। जिनकी चालें नियत होती हैं इस खेल में खिलाड़ो खाना खाना तक भूल जाते हैं।

चौसर के खेल को चार आदमी खेलते हैं। यह खेल भी बड़ा दिलचस्प खेल है। इस खेल में वही लोग सिद्ध हस्त समझे जाते हैं। जो अपनी गोटों को सबसे पहले केन्द्र में पहुँचा देते हैं।

शतरञ्ज और चौसर की भाति पच गुट्टे का भी खेल है। इन तीनों खेलो में यद्यपि मानसिक शक्तियों का विकास होता है। किन्तु इन खेलों का चस्का बुरा है इसी कारण समाज मे भद्र व्यक्ति इन खेलों का निषेध करते हैं।

क्वार के दशहरे के अवसर पर लड़के और लड़कियाँ टेसू और झँझी का खेल खेलते हैं। यह खेल हफ्तों चलता है। खिलाड़ी लड़के लड़किया घर घर जाते हैं, टेसू और झँझी के गीत गा गा कर जनता से पैसे और नाज की भिक्षा करते हैं।

आदर्श-निबन्ध-माला

दूसरा खण्ड

व्यवहारिक-पत्र-लेखन

दैनिक जीवन में पत्र व्यवहार की आवश्यकता रहती है, शिक्षित या अशिक्षित सभी कोटि के मनुष्यों को पत्र व्यवहार की आवश्यकता पड़ती है। इसी कारण पत्र व्यवहार की कला को सम्यक रूप से समझने के लिये हम कुछ पत्र-लेखन के नियम और आदर्श देते हैं।

पत्र-लेखन भी कला है। पत्र वही उत्तम गिने जाते हैं जो स्पष्ट हों और उनकी स्वभाविक शैली हो। जिन पत्रों में न स्पष्टता होती और न शैली ही में कोई आकर्षण होता वह पत्र अच्छे नहीं गिने जाते। पत्र की भाषा नित्य व्यवहार की भाषा होनी चाहिये। बनावटी भाषा पत्र की सुन्दरता को नष्ट कर देती है।

पत्रों के चार भेद होते हैं। वैयक्तिक-पत्र वह होते हैं जो एक सम्बन्धी की ओर से दूसरे सम्बन्धी को घरेलू विषयों पर लिखे जाते हैं। व्यावसायिक-पत्र वह होते हैं जो एक व्यापारी की ओर से दूसरे व्यापारी को क्रिय विक्रय अथवा देन लेन के सम्बन्ध में लिखे जाते हैं। प्रार्थना पत्र वह होते हैं जो नौकरी आदि की प्रार्थना के लिये उच्च कर्मचारियों को लिखे जाते हैं। सरकारी

पत्र वह होते हैं जो सरकारी काम धन्धों और हुक्म आइसम के तौर पर एक कर्मचारी से दूसरे कर्मचारी को भेजे जाते हैं।

आज कल पत्र लिखने की दो विधियाँ प्रचलित हैं। एक पुरानी प्रथा जिसका चलन कुछ धार्मिक व्यक्तियों और व्यापारी लोगों तक सीमित रह गया है। दूसरी नवीन प्रथा जिसमें अङ्गरेजी ढङ्ग पर पत्र लिखे जाते हैं। इस पत्रों में व्यर्थ का शब्दाडम्बर नहीं होता। संक्षिप्त प्रशस्ति लिखकर मुख्य विषय लिखना आरम्भ कर देते हैं।

प्रतिष्ठा के अनुसार पत्र तीन प्रकार के होते हैं—(१) छोटों की ओर से बड़ों को (२) बड़ों की ओर से छोटों को और बराबर वालों को। प्रत्येक पत्र के मुख्य निम्न लिखित अङ्ग होते हैं।

(क) पत्र भेजने की तिथि और ठिकाना (ख) शिष्टाचार और प्रशस्ति (ग) पत्र का मुख्य विषय (घ) पत्र की समाप्ति और (ङ) पत्र भेजने वाले का नाम तथा पूरा पता। इसके अतिरिक्त पत्र पाने वाले का पूरा पता लिखा जाता है।

पुरानी प्रथा के अनुसार पत्र लिखना

पुरानी प्रथा में प्रशस्ति में बड़ों को ' सिद्धिश्री ' और बराबर वालों को स्वस्ति श्री लिखा जाता है। पुरानी प्रथा में भी लिखने की बड़ी परिपाटी थी किन्तु आज कल भी लिखने की परम्परा भिन्न गई है। पुरानी प्रथा में बड़ों को आदर सूचक शब्दों द्वारा ही सम्बोधित करते हैं। पते के अतिरिक्त कहीं बड़ों का नाम नहीं लिखते। बड़ों को 'परमपूज्य' 'पूज्य पाद' और 'सर्वगुणसम्पन्न' आदि विशेषण शब्दों का प्रयोग करते हैं। बराबर वालों के लिये प्रिय' 'मित्रवर' वा हितैषी आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं।

छोटों के लिये 'चिरजीव,' 'स्नेह-भाजन,' आदि विशेषण लिखे जाते हैं। अपरचित लोगों के लिये, महाशय, आदि शब्द लिखकर पत्र पूरा करते हैं।

पुरानी प्रथा में बड़ों को 'प्रणाम', बराबर वालों को 'नमस्ते' या 'वन्दे' अथवा 'जयरामजी की' और छोटों को आशीर्वाद लिखा जाता है। फिर कुशलक्षेम लिखकर पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है। फिर पत्र समाप्त कर दिया जाता है।

---

(१) पत्र पिता को

(प्राचीन-प्रथा)

सिद्धि श्री शुभ स्थान दिल्ली पूज्यपाद पिताजी को योग्य लिखी अलीपुर से आज्ञाकारी महेशचन्द्र का प्रणाम पहुँचे। सेवक आपके चरणों के प्रताप से कुशल-पूर्वक है। आपकी कुशल क्षेम श्री भगवान से नेक चाहता है। दो सप्ताह व्यतीत होने आये, आपका कोई कुशल पत्र नहीं मिला बड़ी चिन्ता है। परसों पदू से बड़े ताऊजी आये थे वह आपको बहुत याद करते थे और कहते थे कि होली की छुट्टियों में मैं फिर आऊँगा। इसलिये आप ताऊजी से मिलने होली की छुट्टियों में अवश्य आयें। फूफाजी भी आये थे अब उनकी तबियत बहुत अच्छी है। भैया सुरेश की वार्षिक परीक्षा ६ मार्च सन् १६४१ ई० से है। उनका परीक्षा केन्द्र अलीगढ़ है। उनके लिये आप १०) रु० सीधे टाऊन स्कूल इगलास के पते से भेज दीजियेगा। लल्लू दिनेश पढ़ने तो जाता है, किन्तु खेलना नहीं छोड़ता। माता जी का तो कहना ही नहीं मानता। जीजी भगवान देई तरा चली गई हैं। उनकी छोटी मुन्नी बड़ी प्रसन्न है। जब आप दिल्ली से आवें तो मुन्नी को एक छोटी बच्चों की गाड़ी लेते आना। रामप्रसाद, जोतीप्रसाद

पत्र वह होते हैं जो सरकारी काम धन्धों और हुक्म आदेश के तौर पर एक कर्मचारी से दूसरे कर्मचारी को भेजे जाते हैं।

आज कल पत्र लिखने की दो विधियाँ प्रचलित हैं। एक पुरानी प्रथा जिसका चलन कुछ धार्मिक कृत्यों और व्यापारी लोगों तक सीमित रह गया है। दूसरी नवीन प्रथा जिसमें अङ्गरेजी ढङ्ग पर पत्र लिखे जाते हैं। इस पत्रों में व्यर्थ का शब्दाडम्बर नहीं होता। संक्षिप्त प्रशस्ति लिखकर मुख्य विषय लिखना आरम्भ कर देते हैं।

प्रतिष्ठा के अनुसार पत्र तीन प्रकार के होते हैं—(१) छोटों की ओर से बड़ों को (२) बड़ों की ओर से छोटों को और बराबर वालों को। प्रत्येक पत्र के मुख्य निम्न लिखित अङ्ग होते हैं।

(क) पत्र भेजने की तिथि और ठिकाना (ख) शिष्टाचार और प्रशस्ति (ग) पत्र का मुख्य विषय (घ) पत्र की समाप्ति और (ङ) पत्र भेजने वाले का नाम तथा पूरा पता। इसके अतिरिक्त पत्र पाने वाले का पूरा पता लिखा जाता है।

पुरानी प्रथा के अनुसार पत्र लिखना

पुरानी प्रथा में प्रशस्ति में बड़ों को 'सिद्धिश्री' और बराबर वालों को 'स्वस्ति श्री' लिखा जाता है। पुरानी प्रथा में भी लिखने की बड़ी परिपाटी थी किन्तु आज कल की लिखने की परम्परा भिन्न गई है। पुरानी प्रथा में बड़ों को आदर सूचक शब्दों द्वारा ही सम्बोधित करते हैं। पते के अतिरिक्त कहीं बड़ों का नाम नहीं लिखते। बड़ों को 'परमपूज्य' 'पूज्य पाद' और 'सर्व-गुण-सम्पन्न' आदि विशेषण शब्दों का प्रयोग करते हैं। बराबर वालों के लिये प्रिय 'प्रियवर' या हितैषी आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं।

छोटों के लिये 'चिरजीव,' 'स्नेह-भाजन,' आदि विशेषण लिखे जाते हैं। अपरचित लोगों के लिये, महाशय, आदि शब्द लिखकर पत्र पूरा करते हैं।

पुरानी प्रथा में बड़ों को 'प्रणाम', बराबर वालों को 'नमस्ते' या 'वन्दे' अथवा 'जयरामजी की' और छोटों को आशीर्वाद लिखा जाता है। फिर कुशलक्षेम लिखकर पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है। फिर पत्र समाप्त कर दिया जाता है।

---

(१) पत्र पिता को

(प्राचीन-प्रथा)

सिद्धि श्री शुभ स्थान दिल्ली पूज्यपाद पिताजी को योग्य लिखी नलीपुर से आज्ञाकारी महेशचन्द्र का प्रणाम पहुँचे। सेवक आपके चरणों के प्रताप से कुशल-पूर्वक है। आपकी कुशल क्षेम श्री भगवान से नेक चाहता है। दो सप्ताह व्यतीत होने आये, आपका कोई कुशल पत्र नहीं मिला बड़ी चिन्ता है। परसों पद् से बड़े ताऊजी आये थे वह आपको बहुत याद करते थे और कहते थे कि होली की छुट्टियों में मैं फिर आऊँगा। इसलिये आप ताऊजी से मिलने होली की छुट्टियों मे अवश्य आयें। फूफाजी भी आये थे अब उनकी तबियत बहुत अच्छी है। भैया सुरेश की वार्षिक परीक्षा ६ मार्च सन् १६४१ ई० से है। उनका परीक्षा केन्द्र अलीगढ़ है। उनके लिये आप १०) रु० सीधे टाऊन स्कूल इगलास के पते से भेज दीजियेगा। लल्लू दिनेश पढ़ने तो जाता है, किन्तु खेलना नहीं छोड़ता। माता जी का तो कहना ही नहीं मानता। बीजी भगवान देई तरा चली गई हैं। उनकी छोटी मुन्नी बड़ी प्रसन्न है। जब आप दिल्ली से आवें तो मुन्नी को एक छोटी बच्चों की गाड़ी लेते आना। रामप्रसाद, जोतीप्रसाद

वाले मामले में कोई फ़ैसला नहीं बनता। दादा जी ने काफी कोशिश करली है। रामबाबू रामप्रसाद का वारिस बना दिया गया है। दादा जी कथा के मुकदमे में गये हुये हैं। देखिये क्या होता है। कुआँ बन गया है। आप छोटे दादा जी के नाम का एक पत्थर अवश्य बनवा डालना। रेवी चाचा अब तो ठीक ठाक हैं, चाचा भी दादा के पास उठते बैठते हैं। गाँव के वृत्तान्त पूर्ववत हैं। गाँव की राजनीति किसी की समझ में नहीं आती। मामा हमारे चले गये हैं। बड़े मामा का काम कभी कभी मैं ही कर देता हूँ। इस वर्ष मैं परीक्षा में पास हो जाऊँगा। आप एक साइकिल अवश्य लिया करा दीजियेगा। मामी अभी देवरोठ से नहीं आई हैं। विशेष बातों को क्या लिखूँ ?

मिती फाल्गुन कृष्णा द्वादशी गुरुवार सं० १९९७ विक्रमी

नवीन प्रथा के अनुसार पत्र लिखना।

(क) नवीन प्रथा में पत्र के दाहिनी ओर पत्र लिखने का ठिकाना और ठिकाने के नीचे पत्र भेजने की तारीख इस प्रकार लिखी जाती है —

(१)	(२)	(३)
फरवरी २८,१९४१	१ मार्च १९४१	फाल्गुन शुक्ला ११ सं० १९९७
२८-२-४१	१/३/४१	

अथवा

(ख) नवीन प्रथा में प्रशस्ति संक्षेप से संक्षेप लिखी जाती है। नवीन प्रथा की प्रशस्ति और निवेदन तालिकायें भिन्न लिखित हैं।

प्रेष्य	प्रशस्ति	निवेदन
१. बड़े सबंधियों को	मान्यवर, पूज्यवर पूज्य पिता जी आदि	आज्ञाकारी, स्नेह-भाजन, कृपा-कांक्षी
२ छोटे सबंधियोंको	चिरंजीवी, प्रिय	शुभचिंतक, हितैषी
३. बराबर वालों को	प्रियवर, प्रिय	तुम्हारा मित्र, सुहृद
४ परिचितों को	प्रिय अथवा प्रिय गुप्ता जी	आपका (आगे अपना पूरा नाम
५ अपरिचितों को	महाशय,प्रियमहाशय	,,
६ स्त्रियों को यदि वे परिचित न हों	महोदया	,,
७ स्त्री को	प्राण-प्रिये	तुम्हारा, भवदीय
८ अधिकारी को	मान्यवर	प्रार्थी, सेवक
९ निमन्त्रण-पत्र में	श्रीयुत, मान्यवर	दर्शनाभिलाषी

(ग) प्रशस्ति के पश्चात् पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है। पत्र सदैव निम्नलिखित वाक्यों से आरम्भ करना चाहिये।

आपका पत्र पाकर मुझे हार्दिक हर्ष हुआ, मुझे अभी-अभी आपका स्नेहपूर्ण पत्र मिला है, आपका पत्र पाकर हर्ष और विस्मय दोनों साथ-साथ हुये, आपका पत्र पाकर मुझे अपार शोक हुआ आदि-आदि पत्र का विषय सीधी सादी भाषा में हो।

बनावट और आडम्बर न प्रकट हो रहा हो। पत्र में मुहावरों का प्रयोग न करना चाहिये। पत्र लिखने में ऐसा प्रतीत हो मानो तुम उससे बातें कर रहे हो।

(घ) समाचार-पत्रों को जो पत्र लिखे जांय वह सम्पादक के नाम लिखना चाहिये। सम्पादक को सदैव 'श्रीमान्' अथवा 'महाशय' लिखना चाहिये। अन्त में आपका 'निवासी' अथवा 'भवदीय' लिखना चाहिये।

(ङ) कुछ लोग पत्र के अन्त में तारीख डालते हैं आवेदन पत्रों में तो प्रधानतया अन्त में तारीख डालने का चलन है, नमूने का पत्र यहां दिया जाता है—

(२) पत्र मित्र को (नवीन-प्रथा से)

धर्म-समाज-कॉलेज अलीगढ़।

२५ मार्च १९४१

प्रिय शर्मा जी !

आपका पत्र पाकर मुझे हार्दिक हर्ष हुआ। आज पूरे ४ वर्ष में आपका पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ कि आप ४ वर्ष के समये हुए मिल गये। शर्मा तुम तो बड़े कठोर व्यक्ति। चार साल से आपने कुछ पता नहीं दिया। मैं तो मिलता था, क्यों आपका पत्र मिलता। आपका 'मौडर्न-ऐसे' जो आपने सन् ३७ में लिखा था सेलीमैन में मिला था हम इस ही से जाते मैंने पूछा तो था किन्तु उन्होंने भी आपका कुछ पता नहीं दिया। आपका "आदर्श-निबन्ध" लक्ष्मीनारायण ने सेलीमैन में भेजा है। आपका पत्र और आपका आदर्श-निबन्ध दोनों साथ-साथ मिले। अपार हर्ष हुआ अब तो आप पर सरस्वती की कृपा हो गई है।

बड़ा सुन्दर लिखते हो। मेरे विचार में बाजार में बिकने वाले निबन्धों में अब आपके आदर्श-निबन्ध के समकक्ष कोई नहीं बैठाया जा सकता। भगवान आपकी लेखनी को सफलता दे। प्रिय सुरेश की शादी में अवश्य सम्मिलित हूँगा। विनयकुमार कल बम्बई से आ गये हैं। आपको नमस्कार कहते हैं। माताजी आपको बहुत याद करती हैं। एक बार समय निकाल कर उन्हें अवश्य मिल जाओ। दिनेश इस वर्ष बनारस यूनीवर्सिटी से एम ए की परीक्षा में बैठेगा। विशेष क्या ? बच्चों को प्यार।

तुम्हारा स्नेह भाजन,
गोकुलचन्द शर्मा, एम ए,
हिन्दी-विभाग।

पत्र लिखने के पश्चात् प्रेष्य का पता लिखा जाता है। कार्ड पर पता लिखने को जगह छूटी रहती है। उसी पर पाने वाले का पता लिखा जाता है। लिफ़ाफ़े में वह पत्र भेजे जाते हैं जो पृथक काग़ज़ पर लिखे जाते हैं। पत्र के काग़ज़ को लिफ़ाफ़े में बन्द करके लिफ़ाफ़े के ऊपर पाने वाले का नाम लिख देते हैं। पते में पाने वाले का नाम, उपाधि, स्थान और मुहल्ले आदि का नाम लिख देते हैं। पते के नमूने निम्न लिखित हैं —

[१]

टिकट

सेवामें,
कालकाप्रसाद भटनागर एम ए,
प्रिन्सिपल डी ए वी कालेज,
कानपुर।

[२]

टिकट

श्री महेशचन्द्र शर्मा गाँव नसीपुर
पो० ऑ० हरदुआगंज
जि० अलीगढ़।

दिनेशचन्द्र
दरीबा कलाँ, देहली

[३]

टिकट

सेवामें
श्रीमान् डाइरेक्टर साहब
शिक्षा-विभाग, यू० पी०
इलाहाबाद।

भूदेव शर्मा,
डी० ए० वी० हाई स्कूल
अलीगढ़।

[४]

टिकट

Registered
सेवामें
चन्द्रमौलि सुकुल,
प्रिन्सिपल, ट्रेनिंग-कालेज
बनारस।

इंपीरियल-बुक-डिपो
दिल्ली।

(३) पिता को पत्र

(अपने स्कूल का वृत्तान्त)

राष्ट्रीय-विद्यालय-ओखले
देहली।
१५ अप्रैल, १९४१

माननीय और पूज्य पिताजी।

आपका १५ मार्च, ४१ का अङ्कित पत्र मिला। अपार हर्ष हुआ। आपको यह जानकर अपार हर्ष होगा कि आपकी अभिलाषा के अनुकूल ही मुझे स्कूल मिल गया है। इस स्कूल में विद्यार्थी को अपनी मानवी-शक्तियों को विकसित करने का पूरा अवसर मिलता है। यहाँ विद्यार्थी को अक्षर-ज्ञान के अतिरिक्त विषय को अधिक हृदयगम कराने की चेष्टा की जाती है। आचारिक शिक्षा का पूरा प्रवन्ध है। आचारिक-शिक्षा के साथ ही साथ ही साथ शारीरिक और नैतिक-शिक्षा पर पर्याप्त बल दिया जाता है। हमारे माननीय प्रिन्सिपल साहब सच्चरित्रता और सादगी की साक्षात मूर्ति हैं। आप वर्धा-आश्रम के स्नातक हैं। आपकी राष्ट्रीयता बडे ऊँचे दर्जे की है। वह अपने विद्यार्थियों को प्रताप और शिवाजी की आकृति में देखना चाहते हैं।

आपने एक सेवा-सघ स्थपित किया है। सघ का उद्देश्य निर्बल और अनाथों की सेवा करना है, आपका मिशन ग्राम-सुधार पर अधिक बल देता है। आचार्य जी वतलाते हैं कि भारतवर्ष के गाँवों का उत्थान किये विना भारत की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकती। १२ गाँवों का एक सेण्टर आपने वनाया है जिसमें उन्होंने अपनी योजना के अनुसार जनता को ट्रेन्ड करने की योजना चलाई हुई है। वालक वालिकाओं के पढ़ने का प्रवन्ध

साथ ही साथ कर दिया है। पाठशाला के समस्त अध्यापक वर्धा-योजना के अनुसार ट्रेनिंग पाये हुये हैं। ७ बजे से ९ बजे रात्रि में प्रौढ़ पाठशाला चलती है जिसमें १५ वर्ष से ४० वर्ष तक के प्रौढ़ शिक्षा पाते हैं। पाठशाला में उन्हें समाचार-पत्र सुनाये जाते हैं। मनोरञ्जन के लिये गाने बजाने आदि का भी प्रबन्ध है।

हमारे स्कूल का शिक्षा-क्रम बिल्कुल महात्मा जी की वर्धा-शिक्षा के अनुसार है। समस्त अध्यापक राष्ट्रीय विचार के हैं। सबके हृदय में देश प्रेम उमड़ रहा है। वहाँ का भ्रातृ भाव सराहनीय है। सब लोग एक परिवार की भाँति अपना जीवन व्यतीत करते हैं। सबको सबसे प्रेम है। सबके सब सादगी और सच्चरित्रता की मूर्ति हैं। कक्षाओं में कताई-बुनाई और उद्योग धन्धा विभाग बड़े ही सराहनीय हैं। कपड़ा, खिलौने आदि बनाना सभी को आवश्यक है। उन्हें नागरिक बनाने के लिये नागरिकता की शिक्षा दी जाती है। बच्चे कभी यहां की शिक्षा से वञ्चित नहीं देखे गये। इससे अनेक विषयों की जानकारी उपलब्ध करते हैं। उद्योग विभाग में बच्चों की बनाई हुई वस्तुओं का मूल्य बच्चों ही को मिल जाता है। कुछ बच्चे खेती और माली का काम सीखते हैं। उनको खेती की पैदावार लागत काटकर उन्हीं को विभाजित कर दी जाती है।

हमारे स्कूल की दिनचर्या यह है कि सबको ४ बजे उठना पड़ता है। ४॥ बजे तक शौच और स्नान होता है। ५ बजे तक प्रार्थना। ५ से ६ तक आचार्यों के उपदेश होते हैं। ६ से ७ बजे के बीच व्यायाम और खेल कूद होते हैं। ७ से ८ तक सफाई। पाखानों और शौचघरों की सफाई बाग में पानी देना। कमरे धोना मक्खियाँ साफ करना आदि होता है। ८ से ९ तक अपने काम के कपड़े धोना नहाना और भोजन करना। ९॥ से १॥ तक

अध्यापकों के उपदेश सुनना। ४ तक शौच्यादि से निवृत्ति। ४ से ५ तक स्काउटिंग और सेवा कार्य। ६ वजे तक खेल कूद। ७ वजे तक भोजन और विश्राम। ८ वजे तक मनोरञ्जन और ८ से ९ बजे तक डायरी भरना और अपनी आत्म-कथा लिखी जाती है। ९ बजे सोने का घण्टा बजता है। ९ बजे से छात्रालय में सन्नाटा छा जाता है। कोई विद्यार्थी ९ बजे के बाद बातचीत नहीं कर सकता और न किताब पढ़ सकता है। यही काम वर्ष के ३६५ दिन रहता है। जो विद्यार्थी पाठशाला के नियमों का उल्लघन करता है अथवा उसमें उदासीनता का परिचय देता है तो उसको पाठशाला से निकाल दिया जाता है। अनुशासन का बहुत ध्यान रक्खा जाता है।

विद्यालय में एक वाक्-वर्द्धिनी सभा है जिसमें विद्यार्थियों को व्याख्यान देने का अभ्यास कराया जाता है। वाक्-वर्द्धिनी सभा की मीटिंग साप्ताहिक होती है, प्रत्येक पन्द्रहवें दिन सदस्यों की प्रतिद्वन्द्ता की परीक्षा होती है जीतने वालों को पुरस्कार दिया जाता है। जिससे छात्रों के उत्साह में वृद्धि होती है। बच्चे व्यवहारिक रुप से पार्लियामेन्ट और कौंसिलें बनाते हैं इनका नियानुसार चुनाव होता है। पाठशाला के विद्यार्थियों की तरफ़ से एक 'बिगुल' नामक साप्ताहिक पत्र भी निकलता है जिसमें छोटे बड़े बच्चे सभी प्रकार के भाव प्रकट करते हैं। छोटी छोटी कहानियाँ और कविताओं का ज्ञान भी बच्चों को कराया जाता है। स्कूल बिल्कुल राष्ट्रीय ढङ्ग पर चलाया जा रहा है। पूरे विद्यालय मे ७ कक्षायें है। प्रत्येक कक्षा मे ३० विद्यार्थी हैं। विद्यार्थी सब बोर्डर हैं और यूनिफार्म मे रहते हैं। सारे सूबे मे यही एक राष्ट्रीय संस्था है जो महात्मा जी की योजना के अनुसार काम कर रही है। [illegible]

सन्मार्ग के पथ पर डाल देना आवश्यक है। यह समय तुम्हारे पर्याप्त सतर्क रहने का है। मैं समझता हूँ कि तुम मेरी बातें भली भांति समझते होगे।

अब तुम्हें नये सङ्गी साथी बनाने पड़े हैं। उनसे मिलते जुलते रहो। उनके साथ खेलो कूदो, और उनकी खोज खबर भी लेते रहो। यदि अपना सङ्गी साथी हारी दुखारी हो जाय तो उसकी सेवा शुश्रूषा करते रहो। कोई दुखी हो तो उसका दुःख दूर कर दिया करो। अपने अध्यापकों का भी एक आध काम कर आया करो। ये गुण तुम्हारे अन्दर मनुष्यता का गुण उत्पन्न करेंगे। फिर मनुष्य और पशु में भेद ही क्या रह जायगा? मनुष्य-मनुष्य की मदद न करेगा तो क्या पशु करेगा?

एक विचार अवश्य रखना कि तुम अपना नाम स्कूल टीम में अवश्य लिखा लेना। इससे तुम्हें दो लाभ होंगे, एक तो तुम्हारा खेल नियमित हो जायगा और 'दूसरे अपने साथियों के अधिक सम्पर्क में आ जाओगे"।

मनुष्य जीवन के लिये जितनी शिक्षा की आवश्यकता है उतनी ही खेलने की। खेल का मैदान भी उतना ही आवश्यक है जितना क्लास रूम। कभी क्रोध न करो, कभी किसी से अबे-तबे से न बोलो। एक दूसरे के सहयोगी बनो, उठने बैठने के तरीके सीखो। अपने आप पर शासन करने की प्रवृत्ति को विकसित करो। बुरे आचरण के लड़कों के पास कभी न बैठो। अपने खाली समय को लाइब्रेरी की पुस्तकों के पढ़ने में व्यतीत किया करो। अपने अध्यापकों का सदैव आदर करो और उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करो। कभी उनके ऊपर आलोचना न करो।

तुम 'सादा जीवन और उच्च विचार' के सिद्धान्त कोकभी न भूलो। कभी दूसरों की नकल न करो। आलस्य और विलास

को अपने पास न आने दो। तुम फैशन के चक्कर से दूर रहो। तुम्हें अपने को एक योग्य नागरिक बनना है अतः तुम अपने दायित्व को समझो। अपने आचरण को बनाओ, गुरुओं की सेवा करो। सिगरट आदि बुटेवों को न पड़ने दो। सिनेमा देखना उमासे और कुरुचिपूर्ण नाच रङ्गों में कभी न जाओ। पूरी तत्परता और तन्मयता के साथ विद्याध्ययन करो। तभी तुम्हारे अन्दर उन गुणों का विकास होगा जिससे तुम अपने वंश (खानदान और देश का मुख उज्ज्वल कर सकोगे।

तुम्हारे प्रिन्सिपल साहब के पास मैंने ५०) जमा कर दिये हैं जब तुम्हें आवश्यकता पड़े उनसे ले लिया करना। इससे तुम्हें सुविधा रहेगी। मैं समझता हूँ कि तुम इस सुविधा का सदुपयोग करोगे। तुम्हारी माता जी तुम्हें प्यार करती हैं। प्रिय विनेश तुमको नमस्ते कहता है।

तुम्हारा पिता
वासुदेव शर्मा।

---

(४) पत्र माता को

(छात्रावास के सम्बन्ध में)

छात्रावास द० ए० वी०
आगरा।
१४ जौलाई १९५० ई०

पूजनीय माता जी,

आपका १ जौलाई १९५० का पत्र यथा समय १३ जौलाई १९५० को मिला। अपार आनन्द हुआ। मेरे पत्र न डालने का कारण यह है कि इस सप्ताह में कालेज खुलने के कारण अधिक व्यस्त रहा। किताब और कापियाँ जुटाने में अधिक समय लगा।

मैस अभी नहीं चल रहे थे। इस कारण चाचाजी के पास खाना खाने जाना पड़ता था। इसके अतिरिक्त कमरे मिलने-मिलाने की भी बड़ी असुविधा रही थी। किचन के पास का कमरा मुझे मिला था, मुझे वह पसन्द न था। अब सुपरिनटेण्डेण्ट साहब ने कृपा करके एक अच्छा कमरा दे दिया है। लगभग सारी अड़चनें हल हो गई हैं और कल से सब काम नियमित रूप से चल पड़ा है। मैस का प्रबन्ध भी होगया है। अब कोई गड़बड़ी नहीं रही है। आशा है कि भविष्य में अब कोई असुविधा न आयेगी।

माता जी, छात्रालय का जीवन घर के जीवन से कई बातों में भिन्न है। यहाँ घर की सी उपेक्षा और लापरवाही नहीं। प्रत्येक समय सतर्क रहना पड़ता है। स्वावलम्बन और आत्मशासन की प्रवृत्ति बनानी पड़ती है। अब तो सारा ही बोझ मेरे ऊपर आ पड़ा। घर पर तो मुझे किसी भी बात की चिन्ता न थी। किन्तु अब मैं अपना काम स्वयं देखता हूँ। और अपने दायित्व को भी भली प्रकार समझता हूँ।

एक बात तो है, यद्यपि आप मेरे किसी काम में बाधा नहीं डालती थीं, और मेरे पढने लिखने का कमरा पृथक था। किन्तु वहाँ छात्रालय की सी सुविधा नहीं थी। यहाँ का वातावरण वास्तव में विद्योपार्जन का है। बहुत सी बातें तो यहाँ बिना सिखाये ही सीख जाते हैं। यहां सब लोग पढ़ रहे हैं तो पढ़ ही रहे हैं, यहाँ का प्रत्येक काम नियत समय पर होता है। किन्तु घर पर ऐसी व्यवस्था नहीं हो सकती क्योंकि घर पर कोई न कोई काम आवश्यक निकल आता है और उसमें विद्यार्थी को व्यस्त होना पड़ता है। यहाँ घर की सी कोई चिन्ता नहीं। खाने-पीने का प्रबन्ध वार्डन साहब करते हैं। वही मैस चलाते हैं। महीने में

एक दिन हिसाब करने जाना पड़ता है। न नौकर की देखभाल है न शाकभाजी को मालूम पड़ता है।

हमारे होस्टल में मुझे छोड़कर और एक विद्यार्थी मेरठ का है सब ऊँची कक्षाओं के हैं। मेरा तो एक विद्यार्थी से परिचय हो गया है। मैं कभी कभी पढ़ने-लिखने में उससे सहायता ले लेता हूँ।

यह तो आपको मालूम ही है कि खेलों के प्रति मेरा कैसा प्रेम है? शाम के २ घण्टे मैं खेल कूद में व्यतीत करता हूँ। यहाँ व्यायाम के लिये बड़ा अच्छा प्रबन्ध है। यहाँ दो व्यायामशालाएं हैं। व्यायामशालायें खुले हुये स्थान पर हैं। वहाँ का जलवायु बड़ा ही स्वास्थ्यप्रद है। होस्टल के सामने एक सुविस्तृत मैदान है जिसमें सुबह के समय नियमित रूप से नित्य टहल भी आता हूँ।

छात्रालय की एक बात मुझे बड़ी पसन्द आई है। वह यह है कि प्रत्येक काम नियम से होता है। प्रार्थना की घण्टी बजती है, खाने का घण्टी बजती है और सोने की भी घण्टी बजती है। सारा जीवन घण्टियों के साथ नियमित-सा हो जाता है, यहाँ यदि नियम भङ्ग करो तो रहना कठिन हो जाय। घर पर मेरा कोई नियम ही न था। रात को कभी सिनेमा से बाहर बजे लौट रहा हूँ। कभी ६ बजे स्नान कर रहा हूँ कभी ४ बजे। यहाँ कोई नियम भङ्ग नहीं हो सकता। दस बजे बिजली बन्द कर दी जाती है। इस कारण दस बजे तक अपनी तमाम आवश्यकतायें पूरी कर लेनी पड़ती हैं।

यहाँ सब लोग मिलजुल कर रहते हैं। सबसे प्रेम और सहानुभूति रखनी पड़ती है। एक दूसरे के दुःख दर्द में सम्मिलित होना पड़ता है। एक दूसरे की भावना को समझ कर काम करना पड़ता है।

पिता जी का दुलार नहीं, दिनेश भैया नहीं, महेश भैया की चुलबुलाहट नहीं। यहां मैं हूँ और एक मेरा छोटा कमरा। पहले दो चार दिन तो मुझे यहाँ रहना कठिन हो गया। भला घर का सा सुख कहां। किन्तु पढ़ना तो एक प्रकार का तप है। जो विना कठिनता के कभी सधता ही नहीं। यहाँ आचारे व्यवहार की शिक्षा प्राप्त करने में कुछ कठिनता आयें तो आश्चर्य नहीं है। यद्यपि यहाँ स्नेह का वातावरण नहीं है किन्तु साधनायें सब मौजूद हैं। यही एक विद्यार्थी को चाहिये।

पूज्य पिता जी को मेरा चरण छूना कहना। महेश और दिनेश को प्यार कहना। भाभी को मेरी नमस्ते कहना। दिनेश के लिये मैंने बड़ी-बड़ी अच्छी तस्वीरें खरीदी हैं। मैं ईस्टर की छुट्टियों में लाऊँगा। पिता जी से कह कर इस महीने के खर्चे के साथ ५) और अधिक भिजवा देना।

आपका वात्सल्य-भाजन
सुरेशचन्द्र शर्म्मा
XI

---

(६) पत्र मित्र को

(पहाड़ की यात्रा)

शिमला,
३० जून, १६४१

प्रिय देवेन्द्र।

मैं २६ जून की शाम को यहाँ आ पहुँचा, वास्तव में मैदानों का जलवायु नरक तुल्य ही है। यहा का आकर्षक और मनोहारी दृश्य बड़ा ही सुन्दर है। अब मैं पहाड़ के एक सुन्दर कुंज में बैठा पत्र लिख रहा हूँ, चारों तरफ देवदार के गगनचुम्बी वृक्ष

अपनी मन भावनी छटा से दर्शकों का मन मोह रहे हैं। ठण्डी ठण्डी हवा के झोंके हृदय में एक आनन्द उत्पन्न कर रहे हैं। हमारा स्कूल १६ मई को बन्द हो गया था। १० दिन पिता जी के साथ लखनऊ बिताये। १ जून तक मामा जी के यहाँ इलाहाबाद का आनन्द लूटा। १५ दिन न्यू देहली में चाचा जी के पास रहा। चाचा जी ने मेरी गिरती हुई आरोग्यता को देखकर कहा कि इन छुट्टियों को किसी पहाड़ी स्थान पर क्यों न बिताओ? हमारे दफ्तर के अनेक बाबू गये हुये हैं वहीं किसी के पास ठहर जाना। मुझे उनका परामर्श बड़ा सुन्दर लगा। सचमुच मुझे यहां बड़ा आनन्द अनुभव हो रहा है।

रेल में बड़ी भीड़ थी। इस कारण कुछ विशेष आनन्द नहीं आया। कालिका पहुँचते पहुँचते कुछ सब खिन्न हो गई। और चित्त को कुछ आनन्द हुआ, क्योंकि कालिका पर मैदान से काफी ठण्ड थी। कुछ पहाड़ों के मनोहारी-दृश्य भी सामने आकर मोहक हो रहे थे। गाड़ी पहाड़ियों को चीरती हुई शिमला पहुँचती है। रेल की पटरियाँ बड़े चक्करदार मार्ग से गुजरती हैं। गाड़ी के एक तरफ गहरे खड्ड थे और दूसरी तरफ ऊँची ऊँची चोटियाँ। ऐसी यात्रा मेरे जीवन की पहली यात्रा थी।

हमारी गाड़ी शाम के ६ बज कर ४५ पर शिमले पहुँची, * दरभङ्गा हाउस मुझे पहुँचना था। स्टेशन से टैक्सी किराये की। टैक्सी चक्कर खाती हुई बड़ी तेजी से चलती थी। इससे मेरा जी बड़ा घबराता था। ७, ८. राम राम करके दरभङ्गा हाउस पहुँचा शाम के सात बज रहे थे। शाम को मि महाचार्य का अतिथि रहा। उन्होंने मेरा बड़ा सत्कार किया जिसे मैं जन्म भर नहीं भूल सकता।

प्रातःकाल पर्याप्त सरदी पड़ रही थी। जनवरी के प्रथम सप्ताह से भी अधिक सरदी का मुझे यहां अनुभव हुआ। सारे गर्म कपड़े

पहने, और सैर को चल पड़ा। कैसा अनुपम ? कैसा मनोहारी ?? और कैसा आकर्षक यहा का दृश्य है ??? स्वच्छ पानी के कहीं सोते बह रहे हैं, कहीं स्वच्छ जल वाली झीलें झिलमिला रही हैं। देवदार और चीढ के वृक्षों की शोभा ही निराली है। दूध से भी अधिक स्वच्छ सड़कें। स्वर्ग को लज्जित करने वाली सुरम्य कोठियाँ, आकर्षक और मनोहारी बाग बरबस दर्शकों के मन को मोहते हैं। मैंने एक रिक्शा किराये पर मोल ले ली थी। रिक्शा वाला ही मेरा पथ-प्रदर्शक था। पहले छोटे-शिमला की सैर की। शाम को बालूगञ्ज देखा। दूसरे दिन सजोली देखने गया। इसी दिन शाम का शिमला के दक्षिणी वन और घाटियों का अवलोकन किया।

शिमला देवदार के ऊ चे ऊँचे वृक्षों से ढका हुआ एक परम सुन्दर पहाड़ी नगर है। पिछले २५ वर्ष से शिमला की शोभा नित्य बढती ही जाती है। इसके चारों तरफ देवदार, सनोबर और चीढ़ के घने जङ्गल है जिनका दृश्य बडा ही मनोहारी है। शिमला की शोभा अप्रैल से अक्टूबर तक बहुत-बढ़ जाती है, क्योंकि वायसराय साहब का दफ़तर यहाँ आ जाता है।

यहाँ पैदल यात्रा करने मे बडा आनन्द आता है। यहाँ के मार्ग बडे सुन्दर और आकर्षक है। जङ्गलों मे हिंसक पशुओं का नाम तक नहीं है। पहाडी लोग बडे भोले भाले और सत्यवादी होते हैं। वे घरों मे ताला नहीं लगाते। दूध दही नहीं बेचते, अतिथियों का बड़ा सत्कार करते हैं। तम्बाखू खूब पीते हैं।

शिमला मे होटलों का प्रबन्ध बहुत ही अच्छा है। मैं भी भट्टाचार्य के घर से होटल में आ गया हूँ। आप आ सको तो शिमला अवश्य आओ। आपके आ जाने से आनन्द में अधिकता ही हो जायेगी 'खूब गुजरेगी जब मिल बैठेंगे दीवाने दो'। आपके आने से मुझे बड़ा सौलभ्य प्राप्त होगा। मेरा

स्वास्थ्य सुधर रहा है भूख खूब लगती है। शरीर में स्फूर्ति रहती है। मस्तिष्क में ताजगी आ गई है। मैं अधिक से अधिक १५ मील तक नहीं ठहरूँगा। मेरा कॉलेज २ जौलाई को खुल रहा है।

सिन्धो कम आरते हो।

तुम्हारा अभिन्न-हृदय
महेशचंद्र शर्मा।

---

(७) छोटे भाई को पत्र

चम्पा अग्रवाल इण्टर कालेज,
मथुरा।
१५ अप्रैल १९४१

प्रिय नैपालसिंह

पत्र पढ़कर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई कि तुम परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए हो तुम्हारी मिठाई और पुरस्कार दोनों सुरक्षित रख दिये गये हैं। मेरे पुरस्कारों का निर्वाचन तो तुम जानते ही हो कि मैं ऐसी वस्तुयें पारितोषिक में देता हूँ जो मनोरंजन तो करें ही साथ ही ज्ञान-वृद्धि और चरित्र-निर्माण करने में भी सहायता प्रदान करें। मेरी अभिलाषा है कि तुम्हारा छुट्टी का अवकाश महापुरुषों के जीवन-चरित्र पढ़ने में व्यतीत हो तो बड़ा ही उत्तम है क्योंकि महापुरुषों के जीवनों में ज्ञान और चरित्र दोनों की पर्याप्त सामग्री होती है। जीवन-चरित्र भारतीय-भवन मथुरा के मैनेजर के द्वारा मैंने मँगा लिये हैं उन्हें प्रिय मदनसिंह के हाथों पार्सल द्वारा भिजवा दूँगा। मदनसिंह २४ अप्रैल को माता जी से मिलने पारसौल आ रहे हैं। तुम्हें चाहिये कि

तुम उन पुस्तकों को काफी समझदारी के साथ हृदयङ्गम करते हुये शनैः शनैः पढ़ना। इस तरह से काफी दिनों को तुम्हारे पास पढने की सामग्री हो जायेगी।

मैं लगभग उन्हीं पुरुषों के जीवन-चरित्र तुम्हारे पास भेज रहा हूँ जिनका तुम्हें थोड़ा बहुत परिचय है। उन चरित्रों के पढ़ने से तुम यह बात भली भाति समझ सकोगे कि ससार मे नाम और यश बडे परिश्रम और तपश्चर्या से प्राप्त होता है। जीवन-चरित्रों में एक और अनूठी बात देखोगे कि ससार में जितने भी महापुरुष हुए हैं सब साधारण कोटि के हुए हैं और साधारण कोटि से बढकर उन्होंने अपने को कितना ऊँचा बना लिया है। इन महापुरुषों में प्राय: ऐसे महापुरुष निकलेंगे जिनका बाल्य जीवन बड़ी कठिनाइयों में व्यतीत हुआ है। जिनके पास न भोजन का साधन था और न वस्त्र का और न पढ़ने लिखने की ही सुविधा रही थी। उनमें कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें बाल्यकाल में आर्थिक कठिनाइयों के कारण पढ़ना भी नसीब नहीं हुआ और उन्होंने प्रौढ़ावस्था में स्वय स्वाध्याय करके अपनी शिक्षा को ऊँचा किया। उन बेचारों के पास बालकपन मे न घड़ी थी, न बाईसिकिल, न रेडियो और न फाउण्टेनपेन। यहा तक कि किसी-किसा पर तो पुस्तकें पढ़ने तक को पूरी न थीं। इस सम्बन्ध में तुम तो बड़े भाग्यशाली हो। फिर उन लोगों ने किस धुनि और तत्परता के साथ परिश्रम किया, रात दिन एक किये। वर्षों घोर परिश्रम किया। जनता ने उनके परिश्रम को घृणा की दृष्टि से देखा किन्तु उन्होंने किसी की चिन्ता न की और अपने उद्देश्य की तरफ बढते ही गये। उन्हें जब दीपक जलाने को तेल भी प्राप्त न हुआ तो कमेटी की सड़कों की लालटेनों के पास खडे होकर पढा और अपने पढने के काम को लगातार जारी रक्खा। अमरीकन

महापुरुष अब्राहम लिंकन तो घास फूस जलाकर उनकी रोशनी में पढ़ा करता था।

तुम सारी पुस्तकों को ध्यान से पढ़ो, उन महापुरुषों के जीवन के प्रमुख मार्गों को जिन गुणों के कारण उन्होंने इतनी उन्नति प्राप्त की नोट करते जाओ। उनके आचरण और व्यवहार को अपने आचरण और व्यवहार से मिलाओ। अपने अन्दर यदि कमी पाओ तो अपने को वैसा ही बनाने की चेष्टा करो। उनकी प्रतिज्ञाओं को देखो वह उन पर कैसे अटल रहे? भयङ्कर परिस्थिति में भी उन्होंने अपने को विचलित नहीं होने दिया और न अपने साहस को खोया। कोलम्बस के जीवन चरित्र में तुम देखोगे कि लोगों ने उसे पागल कहा, उसे विक्षिप्त बतलाया और उसे बांधकर समुद्र में फेंकने को तैयार हो गये किन्तु उसने अपने अटल विश्वास और साहस को न खोया। अन्त में उसकी विजय हुई।

इसी तरह राणा प्रताप के जीवन से, हक़ीकतराय और नैपोलियन के चरित्रों से हमें पता चलता है कि वास्तव में कष्ट सहन प्रतिज्ञा पालन दृढ़-विश्वास और घोर अध्यवसाय में ही वास्तव में मनुष्य जीवन की सार्थकता है। किसी प्रकार के विलासी जीवन में नहीं।

तुम्हें चाहिये कि इन जीवनों को पढ़ो और उनके जीवनों के अनुकूल अपने जीवन में वैसे ही गुण उत्पन्न करो। तब ही तुम्हारा परिश्रम सफल होगा। अन्यथा नहीं।

तुम्हारा बड़ा भाई
शिवसिंह एम ए मि-राज।

———

(८) शिष्य को पत्र

(कुसङ्गति की हानियों पर)

शान्त-कुञ्ज,
गाँधीनगर, देहली।
२५—४—४१

प्रिय अजीतकुमार।

संसार मे कुसङ्ग से बढ़कर कोई दुखदाई वस्तु नहीं है। क्षण भर का कुसङ्ग मनुष्य के जीवन के नाटक को बदल देता है। बच्चों की तो बात ही प्रथक है मेरे जैसे बूढ़े व्यक्ति भी कुसङ्ग की भयङ्कर भीषणता से नहीं बचते मैं सत्य कहता हूँ कि विद्यार्थियों के सर्वनाश का एकमात्र कारण कुसङ्ग है। कुसङ्ग के एक ऐसा संक्रामक रोग है जो व्यक्ति को कभी भी अछूता नहीं छोड़ता और अपना प्रभाव छोड़ता है। इससे अनेक अवगुणों का जन्म होता है। हम नित्य देखते हैं कि कोई बालक तनिक भी कुसङ्ग के संसर्ग मे गया, बस, उसका जीवन नाश हुआ। बच्चे की यह कुसंग की स्वतन्त्रता अवश्य ले डूबती है। कुसंग के चक्कर में यही नहीं कि गरीबों के लडके ही पड़ते हों। गरीबों को तो अपनी गरीबी की चपेट ही होश नहीं लेने देती। किन्तु बडे-बडे धनिकों, आचार्यों, कुलीन धर्मज्ञों के बच्चों को कुसङ्ग के शिकार ही दुःख भोगते देखा है —

> बसि कुसङ्ग चाहत कुशल, तुलसी यह अफ़सोस।
> महिमा घटी समुद्र की, रावन बस्यौ पड़ौस॥

अतः मनुष्य का परम कर्त्तव्य है कि वह जहाँ तक संभव हो सके कुसङ्ग से दूर रहे। जो बालक इस रोग से दूर रहते हैं वही सुख शांति, और कीर्ति उपलब्ध करते हैं। ज्ञान का विकास सदैव भद्र समाज मे ही होता है। उत्तम शिष्टाचार, सुन्दर भावनायें

उत्तम विचारों का जन्म मनुष्य के सुसङ्गति से उत्पन्न होता है। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह अपने जीवन को सदैव भले मनुष्यों के संसर्ग में व्यतीत करे। तब ही उसे यश प्राप्त हो सकता है अन्यथा नहीं —

चाहिए बड़ाई चाहिये, तजे न उत्तम साथ।
ज्यों पलास सङ्ग पान के, पहुँचे राजा हाथ॥

देखने में आता है कि कीड़ा पुष्पों के संसर्ग से देवताओं के माथे पर विराजता है, काँच सोने के संसर्ग से मरकतमणि की कान्ति प्राप्त करता है। इसी प्रकार मनुष्य सत्संगति से सुख सम्पत्ति और प्रतिष्ठा उपलब्ध करता है। संसार में जितने भी महापुरुष हुये हैं वह सब के सब उत्तम पुरुषों के संसर्ग में रहे हैं।

तुम्हें सदैव भले लड़कों के संसर्ग में रहना चाहिये। बुरे और दुष्ट लड़कों के संसर्ग से सदैव अपने को दूर रक्खो। बुरे लड़कों से संसर्ग बढ़ाना अपने घरमें आपदाओं का आवाहन करना है।

तुम्हारा शुभेच्छु,
प्यारेलाल शर्मा।

---

(९) विवाह का निमन्त्रण-पत्र

श्रीमान् प० महाराजप्रसाद जी की सेवा में सविनय निवेदन है कि परमात्मा की असीम कृपा से मेरे पुत्र चिरंजीव सुदर्शनलाल का शुभ विवाह श्रीमान् पं० भीमसेन शर्मा आगरा निवासी की विदुषी कन्या सुराजप्रभा से होना निश्चित हुआ है। विवाह की शुभ तिथी वैशाख शुक्ला ७ गुरुवार सं० १९५८ विक्रमी तदनुसार १२ मई सन् १९५१ ई० निश्चित हुई है। अतः आपसे विनम्र प्रार्थना है कि आप इस शुभ अवसर पर अपने इष्ट मित्रों सहित पधार कर

विवाह की शोभा को बढ़ाइयेगा और सेवक को अपनी कृपा कर आभारी बनाइयेगा।

आते हैं जिस भाव से, भक्तों में भगवान।
उसी भाव से कृपा कर, दर्शन दें श्रीमान्॥

हाथरस,
२६, मुरसान दरवाजा

आपका दर्शनाभिलाषी,
मेघश्याम शर्मा, पेन्शनर, जज।

---

(१०) शोक पत्र

(मित्रको उसकी पत्नी की मृत्यु पर)

दरिया गञ्ज, देहली।
३० जून १६४१

सुहृदवर।

आपका हृदय-विदारक पत्र पढा पढकर अपार दुःख हुआ १०, १५ मिनट चेतना शून्य हो गया। हाय यह क्या हो गया? आपके ऊपर यह कैसा विपत्ति का पहाड टूट पडा? अरे २७ जून को तो मैं उन्हें पूर्ण स्वस्थ छोड़ आया था। यह आकस्मिक घटना कैसी घट गई। अरे विमले तुम किस लोक मे लोप हो गईं? तुम तो कभी साथ न छोडने की प्रतिज्ञा ली हुई थीं। यह मध्य-जीवन मे धोखा देना कैसा? आज तुमने अपनी प्रतिज्ञा के विरुद्ध यह कैसा अनहोना नाटक खेला? विमला तुमको एक क्षण भी पतिदेव से अलग होना दुःखदायी प्रतीत होता था। आज तुम कैसे निर्मोही बनकर अन्तर्ध्यान हो गई? क्या तुम्हें अपने सुकुमार बच्चों का भी मोह नहीं रहा? हे नम्र हृदये, वि ले तुम तो इतनी कठोर हृदया नहीं थीं? आज तुम मे यह कठोरता कहाँ से आगई। अरे मैं क्या बकने लगा? इन बातों से मेरा क्या प्रयोजन?

सुहृद्वर निस्सन्देह तुम्हारे लिये यह घटना बड़ी दुःखदायिनी है। इस घटना ने आपके सरस जीवन को नीरस बना दिया किन्तु ऐसी परिस्थिति में सन्तोष के अतिरिक्त कुछ किया ही नहीं जा सकता। चिन्ता से शारीरिक स्वास्थ्य और खो दोगे। यह बुद्धिमानी नहीं। प्रियवर यह संसार अनित्य है, हमें और आपको भी इसी मार्ग का अवलम्बन करना है। संसार के समस्त धन, यौवन पुत्र कलत्र अनित्य हैं। बुद्धिमानों को इसके मोह में नहीं फँसना चाहिये। तुम तो स्वयं बुद्धिमान हो आप से अधिक कहना व्यर्थ है। मुझे आपके इस शोक में आपके साथ हार्दिक समवेदना है। अब तो केवल भगवान् से यही प्रार्थना है कि प्रभु दिवंगत आत्मा को पूर्ण शान्ति प्रदान करें और आप में इस शोक के सहने की शक्ति प्रदान करें।

आपका अभिन्न-हृदय,

कामताप्रसाद।

---

(११) प्रीति-भोज का निमन्त्रण-पत्र

श्रीमान्!

आपको यह सुनकर अपार हर्ष होगा कि मेरे पुत्र चिरंजीव मदन गोपाल एम ए का निर्वाचन पी सी एस के लिये यू पी गवर्नमेंट ने किया है। मदनगोपाल की इस सफलता के उपलक्ष में १४ जौलाई १९४१ को लेखक ने एक प्रीति-भोज देना निश्चित किया है। प्रीति-भोज का आयोजन ५॥ बजे सायंकाल महत्ता पार्क में किया गया है। अतः आप से सानुरोध सविनय प्रार्थना है

कि आप इस शुभ अवसर पर पधार कर मुझ अकिंचिन को अनुग्रहीत करें।

एटा
पाटियाली दरवाजा
१० जौ०, १६४१

आपका दर्शनाभिलाषी—
चन्द्रशेखर, बी ए एल बी
वकील।

---

(१२) गार्डन-पार्टी का पत्र

श्रीमान् चतुर्वेदी जी,

क्या आप १५ अप्रैल की शाम को ८ बजे गयाप्रसाद लाइब्रेरी कानपुर में मेरे साथ चाय पानी का निमन्त्रण स्वीकार करेंगे ? इस मित्र मण्डली में आपको पाकर मुझे अपार हर्ष होगा।

कैलाश-आश्रम,
कानपुर।
१० अप्रैल, १६४१

आपका दर्शनाभिलाषी,
हीरालाल 'खन्ना'
प्रिन्सपल

---

(१३) विधेयात्मक उत्तर

माननीय खन्ना जी,

आपके निमन्त्रण के लिये कोटिशः धन्यवाद। मैं १५ अप्रैल के सायङ्काल अवश्य आपकी मित्र-गोष्टी मे सम्मिलित होकर आनद उपलब्ध करूँगा।

कौंसिल हाउस,
लखनऊ।
१२ अप्रैल, १६४१

आपका आज्ञाकारी—
मनोहरदास चतुर्वेदी,
आई सी एस।

---

(१४) निषेधात्मक उत्तर

प्रिय रामा जी

आपके निमन्त्रणपत्र के लिये हार्दिक धन्यवाद। मुझे बड़े खेद के साथ लिखना पड़ता है कि मैं आपकी चाय पार्टी के आनन्द को इनजाय (enjoy) नहीं कर सका। क्योंकि १२ अप्रैल को मैं दौरे पर देहरादून हूँगा और उस दिन रामनगर ग्राम में पंचायत घर की स्थापना करनी है। पञ्चायत घर का उद्घाटन सरकार मेरे ही द्वारा सम्पन्न होता है। ऐसी परिस्थिति में मैं आपकी आज्ञा का पालन करने में असमर्थ हूँ। आशा है कि आप मेरी अनुपस्थिति को क्षमा कर देंगे।

कौंसिल हाउस,	आपका आज्ञाकारी —
लखनऊ।	मनोहरदास चतुर्वेदी
१० अप्रैल १९४२	आई. सी. एस

---

(१५) पुस्तक विक्रेता को पत्र

सस्ता साहित्य-मण्डल
देहली
८ जौलाई सन १९४१ ई०

श्री मैनेजर साहब
इण्डियन प्रेस इलाहाबाद।

प्रिय महाशय

मण्डल को निम्न लिखित पुस्तकों की आवश्यकता है। उचित कमीशन काट कर पुस्तकों को रेलवे पारसल से भिजवा दीजियेगा। आपके रुपयों का बिल सूचना मिलते ही बिल्टी छुड़ाली जायगी और भुगतान कर दिया जायगा।

१-- रामायण तुलसीकृत सटीक, १० प्रतिया बडा साइज़
२ — सचित्र महाभारत प० महावीरप्रसाद वाला, १० प्रतिया
३ — पाकेट-हिन्दी कोष, १० प्रतिया
४ — शेखचिल्ली की कहानियाँ, १५ प्रतियाँ
५ — वैज्ञानिकों की कहानिया, १० प्रतियाँ
५ — पृथ्वी प्रदक्षिणा, १० प्रतिया
७ — लोक-व्यवहार, १० प्रतिया

भवदीय—
विनोदकुमार शर्म्मा,
सञ्चालक।

---

(१६) शोक-प्रस्ताव

हिन्द-प्रचारणी सभा देहली के सदस्यों की यह सभा पण्डित वासुदेव शर्म्मा साहित्यरत्न के जेष्ठ पुत्र रमेशचन्द्र शर्मा की असामयिक मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करती है और ईश्वर से प्रार्थना करती है कि वह दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे और उक्त प० जी तथा उनके सतप्त परिवार को धैर्य प्रदान करें।

देहली
२८ मार्च, १६४० ई०

---

(१७) याचना-पत्र

होली दरवाजा मथुरा।
१ मार्च १९४१ ई

श्री शिवमंगल सिंह जी एम ए
एल एल. बी. मथुरा।

प्रिय महाशय,

विगत तीन मास से आपने हमारे 'शाम्ती-निकेतन' बंगले का किराया अब तक नहीं चुकाया। यद्यपि ऐग्रीमेण्ट में मास प्रति मास चुकाने का वचन है। इस समय तक बंगले का किराया ७५) रु० चाहिये।

कृपया पत्र के देखते ही ७५ भेज दीजियेगा अन्यथा आपके ऊपर अदालती कार्यवाही करनी पड़ेगी और आप व्यर्थ मे खर्च से बेजार होंगे।

भवदीय,
केदारनाथ भार्गव"

---

(१८) छुट्टी का प्रार्थना-पत्र

श्रीमान् हैड मास्टर साहब
डी ए वी हाई स्कूल,
आगरा।

श्रीमान् जी,

मेरे बड़े भाई का विवाह १० फरवरी सन् १९४१ को होना निश्चित हुआ है। मेरा इस विवाह में सम्मिलित होना अत्यन्त

आवश्यक है। अत आपसे प्रार्थना है कि आप मुझे ८ से १२ फ़रवरी तक की छुट्टी दे दीजियेगा। बड़ी कृपा होगी।

आपका आज्ञाकारी शिष्य—
दिनेशचन्द्र शर्मा,
कक्षा ८ अ।

आगरा
५ फ़रवरी, १९४१

---

(१९) हाकी मैच खेलने का आवेदन-पत्र

श्रीमान् हैड मास्टर, रोहतगी स्कूल
रोशनपुरा देहली।

मान्यवर,

हम लोग आपके स्कूल की हॉकी टीम से आज शाम के ५ बजे कम्पनी-बाग में 'हॉकी मैच' खेलना चाहते हैं। ग्राउण्ड की स्वीकृति म्यूनिस्पैलिटी से हमने लेली है। प्रार्थना है कि आप हमारे इस 'फ्रेण्डली-मैच को स्वीकार करेंगे।

भवदीय —
महावीरसिंह "राजपूत क्लब"
छीपीवाड़ा-देहली।

देहली,
२० अक्टूबर, १९४१

---

(२०) वधाई-पत्र

(मित्र को पुत्र जन्म की वधाई)

कैलाश कुटीर, कानपुर।
१५ जून १९४१

प्रिय राधाकृष्ण,

वधाई! वधाई!! वधाई!!!

आज आनन्द का वारापार नहीं। आज चतुर्दिश मुझे आनन्द ही आनन्द दृष्टि गोचर हो रहा है। ससार में पुत्र रत्न से बढ़कर

कोई वस्तु नहीं है। क्यों न हो ? पुत्र है भी तो वंश का आधार। जिस घर में पुत्र नहीं वह घर मरघट तुल्य है। घर में धन है, कलत्र है और ऐश्वर्य किन्तु एक पुत्र नहीं है तो सारा का सारा निरर्थक। निस्सन्देह पुत्र माता-पिता का शिरोमणि है, उनके मनोरञ्जन की वस्तु है उनका सर्वस्व है और उनका जीवन प्राण है। पुत्र की तोतली वाणी हृदय में अपार आनन्द उत्पन्न करती है हृदय को आनन्दित करती है और हृदय में अनुभूत शान्ति उत्पन्न करती है। संसार में पुत्र से बढ़कर कोई धन नहीं और सुख नहीं। पुत्र विपत्ति के समय घायल हृदय की औषधि बुढ़ापे की लकड़ी और आँखों की पुतली है। भगवान की अपार कृपा है, कि आपके घर पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ है। भगवान् इसको दीर्घजीवन यश, कीर्ति और ऐश्वर्य प्रदान करें।

हृदय हर्ष अति हर्ष अपारा सुनि तव पुत्र जन्म भा प्यारा।
बसत यु हमी भारत ताला भगवा गान करहिं नव बाला॥
होय चिरंजीवी जग माहीं इहि सुख जग कछु दुर्लभ नाहीं।

भगवान् आपके आगत नवजात-शिशु को दीर्घजीवन प्रदान करें। उसे बल दें शक्ति और साहस प्रदान करें जिससे यह संसार में अमर नाम उपलब्ध करे। हमारी तो यही मंगल कामना है।

आपका शुभाभिलाषी
हरिदत्त शर्मा एम ए,
पी एच डी।

---

(२१) समालोचना

आदर्श-निबन्ध और पत्र लेखन:—

' [लेखक—पण्डित वासुदेव शर्मा "साहित्य-रत्न" भूतपूर्व हिंदी लेक्चरर जाट-इण्टरमीडेट कालेज लखावटी (बुलन्दशहर)

प्रकाशक — बाबू लक्ष्मीनारायण अग्रवाल मौडर्न-प्रेस, नमक मण्डी, आगरा। पृष्ठ संख्या ३५२। छपाई सफाई उत्तम और गैटप आकर्षक।

वैसे तो विद्यार्थियों के सामने निबन्ध की अनेक पुस्तकें आती रहती हैं किन्तु प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियों के बड़े काम की है। इसमें निबन्धों की भाषा बड़ी सरल है। भाषा शैली बड़ी उत्तम है। सर्वत्र प्रसाद गुण का बाहुल्य है। शब्दों की शक्ति का गठन बड़ी उत्तम रीति से किया है। लगभग सभी प्रकार के निबन्धों का समावेश करने का प्रयत्न लेखक ने किया है। लेखक ने किसी आधुनिक और नवीनतम विषय को नहीं छोड़ा है। अभिनन्दन-पत्र, विदाई-पत्र और विविध प्रकार के आवेदन पत्रों का समावेश कर देने से पुस्तक की महत्ता और भी बढ़ गई है।

प्रस्तुत पुस्तक हाई स्कूल, इण्टरमीडेट और हिन्दी की विशेष परीक्षाओं में बैठने वाले विद्यार्थियों के बड़े काम की है। विद्यार्थी जगत को उक्त पुस्तक से अधिक लाभ उठाना चाहिये।

— गोकुलचन्द्र शर्मा, एम. ए,
हिन्दी विभाग D S कॉलेज, अलीगढ़।

(२२) अभिनन्दन-पत्र

हिन्दू-हृदय-सम्राट् वीर विनायक दामोदर सावरकर जी प्रधान
" अखिल भारतवर्षीय हिन्दू महा सभा "
की पुनीत सेवा में—

❀ मान पत्र ❀

श्रद्धेय सावरकर जी!

आज का दिन हम दिल्ली निवासी हिन्दुओं का गौरव का है। हमारे हर्ष का वारापार नहीं। आपने हमारे बीच पधार कर जो

गौरव-प्रदान किया है उसके हम अत्यन्त आभारी हैं। आपकी व्यक्तिगत और आपकी हिन्दू समाज की महान सेवायें किसी से छिपी हुई नहीं हैं। आपका सारा जीवन हिन्दुत्व की गौरव वृद्धि में व्यतीत हुआ है। इसके लिये समस्त हिन्दू जनता आपकी चिर ऋणी है।

सुहृद्वर,

हमारी संस्कृति को, हमारी भावनाओं को और हमारी भाषा को जो ठेस पहुँच रही है वह आपसे छिपी नहीं है। बङ्गाल और पञ्जाब में हिन्दू हितों पर कुठाराघात हो रहे हैं। सिन्ध के हिन्दुओं के साथ हुए घोर अत्याचार, इस्लामी रियासतों में हिन्दुओं के धार्मिक प्रतिबन्ध, पाकिस्तान की हुल्लड़बाजी और हमारी वर्तमान गवर्नमेण्ट की उदासीन नीति आपको भली भाँति विदित है। ऐसी भीषण परिस्थिति में हिन्दुत्व की रक्षा और भावी-भाग्य विधान के लिये आपकी बनाई योजना पर अक्षरशः तन मन और धन से चलने को हम प्रस्तुत हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपकी भावना को सफल बनाने में देहली प्रान्त किसी प्रकार पीछे न रहेगा।

हिन्दू महासभा के मदुरा वाले प्रस्ताव का हम सिपाही की हैसियत से स्वागत करते हैं और हम समझते हैं कि यह निश्चय भारत की पुरानी दासता को नष्ट करने का पुनीत प्रयास होगा।

हम आपके निश्चय को बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं और नत मस्तक हो उसको मानते हैं। हम दिल्ली निवासियों ने एक सहस्र वर्षों में अनेक क्रान्तियाँ और अत्याचार देखे हैं। बड़े बड़े भीषण रक्तपात देखे हैं। हमने और हमारे पूर्वजों ने अनेक बार उन अत्याचारों का सामना किया है। इस दासता के लम्बे काल में भी हमने प्रताप, गोविन्दसिंह, बन्दा बैरागी, शिवाजी और

लक्ष्मीबाई को जन्म दिया किन्तु समय की गति और हमारी पारस्परिक फूट और दलबन्दी ने सारे उद्योगों पर पानी फेर दिया और हमारी दासता का अन्त नहीं हो पाया। इस लम्बे काल में विजेताओं ने हमारा खूब रक्त शोषण किया। अब हम अपने घर में आज़ाद होकर रहना चाहते हैं। हम किसी धर्म से द्वेष नहीं करना चाहते और न हमें संसार का साम्राज्य चाहिये। हम हिंदू जाति का विकास चाहते हैं और संसार को यह बता देना चाहते हैं कि संसार में शांति का पथ हिंसा से नहीं वरन अहिंसा से प्राप्त होता है।

महानुभाव,

हम धार्मिक दायित्व को समझते हैं। हम देहली के समस्त निवासी जिनकी रग रग में देहली में हुये अत्याचारों की कहानियां खून का खौलता रही हैं। हम आपको अपना सर्वश्रेष्ठ नेता, अधिनायक और सेनापति मानकर स्वागत करते हैं। भारत की लगभग सभी क्रांतियों का जन्म देहली में या उसके आस पास ही हुआ है। देहली अनेक क्रांतियों की पूरी रूप रेखायें भी देख चुकी है। 'पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्ती वाले मद्रास के प्रस्ताव का सूत्रपात भी आज आप देहली में करने जा रहे हैं। अतः आपके इस पुनीत कार्य के लिये हम स्वागत करते हैं।

हम हैं आपके अनुगत,

दिल्ली प्रांत के समस्त "हिंदू"

दिल्ली
१६-१-४१

संसार में जितने बलशाली और यशस्वी पुरुष हुये हैं वह किसी न किसी रूप में अवश्य व्यायाम करते थे। कोई टहलता था, कोई, प्रकृति-निरीक्षण को निकल जाता था। कोई मृगया-विहारी था। कोई चौगान से प्रेम रखता था। अभिप्राय यह है किसी न किसी प्रकार का व्यायाम करके स्वास्थ्य उपार्जन करते थे। और पुरुषार्थ को बढ़ाते थे।

जब तक स्वस्थ शरीर न होगा तब तक मस्तिष्क भी स्वस्थ और स्फूर्तिदायक न होगा। स्वस्थ रहने के लिये व्यायाम आवश्यक है। व्यायाम मे यही नहीं है कि हॉकी ही खेली जावे। फुटबाल खेलिये, वॉलीबाल खेलिये, तैरिये, घोड़े पर सवारी कीजिये, प्रात काल लम्बे घूमने निकल जाइये। निष्कर्ष यह है कि किसी प्रकार हाथ पैर को हिलाइये डुलाइये। यह विचार ठीक नहीं कि पढ़ने में बाधा आती है और समय नहीं मिलता। स्मरण रक्खो कि नियमित व्यायाम के बिना संसार मे जीवन सुखमय नहीं बन सकता।

अब मुझे पूर्ण आशा है कि तुम मेरे इन विचारों पर पूरा ध्यान रक्खोगे और अपने जीवन को सुखद बनाने की चेष्टा करोगे। प्रिय रामकिशोर से प्यार कहना। मिलने वालों को यथा योग्य।

तुम्हारा भाई,

पदमकान, बारहवीं क्लास।

---

(२४) कपड़ा खरीदने का पत्र

मैनेजर देहली-क्लौथ-मिल-स्टोर,

चांदनी चौक देहली।

महोदय जी,

कृपया आप निम्नलिखित कपड़ा शीघ्र से शीघ्र भिजवा

कीजियेगा। सामान रेल द्वारा भेजिये। आपके रुपयों का बिल सूचना मिलते ही फौरन चुकता कर दिया जायगा। मंगाई हुई सामग्री।

१—पचास मोती जोड़े मर्दाने (नं० २११)
२—पचास मोती जोड़े जनाने (नं० ४४२)
३—थान नग दस छट्टा बड़े अरज के (नम्बर बारह)
४—थान नग २५ खादी गज के अर्ज के (नम्बर बारह)
५—दस थान सादा मारकीन (मझली बाला)

मिर्जा गञ्ज
अलीगढ़।
२५ मई १९४१

आपका—
श्रीराम हरीराम
बजाज।

---

(२५) मित्र को पत्र

(अपनी निराशा पर)

शान्ति-कुटीर,
बसीपुर इगलास अलीगढ़।
२५ माघ १९४१ ई०।

प्रिय वरेषु

आप मेरी अवस्था क्या पूछते हो? संसार का आपदाएँ झेलने के लिये ही मेरा जन्म हुआ है। जीवन का कोई क्षण ऐसा नहीं व्यतीत हुआ जिसमें मैं यह कह सकूं कि मैं सुखी हूँ मेरा जीवन विचित्र घटनामय है। अपनी दुःख कथा किसे सुनाऊँ मेरी दुःख कहानी सुनने का किसको अवकाश है? तिस पर आप पूछते हैं कि आपकी उदासी का क्या कारण है? इस कृपा के लिये भी मैं आपका धन्यवाद अर्पण करता हूँ क्योंकि इससे मुझे कुछ शांति मिली। निरन्तर बीती हुई बातों पर विचार करता बुद्धिमत्ता नहीं

कहलाती । मनुष्य को सदैव अपनी वर्तमान स्थिति में खुश रहना चाहिये। मानवी स्वभाव है कि वह कभी एक परस्थिति मे चाहे वह कैसा ही सुखद क्यों न हो प्रसन्न नहीं रहता ? और विशेषकर जब कि उसे अपनी योग्यता और परिश्रम का फल नहीं मिलता। उसके लिये जीवन एक भार स्वरूप हो जाता है।

यह तो आपको विदित ही है कि मेरा जन्म एक साधारण परिवार मे हुआ है। सारा बाल्यकाल और शिक्षण काल आर्थिक कठिनाइयों में व्यतीत हुआ। मैं कैसे कैसे अपना शिक्षा काल समाप्त कर सका इसके वर्णन की आवश्यकता ही है न कुछ लाभ ही। पिछली बातों को जाने दीजिये। ६ अप्रेल, १९१९ की भारत की स्वतन्त्र भावनाओं ने मेरे हृदय मे भी स्वतन्त्रता की लहर प्रवाहित करदीं। पराधीन होकर जीवित रहना मेरे हृदय में खटकने लगा। देश कैसे स्वतन्त्र हो, रात दिन यही धुन सवार हो गई। उसके साधन भी मिले, प्रयत्न हुये, आंशिक सफलतायें भी मिलीं, हृदय में साहस का सञ्चार हुआ, आगे बढ़ चलने की प्रबल इच्छा हो उठी। गांधीजी के जीवन का प्रभाव मेरे जीवन पर पड़ा। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अस्वाद व्रत की प्रतिज्ञायें लीं। निर्भयता सीमाओं को उल्लंघन करने लगी। इसने जीवन को अन्धेरे में डाल दिया।

परिणाम स्वरूप गवरमेण्ट सर्विस से हाथ खींचना पड़ा। अब मस्तिष्क को अधिक विकसित होने का अवकाश मिला। संयम और त्याग चर्म सीमाओं को पहुँच गये। रात दिन देश की स्वतन्त्रता की धुनि सवार होगई। अपने पास-पल्ले जो कुछ था वह सब स्वतन्त्रता देवी की बलिवेदी पर चढ़ा दिया और भोजनों के लाले पड़ गये। उधर सन् १९२१ मे आन्दोलन भी ढीला पड़ा। मेरी आर्थिक कठिनाई ने मेरे मस्तिष्क की चूल्ह को ढीला कर दिया।

निस्सन्देह संसार में निर्धन जीवन बड़ा भयङ्कर जीवन है। निर्धनता मनुष्य की सारी चौ-चपड़ भुला देता है। मनुष्य वास्तव में सङ्कटकाल में मनुष्यता के सामने में रहता है, सम्पत्काल में मनुष्य अपने वास्तविक रूप में नहीं होता। अर्थाभाव ने मेरी मोह निद्रा तोड़ी। मैं और मेरा सम्बन्धित परिवार आर्थिक कठिनाइयों से व्यथित हो उठा। और मुझे पुनः जीविकोपार्जन के लिये विवश किया।

जनवरी सन् १९२२ के दिन थे। मस्तिष्क में अनेक स्वकार्य घूम रहे थीं। सौभाग्य से ख्वाजा अब्दुल मजीद साहब प्रिन्सपल राष्ट्रीय-यूनीवर्सिटी अलीगढ़ का सहारा प्राप्त हुआ। उन्होंने मेरी राष्ट्रीय भावनाओं से वास्तवा सुभाव दे दिया। उन्होंने मुझे बताया कि सेवा-कार्य तब तक सम्यक् प्रकार से सम्पन्न नहीं हो सकता जब तक कि पेट की समस्या नहीं सुलझ जाती। स्कूल और कालिजों को उन्होंने मेरा क्षेत्र निर्धारित किया और कहा कि राष्ट्र का वास्तविक निर्माण राष्ट्र के नवयुवकों का इस करने में है। क्योंकि राष्ट्र का भविष्य उनके भावी नवयुवकों के ऊपर निर्भर होता है। मेरी अन्तरात्मा ने उनकी बात को ग्रहण किया। मैंने उनके बताये मार्ग का अनुसरण किया। मेरे कार्य का प्रथम क्षेत्र मुसलिम यूनीवर्सिटी सिटी स्कूल बना। अब भोजन और राष्ट्र-सेवा साथ साथ चलने लगीं। अपने विचारों के फैलाने का यहाँ पूरा अवसर प्राप्त हुआ। श्री सम्भवतः अशीलों हैडमास्टर मुसलिम यूनीवर्सिटी सिटी स्कूल के आचरण का मेरे ऊपर बड़ा प्रभाव पड़ा। उनके सहवास ने मेरे जीवन में एक विशेष परिवर्तन कर दिया। मैं इतने लम्बे काल में मैं भी उन्हें नहीं भूला हूँ।

संसार की वास्तविकता को मौलवी साहब के सहवास में सीखा साम्प्रदायिक भावनाओं का सच्चा रूप यहाँ समझा। यहाँ भी

अधिक समय व्यतीत नहीं कर सका। सितम्बर सन् १६२४ ई० के पुनीत दिनों मे एक मित्र के द्वारा मैं जाट इण्टर कालेज, लखावटी–बुलन्दशहर में पहुँचा। समय अनुकूल मिला और हैड हिन्दी अध्यापक होगया। मैनेजर और प्रिन्सपल के अनुकूल रहने से समय बड़ा आनन्द से कटने लगा। किंतु मेरी मानसिक चितायें दूर नहीं हुई। यहा विद्यार्थियों में स्वदेशी भावनायें और राष्ट्र-प्रेम की आग धधकाने का मुझे पूरा अवकाश मिला और मेरी आशायें पल्लवित होती नजर आने लगीं। मुझे कुछ आनन्द आने लगा। किन्तु मेरा आनन्द चिरस्थाई कैसे हो सकता था। क्योंकि मेरा जन्म तो समार के सघर्षों मे फसने के लिये दुखी और परेशान होने के लिये हुआ है। भला आनन्द अधिक काल मेरे निकट कैसे ठहर सकता था?

रायबहादुर चौ० अमरसिंह ओ० बी० ई० का युग था। लखावटी कालेज अपनी पूरी यौवनावस्था से गुजर रहा था। ठा० झम्मनसिंह की दया से मुझे पर्याप्त उन्नति करने का अवसर प्राप्त हुआ। परीक्षाफल प्रतिवर्ष शत प्रतिशत रहने लगे। मैनेजमेण्ट ने भी मासिक वेतन बढाने में अपनी उदारता उठा न रक्खी। मुझे मेरी योग्यता से अधिक वेतन मिलने लगा। कहिये गुण ग्राहकता इससे अधिक क्या होती? प्रतिक्षण प्रसन्नता रहने लगी। कुछ यौवन की उमङ्ग, कुछ बढ़ चलने का चाव, अधिकारियों की प्रसन्नता ने मेरे उत्साह मे सहस्रगुना जीना उत्पन्न कर दिया। किन्तु "मेरे मन कुछ और था कर्ता के मन और" फिर भी आशा ने गुदगुदाया और पुन गवर्नमेण्ट सर्विस की सनक सवार हुई। दैवात् उम्र में भी गुंजायश निकल आई। स्वर्गीय रायबहादुर साहब स्वय डाइरेक्टर आफ एज्यूकेशन से मिले, तकड़ी शिफ़ारिश की। सर मालकमहेली गवर्नर यू० पी० से भी

मिला। गवर्नर साहब ने मुझे गवर्नमेंट सर्विस में स्थान का पूरा वचन दिया। किन्तु भाग्य के आगे प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं। भाग्य ने पलटा खाया निराशा की कारी आई, आइ्रता की पत्ते लगाई गई और जवाब मिलने लगे। साथ ही १६ जून सन १९३४ ई० को रायबहादुर साहब की मृत्यु होगई। बस निश्चय होगया कि अब कुछ होना हवाना नहीं। मनुष्य के पतन के ठीक दिन वहीं से आरम्भ होते हैं जब वह अपनी योग्यता, प्रतिष्ठा और निश्चिन्तता पर अभिमान होने लगता है। रायबहादुर साहब की मृत्यु के पश्चात चारों ओर से विरोधियों की संख्या बढ़ने लगी। श्री शिवसिंह एम ए प्रिन्सपल ने स्वयं के बड़ा होकर मुझे ऐसा धोखा दिया कि मेरा जीवन ही अन्धकारमय होगया।

कोउ न काहू का सुख दुख दाता। निज कृत कर्म भोगै सब भ्राता॥

बस पार्टी प्रबल हुई प्रथम मुझे और बाद में श्री० शिवसिंह को बलि की वेदी पर चढ़ा दिया। सारी आशायें निराशा में परिणित होगई। कहीं भी आशा रूपी गोधूली का मस्तक न दिखाई दी।

सन १९३६ में राष्ट्रीय महासभा ने कौंसिल में प्रवेश किया। कांग्रेस के मिनिस्टरी काल में बिना भेद-भाव और अवस्था के राष्ट्रीय स्वयं सेवकों को गवर्नमेंट सर्विस मिलने लगी। मेरी सेवायें भी काम में आईं। पहले एम्प्लायमेंट के सुपरवाईजर के पद पर मेरी भी नियुक्ति पन्तजी के कर कमलों द्वारा हुई। राष्ट्रीय सेवा की भावना में यह दिन भी भाते न जाने। अक्टूबर सन १९३९ में कांग्रेस मिनिस्टरी स्वयं अलग हो राष्ट्र कार्य में प्रवृत्त हुई। विवश मुझे भी अपने पद से पद त्याग करना पड़ा। बस फिर आपदा का पहाड़ सिर पर टूट पड़ा। २२ अक्टूबर ३९ को निरावलम्ब और निराश्रय देहली की शरण आया। देहली में

पदार्पण करते समय जेब में २) रु० और हृदय मे असहायो के सहायक भगवान थे।

देहली मे सामान को एक मित्र के यहा पटक भाग्य का अभिनय देखने लगा। भाग्य बडा प्रबल है। उसकी लीला समझ में नहीं आती। सहसा अनिच्छा में प० एस डी शर्मा हैडमास्टर रोहतगी स्कूल से मुलाकात होगई। उक्त प० जी की चतुरता ने मुझे ताड लिया और दर्शन के क्षण से ही अपने स्कूल मे रख लिया। यहॉ भी भाग्य ने पलटा खाया और रोहतगी स्कूल मे अधिक न ठहर सका। अप्रैल सन् १९४१ मे साहित्य-सेवा से भरण पोषण करने लगा। सेवा और मेवा दोनों साथ साथ मिलने लगीं। जहा जाता तहॉ धन और यश दोनों साथ साथ उपलब्ध करता। समस्त वर्ष दौरा मे व्यतीत होगया।

जनवरी १९४२ के पुनीत दिनों मे जे० डी० शर्मा स्कूल के सिलसिले मे म्युनिसिपल देहली की सर्विस मे आया। वेतन, साहित्य सेवा आदि से जीवन पालन करने लगा। म्युनिसिपल स्कूल के अध्यापकों का कैसा नीरस, फीका और कटु जीवन है इसको स्वय अवलोकन किया। म्युनिसिपल स्कूल में दुष्ट, दुराग्रही अभिमानी और नीच अध्यापकों का बाहुल्य है। उनका कोई चरित्र नहीं। धोखा देना और दूसरों को दुखी करना उनका एकमात्र उद्देश्य है। विगत २८ अगस्त १९४५ को म्युनिसैलिटी मे पद त्याग कर दिया। प्रथम सितम्बर १९४५ की पवित्र तिथि को ला० रूपलाल जी एम ए बी टी प्रिन्सपल कमर्शल कालेज, देहली की शरण में आया उन्होंने अपनी महान उदारता का परिचय देते हुये अपने दर्शन के क्षण से ही अपने स्कूल मे रख लिया उक्त लालाजी की सज्जनता, सहृदयता और उदारता की भावनाओं की सराहना किये बिना नहीं रह सकता। उनकी दृढता

सरलता और गुण-ग्राहकता बड़े ऊँचे दर्जे की है। उनकी प्रखर प्रतिभा ने मुझे लाड़ किया और अपनी रक्षा में मुझे रख लिया। मुझ से क्या देते हैं पर केवल 'सेवा-भाव' शब्द ही में निहित है किन्तु मैं उनकी सेवा में सन्तुष्ट हूँ।

फिर मित्रवर कहां प्रसन्नता कैसी? उदासीनता न हो तो क्या हो। किस आशा पर उत्साह बढ़े। इधर इकली जवानी दूसरे आशा का ह्रास तीसरे सन्तान सुख की मौन व्याकुल किये रहते हैं। हां, रात दिन काम करता हूँ। क्योंकि वर्तमान स्थिति को कायम रखना भी आवश्यक है साथियों में प्रतिष्ठा बनाये रखना भी तो उचित जान पड़ता है। इसके अतिरिक्त यहाँ कोई हृदयस्पर्शी मित्र भी नहीं जिसके साथ रह इस क्लेश समय कट जावे। ईश्वरेच्छा बलीयसी।

आपका हतोत्साह मित्र—

वासुदेव शास्त्री।

---

(२६) विदाई पत्र

जयनारायण हाईस्कूल बनारस के XII क्लास के समस्त विद्यार्थियों की सेवा में—

'विदाई—पत्र'

प्रिय बन्धुगण!

आज हम लोग आपको विदा देते हुये बड़े दुःखी हो रहे हैं। आज हमारा दुःख अर्जन की सीमा से परे है। आपके पृथक होने की वेदना रह रह कर हमारे हृदय में एक मधुर वेदना उत्पन्न कर रही है। आपका पूरे ६ साल का सौहार्द भुलाया नहीं जाता।

आपके आदर्श, आपके उपदेशों का हमने सदैव अनुकरण किया। क्या स्कूल मे ? क्या बोर्डिंग हाउस मे ? क्या खेल के मैदान मे सदैव आपने हमारे साथ स्नेह बर्ता। हमने आपके सारे गुणों को अपनाया। जो जो गुण मे हममे विकसित हुये वह सब आपकी कृपा के कारण ही हुए। आपका प्रेम आपकी सहानुभूति और आपके आचरण ने हमारे हृदय पर पूरा अधिकार जमाया हुआ है। आपको विदा देते हुये हमारा हृदय फटा ही जारहा है। और हमारा हृदय उमड़ा ही पडता है जिसके कारण हमारा मस्तिष्क काबू में नहीं है।

बन्धुवर्ग, ससार परिवर्तनशील है। इसमे मनुष्य का आना जाना लगा ही हुआ है। सब किसी न किसी मार्ग पर चलते चले जा रहे हैं। इसी तरह आपका जाना भी हो रहा है। आपकी विदाई उन्नति की ओर है। इसी कारण को सोचते हुये हमें कुछ सन्तोष भी होता है। आप जा रहे हैं किन्तु हमारे हृदय आपका साथ छोडने को किसी प्रकार तैयार नहीं है। हमारा हृदय अब जब आप लोगों के साथ है तो आपका पार्थक्य कुछ अर्थ भी नहीं रखता। जब हृदय निकट है तो क्या पास ? क्या दूर एकसा है। परन्तु चिन्ता है तो यह है कि आप नये आकर्षक मित्रों के ससर्ग में फँस कर कहीं हम लोगों को न भुला दें।

आज से आपका दूसरा युग आरम्भ होता है। अब आपको बडे बडे फ़ेशनेबिल अध्यापकों से काम पडेगा। वहाँ मिथ्याडम्बर तुम्हें भुलावे में डालेंगे। बडे बडे प्रलोभन आपके सामने आवेंगे। झूठा हाव भाव दिखाया जायगा। साक्षात् प्रेम के अवतार बन बन कर लोग तुम्हारे मित्र बनने आवेंगे किन्तु उन सब से पूरे सावधान रहकर दूर रहने ही की चेष्टा करना। जीवन में चरित्र ही सार वस्तु है। इसकी बड़ी रक्षा रखना। क्योंकि चरित्र के बिना

मनुष्य का मूल्य था कौड़ी का नहीं रहता। अपने स्कूल के अध्यापकों के साथ बीतन को न भूलना। उत्तम विचार रखना। यदि आपने हमारी इन बातों की गाँठ बाँध लिया तो हमारा और आपका प्रेम सम्बन्ध भी नहीं टूट सकता।

प्यारे भाइयो हमारा आपके प्रति बड़ा सम्मान है। हम आपकी कृपा और सहानुभूतियों के बड़ कृतज्ञ हैं। आज हमारा बड़ा दुर्भाग्य है कि आप हमसे बिछड़ रहे हैं। सामने भाई सामना किन्तु आपकी मधुर स्मृति हमारे नेत्रों से कभी दूर नहीं हो सकती। हमे पूर्ण विश्वास है कि आप हमें और हमारे इस स्कूल को कभी न भूलेंगे।

आपको विदाई देते हुये हमारा हृदय फटा जाता है। हमारा कण्ठ प्रेम से गद्गद् हो रहा है। इस कारण भली प्रकार हम अपना प्रेम प्रकाश भी नहीं कर सकते। आँखों से आँसुओं की झड़ियाँ लग रही हैं। आँसू रोकने से भी नहीं रुकते। किन्तु आप उन्नति की ओर जा रहे हैं केवल इसी आशा पर हमारा हृदय बरबस आपको विदाई देने को विवश हो रहा है।

लखनऊ १२ अप्रैल १६४१	हम हैं आपके— XI क्लास के समस्त सहपाठी।

---

(२७) कपड़ा खरीदने का पत्र

मैनेजर लखनऊ क्लाथ मिल स्टोर,
अमीनाबाद पार्क लखनऊ।

महाशय जी

कृपया निम्नलिखित सामान रेल द्वारा शीघ्र से शीघ्र भिजवा दीजियेगा। आपके कपड़ों का बिल सूचना मिलते ही फौरन चुकता

कर बिल्टी छुड़ाली जायगी।

१—पचास धोती जोड़े न० ५५१ मर्दाने।

२—पचास धोती जोड़े न० ५५२ जनाने।

३—दस थान लट्ठा चड़ अर्ज का बन्दर वाला।

४—दस थान खादी न० ५५५५ गाँधी छाप।

५—दस थान मारकीन दरज़ी छाप।

महाजनी कूचा,
देहली।
२५ मार्च, १६४१

आपका—
हरीराम श्रीराम बजाज।

---

(२८) रेलवे अधिकारियों को प्रार्थना-पत्र

श्रीमान् डिवीजनल ट्रैफिक सुपरिन्टेण्डेण्ट
एन० डब्ल्यू० आर० देहली डिवीजन,
देहली।

श्रीमान्,

सेवा में निवेदन है कि हम शहादरा और गाजियाबाद के उन मुसाफिरों को मन्थली पास लेकर यात्रा करते हैं बड़ी तकलीफ है। १ बजे के बाद ५॥ बजे तक कोई गाड़ी न एन डब्ल्यू आर की ओर न ई आई आर की इधर जाती हैं। पूरे ४॥ घण्टे तक हमें देहली में पड़ा रहना पड़ता है या लारियों से जाना पड़ता है, जिससे हमारे पास लेने का मतलब हल नहीं होता। ऐसी परस्थिति में हम आपसे प्रार्थना करते हैं ३ और ५ बजे के बीच कोई स्पेशल ट्रेन सिर्फ देहली से गाजियाबाद तक जारी करदी

आप तो हम लोगों का बहुत कुछ कष्ट कम हो सकता है। आशा है हमारी इस आशा पर ध्यान देंगे, और कोई सराय दूंने के खोलने का प्रबन्ध करेंगे।

हम हैं आपके आज्ञाकारी —

शाहगंज देहली | १-श्याम मोहन इञ्जीनियर, २-रामारमन
२५ मार्च १९४१ | डाक्टर ३-किशनकिशोर पोस्ट मास्टर, ४-नब
बापू बुकसेलर इत्यादि इत्यादि।

— —

(२६) कलक्टर साहब को लगान माफ कराने का प्रार्थना-पत्र

श्रीमान् कलक्टर साहब
अलीगढ़ जिला अलीगढ़।

श्रीमान्

सेवा में निवेदन यह है कि अचानक १५ मार्च को हमारे गांव पर ओले गिरे। जिसके कारण सारी फसल खराब हो गई है। खेतों में न एक छटांक नाज होगा न एक तिनका। हम तो पारसाल ही अनावृष्टि के कारण बहुत परेशान हो रहे थे। अब इन पत्थरों ने गिर कर हमारे ऊपर पूरे पत्थर गिरा दिये हैं। आज कल हम भूखों मर रहे हैं। हमारे बाल बच्चे दाने दाने को तरसते हैं। उधर हमारी मवेशियां बिना चारे के मरी जा रही हैं। ऐसी परिस्थिति में हम नतमस्तक हो आप से प्रार्थना करते हैं कि आप रबी का सारा लगान माफ करने का हुक्म दे दीजियेगा।

हम पूर्ण आशा है कि आप हमारी इस महादारिद्रिक दशा पर अवश्य ध्यान देंगे और रबी का सारा लगान माफ करके हम

दीन दुखियों की रक्षा करेंगे। इस कृपा के हम सारे जीवन आभारी रहेंगे।

श्रीमान् के आज्ञाकारी—

अलीपुर
तहसील इगलास,
जि० अलीगढ़
२५ मार्च, १६४१ ई०

१—नारायणप्रसाद मुखिया, २—बाबू लम्बरदार, ३—मिट्ठीलाल ब्राह्मण, ४—गिरवर धीमर, ५—लीला खटीक इत्यादि।

---

(३०) नौकरी के लिये प्रार्थना-पत्र

श्रीमान् सेक्रेटरी साहब,
कमर्शल-इण्टर-मीडेट-कॉलिज, देहली।

माननीय महोदय जी,

सेवक ने आगरा यूनीवर्सिटी से फर्स्ट डिवीजन (प्रथम श्रेणी) में बी ए पास किया है। पंजाब यूनीवर्सिटी बी टी. और एस. ए वी डिपार्टमेण्टल परीक्षायें पास भी की हैं। हिन्दी की 'प्रभाकर' और एडवान्स परीक्षायें भी सेवक ने पास की हैं। कई पुस्तकें भी लिखी हैं जो यू पी, सी पी और देहली सबों में पढ़ाई जाती हैं। आदर्श निबन्ध नामक किताब जो आपके स्कूल में रिकमेण्ड है वह सेवक की ही बनाई हुई है। सेवक आज कल संस्कृत हाई स्कूल दर्यागञ्ज में हैड हिन्दी अध्यापक के पद पर काम कर रहा है। सेवक का स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। सब प्रकार के खेलों का शोक है। खेलों की उत्तमता के कई सार्टीफिकेट्स और मैडिल्स भी प्राप्त किये हुये हैं।

कल के हिन्दुस्तानी-टाइम्स में यह सूचना पढ़ कर कि आपको

अपने हिन्दी विभाग के लिये एक अनुभवी और स्वाधीप्रज्ञ अध्यापक की आवश्यकता है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप मुझे अपने स्कूल में ले लें।

अब आपसे प्रार्थना है कि उस स्थान पर सेवक की नियुक्ति करें तो आपकी बड़ी कृपा हो।

आपका आज्ञाकारी—
महादेव शर्मा, बी. ए. बी. टी.
" साहित्य-रत्न "
हिन्दी अध्यापक संस्कृत हाई स्कूल
दर्यागञ्ज देहली।

१० अक्टूबर, १९४१]

---

(११) म्यूनिसिपैलिटी के प्रबन्ध की शिकायत का पत्र

गोकुलपुरा,
कस दरवाजा, आगरा।

श्रीमान् हैल्थ आफीसर साहब
म्यू० को० आगरा।

महोदय जी!

हम इस मुहल्ले के निवासी इस पत्र द्वारा अपने मुहल्ले की दुर्दशा की ओर आपका ध्यान आकर्षित करते हैं। हमारा मुहल्ला शहरभर से अधिक गन्दा है। इसमें न सफाई होती है और न कोई रोशनी का प्रबन्ध है। नालियां इतनी गन्दी हैं कि उनका वर्णन हो नहीं सकता। सड़क के गढ़े देखे ही बनते हैं। सड़क और नालियों में सड़ी गली चीजें पड़ी हैं जिसने सड़कर तमाम मुहल्ले का नाकों दम कर दिया है। नालियों में मच्छरों ने अपने डेरे डाले हैं। वर्षा आने वाली है। तमाम मुहल्ले के वासी के

पानी का जमा हो जाने का अन्देशा है। जब पानी भरेगा तो मच्छरों और डांसों का जोर स्वाभाविक है। जिससे अनेक रोग फैलने की सम्भावना है।

अत हम आपसे नत मस्तक हो प्रार्थना करते हैं कि आप बर्षात से पहिले ही पहल हमारे इन कष्टों को जान सारा प्रबन्ध करा देंगे।

हम हैं आपके आज्ञाकारी —

(१) रामप्रसाद गौड़, वकील। (२) लाला अमरचन्द, साड़ वाले। (३) रामनारायण सुनार
आगरा। (४) सुखलाल धोबी। (५) शकूर रंगरेज।
१० जून, १९४१ (६) विलियम पादरी इत्यादि।

---

(३२) सम्पादक के नाम पत्र

(बाढ़ के सम्बन्ध में)

श्रीयुत प्रताप सम्पादक जी कानपुर,

बाढ़ के समाचारों ने मेरे हृदय को व्यथित कर दिया। मैं भी कुछ सहायता और सेवा की भावना लेकर पहुँचा था। वहा का रोमांचकारी दृश्य जो मैंने अपनी आखों देखा है वर्णन करने में लेखनी कापती है। सारे उत्तरी विहार प्रान्त में भयङ्कर प्रलयकांड मचा हुआ है। सारा पूर्वी प्रान्त जलमय होगया है। पानी के अतिरिक्त कोई वस्तु नजर नहीं आती। वृक्षों की शाखा मात्र नजर आती हैं। लोग टीलों और वृक्षों पर रात दिन व्यतीत कर रहे हैं। उनके मवेशी और घर का सामान बह गया है। गङ्गा, गण्डकी, कोसी और सोन ने अपनी विकराल मूर्त्ति बनाली है। हजारों

गाँव जल मग्न हो गये हैं। सहस्रों आदमी और पालतू जानवर पानी में बहते हुये जा रहे हैं। किसानों की खेती बिलकुल चौपट होगई है। चारे का एक तिनका तक नहीं रहा। भूसे और अन्नों के ढेर सब बह गये हैं। न मनुष्यों को खाने को एक दाना है और न मवेशियों को चरने को एक तिनका है। ऊँचे टीले टापू बन गये हैं। जिन पर लोगों ने अपना आश्रय ले रक्खा है। ज्यों ज्यों सहायता पहुँच रही है त्यों त्यों उनको बचा स्थान भेजा जाता है और उनके भोजन वस्त्र का प्रबन्ध किया जा रहा है। किन्तु लाखों मनुष्य की सहायता के लिये करोड़ों ही रुपया चाहिये। जो कुछ सहायता पहुँच रही है वह अभी बहुत ही नाकाफी है।

गोरखपुर, मुजफ्फर और छपरा जिलों की दशा बहुत ही खराब होगई है। सबसे अधिक हानि किसानों की हुई है। उनके पास न भोजन है न एक तन ढकने को कपड़ा। कितने ही गांव जिनके पास कोई टीला नहीं है पेड़ों पर निवास कर रहे हैं। सरकारी सहायता भी पहुँच रही है। जनता भी सहायता कर रही है, किन्तु अभी सहायता का क्षेत्र बहुत ही छोटा है। सहायता का क्षेत्र विशाल होना चाहिये। बाबू राजेन्द्रप्रसाद बड़ी तत्परता से काम कर रहे हैं। लगभग सभी प्रान्तों से सहायता पहुँच रही है किन्तु अभी कानपुर, आगरा और सिझा प्रान्तों की ओर से कुछ सहायता नहीं आ पाई है। कृपया आप अपने पत्र में अपील निकालिये। 'बाढ़-पीड़ित' नाम से कुछ जनता से याचना कीजिये। आशा है कि आप मेरी इस आँखों देखी यात्रा को अपने पत्र में स्थान देंगे।

आपका

एटा — बाबूराम शर्मा एम. ए. प्रोफेसर,

७ अप्रैल १९४? — एटा (यू० पी०)

(३३) मित्र को पत्र

(गर्मी की छुट्टियों का प्रोग्राम)

सर सुन्दरलाल होस्टल,
२८ स्ट्रीट, इलाहाबाद
१० मार्च, १९४१

प्रिय रमेश,

तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ अपार हर्ष हुआ मेरी परीक्षायें ठीक आपकी परीक्षा समाप्ति के दूसरे दिन समाप्त हो रही हैं। मैं मैं २५ मार्च को इलाहाबाद से चल दूँगा। कृपया आप भी आगरे से एक दिन पीछे चलें। अत दोनों एक ही साथ २६ मार्च के ९ बजे रात को पिताजी के पास मेरठ पहुचें और वहीं पिता जी की अनुमति लेकर गरमी की छुट्टी का प्रोग्राम बनावें। मेरे विचार में आप मेरी योजना से अवश्य सहमत होंगे।

मेरा विचार है कि मैं ३१ मार्च तक तो मेरठ पिताजी के पास रहूँ। इसके पश्चात् चाचा के साथ अप्रैल के पहिले हफ्ते ही में शिमला चला जाऊँ, क्योंकि चाचा का ऑफिस १ अप्रैल को शिमले पहुच रहा है। पिछले दिनों से मेरा स्वास्थ्य उपार्जित हो जाय। शिमला में २५ अप्रैल तक रहूँगा। इस पच्चीस दिन का प्रोग्राम यह होगा कि प्रात काल ५ बजे उठकर टहलने जाया करूँगा और पहाड़ों की प्राकृतिक शोभा का अवलोकन किया करूँगा। योरोपियन बच्चों के ससग में रहूँगा, नित्य के बोलने चालने से मुझे अङ्गरेजी बोलने का भी अभ्यास हो जायगा। इस वर्ष वहाँ व्यायामशाला भी खुल रही है। अत वहा अपना नाम लिखा लूँगा। वैद्य लोगों ने बताया है कि रोजाना १ गिलास

आरोग्य पूर्ण शहर के साथ प्रयोग करने से स्वास्थ्य को बहुत लाभ करेगा। अतः शिमला पहुँचकर एक मास का भी प्रबन्ध मामाजी से कराना है।

पिता जी ने १ के लगभग जीवन चरित्र खरीद रक्खे हैं उन्हें भी साथ लेता जाऊँगा। उनके पढ़ने का समय भी वहीं मिलेगा। घर पर उनका पठन पाठन सम्भव नहीं है। १० बजे से १२ बजे तक अङ्गरेजी की योग्यता बढ़ाने में दूँगा। १२ से २ तक विश्राम में, २ से ५ तक संगीत, ताश और अन्य मनोरञ्जन में समय व्यतीत करूँगा। ५ से ५॥ बजे तक 'सार्वजनिक पुस्तकालय में समाचार पत्र और पुस्तकें पढ़ा करूँगा। फिर शौचादि से निवृत्त होकर क्लब पर जाया करूँगा। सूर्यास्त होने पर रेडियो का आनन्द लिया करूँगा। फिर भोजन करके पुनः गाना बजाना हुआ करेगा। यही संक्षेप में मेरी दिनचर्या होगी।

२२ जून को मामाजी के लड़के ललितमोहन की शादी है। बारात देहली सब्जी मण्डी में जायगी। मैं तो देहली नहीं जाना चाहता था किन्तु मामाजी साहब का सख्त तकाजा आया कि मेरा इस विवाह में शामिल होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः देहली अवश्य जाना पड़ेगा। सुना है देहली बड़ा सुन्दर नगर है। देहली का चाँदनी चौक, जामा मसजिद, लाल किला और न्यू देहली की सुन्दर सुन्दर इमारतें सुनते हैं बड़ी अनूठी और मनोहर हैं। खुश हूँ कि यह सब चीजें देखने को मिलेंगी। आप तो खूब जानते ही हैं कि मानवी स्वभाव नये नये स्थानों को देखने को बड़ा उत्सुक होता है और नये स्थानों पर आने जाने से मस्तिष्क को कुछ स्फूर्ति सी भी मिलती है। अच्छा है इस विवाह में सं[illegible] का लाभ ले कुछ घूमना फिरना हो जायगा।

इस विवाह के पश्चात् पिता जी कहते थे कि अबकी वार हम तुम्हें वम्बई ले चलेंगे। सम्भवत पिताजी मई के आरंभिक सप्ताह में वम्बई जायें। वम्बई की अनायास सैर का आनन्द मिलेगा। मैंने समुद्र और जहाज नहीं देखे हैं। अत वम्बई जाकर इन दोनों वस्तुओं के देखने का सौभाग्य प्राप्त होगा। वम्बई के पास ही महाबलेश्वर है, महाबलेश्वर में छोटे चाचाजी रहते हैं। सुनते हैं महाबलेश्वर की जलवायु बड़ी स्वास्थ्य वर्द्धक है। वहाँ यहाँ की सी गरमी नहीं पड़ती। प्रत्युत ठण्ड रहती है। वम्बई सूबे के अङ्गरेज लोग गर्मियों में महाबलेश्वर की हवा खाने बहुत जाते हैं। सुनते हैं कि यहाँ के प्राकृतिक दृश्य वडे ही मनोहारी हैं। कहीं कल कल शब्द करते हुये झरने झरते हैं। कहीं सुन्दर वागों की शोभा निराली है चारों तरफ़ हरियाली ही हरियाली दृष्टिगोचर होती है। मेरा वड़ा सौभाग्य होगा कि इन स्थानों की सुन्दर शोभा को अपने नेत्रों से अवलोकन करूँगा। यदि आप भी आजायें तो वड़ा ही आनन्द हो। आपके साथ रहने से पूरी स्वतन्त्रता भी रहेगी और मनोरञ्जन भी खूब रहेगा।

२० मई को वड़ी जीजी को विदा कराने लखनऊ जाना है। अत महाबलेश्वर से १८ मई के लगभग लौटूगा। मुझे वड़ा हर्ष है कि इन छुट्टियों में मुझे लखनऊ देखने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा। सुना है लखनऊ भी वड़ा सुन्दर नगर है। यहाँ का अजायब घर, वनारसी वाग, अमीनाबाद पार्क, कौंसिल हाऊस, यूनिवर्सिटी भवन देखने योग्य हैं। हर्ष है कि इन चीजों के देखने का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त होगा।

मैं इलाहाबाद से ऊब गया हूँ। इस वर्ष मेरी उत्कट अभिलाषा है कि मैं वनारस यूनीवर्सिटी में अपना नाम दाखिल कराऊँ।

१० जौलाई को बनारस यूनीवर्सिटी खुल रही है। मैं चाहता हूँ कि बार्डिंग हाउस में अच्छा कमरा मिल जाय, इसलिये यूनीवर्सिटी खुलने से कुछ दिन पहिले बनारस पहुँच जाऊँ।

इस तमाम यात्रा में आप मेरे साथ रहें तो बड़ा आनन्द हो। कृपया अपने पिताजी से अनुमति लेकर इस यात्रा के लिये तैयार रहो। मुझे पूरा आशा है कि आप मेरी इस योजना को अवश्य स्वीकार कर मुझे लिखोगे।

विशेष बातें सब पूर्ववत हैं।

आपका दर्शनाभिलाषी—

महेशचन्द्र शास्त्री।